कृषि की उन्नति के लिए द्वितीय पंचवर्षीय योजना में राजकीय सहयोग व [illegible]

ऋण के रूप में :—

नये कुओं के खोदने के लिए	—	लागत की आधी रकम जो ४०००) [illegible] अधिक नहीं होगी।
कुओं की मरम्मत के लिए	—	लागत की आधी रकम जो १०००) से नहीं होगी।
पम्पिंग सैट के लिए	—	मशीन की लागत की आधी रकम
ट्रैक्टर व सम्बन्धित खरीद के लिए	—	लागत की आधी रकम
रहट के लिये	—	३००) प्रति एकड़ के हिसाब से
नगरपालिका को कम्पोस्ट वितरण के लिये	—	ट्रक या ट्रैक्टर मय ट्रॉली की कीमत
पंचायतों को [illegible] व खाद बनाने के सम्बन्ध में	—	दो हजार रुपये जहां सफाई—[illegible] प्रबन्ध हो और रुपये १६००) जहां [illegible] व्यवस्था का प्रबन्ध नहीं हो।

[illegible] के रूप में :—

[illegible] के लिए [illegible]	—	[illegible] एक रुपया प्रति [illegible]
[illegible]	—	कीमत का एक चौथाई
[illegible] के लिये	—	३ से ४ [illegible] एक रुपया [illegible] ४ से अधिक [illegible] रुपया [illegible]
[illegible] के लिये [illegible]	—	(क) [illegible] नहीं होना चाहिये। (ख) [illegible] नहीं होना चाहिये। [illegible]

[illegible]

बाल व रोलर बियरिंग, स्टील बाल्स

रोलर स्पिंडल इनसर्ट्स

एक्सल बॉक्सेज

★

[रेल्वे लोकोमोटिव एण्ड वेगन्स]

के

निर्माता :

नेशनल इंजीनियरिंग इंडस्ट्रीज लिमिटेड

जयपुर (राजस्थान)

की

हार्दिक शुभ-कामनाएं

राजस्थान में आयुर्वेद निरन्तर प्रगति पथ पर

प्रथम पंचवर्षीय योजना में :

७० नवीन औषधालय खोले गए।

द्वितीय पंचवर्षीय योजना में :

१–३२५ नवीन औषधालय

२–आयुर्वेद विभाग का अष्टांग आयुर्वेद के रूप में विस्तार।

३–जयपुर और उदयपुर में आयुर्वेदिक कालेजों का उन्नयनीकरण के फलस्वरूप २५० छात्र प्रतिवर्ष शिक्षा पा रहे हैं।

४–आयुर्वेद परीक्षा बोर्ड का निर्माण, जिसके आधीन भिषगाचार्य, भिषग्वर, धात्री कल्पद और प्रत्यास्मरण पाठ्यक्रम की परीक्षाएं चालू हैं।

५–जोधपुर और भरतपुर में शाखा रसायनशाला की स्थापनाएं।

तृतीय पंचवर्षीय योजना में :

१–एक गाँव एक [illegible] की योजना रखी गई है, जिसमें शिक्षा प्रशिक्षण, रोग-नियन्त्रण व कॉमनवी स्थानों में आरोग्य केन्द्र स्थापित होंगे।

२–केन्द्र की ज्ञान अभियान कार्यक्रम में जयपुर एवं उदयपुर कालेजों के अंतर्गत स्वास्थ्य, बाल–स्वास्थ्य, चर्म रोग एवं संक्रामक रोगों पर अनुसंधान होगा।

राजस्थान में आयुर्वेद निरन्तर प्रगति पथ पर

प्रथम पंचवर्षीय योजना में :

७० नवीन औषधालय खोले गए।

द्वितीय पंचवर्षीय योजना में :

१–३२५ नवीन औषधालय

२–आयुर्वेद विभाग का अष्टांग आयुर्वेद के रूप में विस्तार।

३–जयपुर और उदयपुर में आयुर्वेदिक कालेजों का उन्नयनीकरण के फलस्वरूप २५० छात्र प्रतिवर्ष शिक्षा पा रहे हैं।

४–आयुर्वेद परीक्षा बोर्ड का निर्माण, जिसके आधीन भिषगाचार्य, भिषग्वर, धात्री कल्प और प्रत्यास्मरण पाठ्यक्रम की परीक्षाएं चालू हैं।

५–जोधपुर और भरतपुर में शाखा रसायनशाला की स्थापनाएं।

तृतीय पंचवर्षीय योजना में :

१–एक करोड़ एक लाख की योजना रखी गई है, जिसमें शिक्षा, चिकित्सा, रोग-नियन्त्रण व कमिश्नरी स्थानों में आरोग्य केन्द्र स्थापित होंगे।

२–केन्द्र की नव अनिवार्य संस्थापना से जयपुर एवं उदयपुर कालेजों के अंतर्गत स्नायु, बाल-स्वास्थ्य, चर्म रोग एवं संक्रामक रोगों पर अनुसंधान होगा।

माननीय श्री मोहनलाल सुखाड़िया

मुख्य मंत्री, राजस्थान

अध्यक्ष, उद्घाटन समारोह, तृतीय साहित्य सेमिनार

श्री नारायण
श्री मदन सि

प्रधान संपादक

डा० देवराज उपाध्याय

प्रबन्ध सम्पादक

आचार्य श्री पुरुषोत्तम 'उगम'

संरक्षक मण्डल

१. श्री राम निवास शाह
२. श्री चन्द्र कुमार 'सुकुमार'
३. श्री शिवचरण लाल 'शिखर शेरी'
४. श्री कन्हैया लाल मिश्र

प्रकाशक

साहित्य सदावर्ती

माननीय श्री मोहनलाल सुखाड़िया
मुख्य मंत्री, राजस्थान
अध्यक्ष, उद्घाटन समारोह, तृतीय साहित्य सेमिनार

प्रकाशकीय

राजस्थान का नाम आने के साथ ही घावो से लथपथ और लहूलुहान हो जाने के उपरान्त ी, वीरो के मुस्काते मुखमण्डल एवं आग की धू-धू रती ज्वालाओ मे घिरी, मधुर हास्य से युक्त ीर-बालाएँ हमारी आँखो के आगे थिरकने लगती । जिससे यह भ्रम हो जाता है कि यह केवल क्ति और साहस का ही केन्द्र था, परन्तु हम यह ूल जाते हैं कि इन रेखाओ मे अमिट रंग भरने ानी बुद्धि और प्रतिभा ही थी, जिसने इनको मरता प्रदान की। इसके साथ–साथ हमको यह त्य भी बिना हिचक स्वीकार करना ही होगा कि जितनी ख्याति इसने वीरता के क्षेत्र मे अर्जित की तनी प्रतिभा के क्षेत्र मे नही कर पाया। कारण पष्ट है कि यहा के राजा, महाराजा तथा सामन्त अपनी प्रशस्ति गायन के हेतु जितने उत्सुक रहे, उतने साहित्यिक वैभव को प्रकाश मे लाने के लिए नही। अपनी वीरता के बखान के लिए इन्होने वेतन भोगी अनेक इतिहासकार नियुक्त किए और अगर कुछ कवियो को भी राज्याश्रय दिया तो वह केवल इस ही लिए कि वे उनके माध्यम से भी अपने अहम् की तृप्ति कर सकें।

इसके बावजूद जैन साधुओं, सन्तो अथवा लोक, कवियो के द्वारा यहां साहित्य की सरिता अजस्र गति से प्रवहमान रही। अब वह समय आ पहुँचा है कि इस सरिता-सलिल को हम हमारे मानस-सर में एकत्रित कर भाव–भूमि का सिंचन करें। "सृजन बेला; नाम से इस मेंसिलार साविनिदर (स्मारिका) का प्रकाशन हम इस आशा और विश्वास के साथ कर रहे है कि इसके द्वारा राजस्थान मे बहीं धाराएँ साहित्यिक गतिविधि की किंचित् जानकारी स्थूल रूप से आप तक पहुँचा सकें। इस स्मारिका मे हिन्दी जगत् के प्रसिद्ध समालोचक डाक्टर देवराज उपाध्याय ने प्रान्त के विद्वान् लेखकों, कवियों, नाटककारों एवं कहानीकारो की कृतियों का सम्पादन किया है। यदि यह प्रकाशन राजस्थान के प्राचीन एवं अर्वाचीन साहित्यिक वैभव को चैतन्य पाठक के अचेतन मानस पर कुछ भी स्थान दिला सका तो हम इसे सफल समझेंगे।

वैसे आज राजस्थान मे इस तरह के प्रकाशको का अभाव है जो बिना हानि–लाभ की भावना के साहित्यिक प्रकाशन के कार्य को अपने हाथ मे ले सके। राजस्थान को छोड़कर अनेक प्रान्तो मे इस तरह के ट्रस्ट और प्रकाशन मण्डल हैं जो अपने २ प्रान्त के प्राचीन साहित्य को नए ढंग से प्रकाशित कर, उसके गौरव को पुनः संस्थापित कर रहे हैं और उदीयमान लेखकों की रचनाओ के प्रकाशन द्वारा देश और समाज को प्रेरणा दे रहे हैं। हमारे प्रान्त में अन्य प्रान्तों की अपेक्षा किसी भी हालत मे साहित्यिक अकिंचनता न कभी थी और न अभी है। बल्कि हम यह कहें तो कोई अत्युक्ति नहीं होगी कि संस्कृत साहित्य मे पूर्व तथा ब्रज भाषा के साहित्यिक रूप को स्वीकार करने तक राजस्थान ने साहित्यिक क्षेत्र मे एकछत्र आधिपत्य रखा है और उस काल को हम स्वर्ण युग के नाम से सम्बोधित कर सकते है। इस काल मे साहित्य की प्रबन्ध (महाकाव्य और खण्ड काव्य) मुक्तक (रस तथा नीति) एवं गीति आदि सब विधाओ में प्राकृत, अपभ्रंश और डिंगल भाषा मे सर्जना की गई है। परन्तु अभी तक इस साहित्य के प्रकाशन की समुचित व्यवस्था नहीं हो पाई है।

साहित्य–सदावर्त बहुत समय से इस साहित्य के प्रकाशन के विषय मे विचार कर रहा था। इस स्मारिका के माध्यम से हम उस पर कुछ रोशनी डालने का लघु प्रयास कर रहे है और यह हम

सम्पादकीय

उपनिषदों ने हमें अपने जीवन को समृद्ध तथा सार्थक करने का एक साधन बतलाया था 'आत्मानं-विद्धि'। ग्रीक मनिषियों ने कहा 'Know thyself' आगे चल कर तो नीतिकारों ने यहां तक कह दिया।

आपदर्थे धनं रक्षेद् दारान् रक्षेद् धनैरपि।
आत्मानं सततं रक्षेत् दारैरपि धनैरपि॥

अर्थात् आपत्ति काल के लिये धन की रक्षा करनी चाहिये, धन का नाश कर भी पत्नी की रक्षा करनी चाहिये। पर जब आत्मा की रक्षा का प्रश्न हो तो वहां पत्नी एवं धन के भी बलिदान की परवाह नहीं करनी चाहिये। राजस्थान के शुभ-चिन्तकों, नेताओं, विचारकों तथा साहित्यिकों के सामने यह प्रश्न अपनी सारी जटिलताओं के साथ उपस्थित होकर उत्तर मांग रहा है कि हम अपने प्राचीन गौरव-गाथा और परम्परा की रक्षा करते हुए, वर्तमान ज्ञान-विज्ञान की किरणों को आत्मसात् कर भविष्य के निर्माण में तत्परत्व से काम ले रहे हैं।

राजस्थान के लिये इस प्रश्न का एक विशेष महत्व है। कहा जा सकता है कि प्राचीन भारत का इतिहास एक तरह से बिहार का इतिहास है, अशोक, चन्द्र गुप्त, बुद्ध तथा वर्द्धमान का इतिहास है। मध्य युगीन भारत का इतिहास मीरां, प्रताप, दुर्गादास के रक्त से राजस्थान की धरती पर लिखा गया है। पर राजस्थान के भाग्य की विडम्बना ही कहिये कि ऐतिहासिक, भौगोलिक तथा राजनैतिक परिस्थितियों में जहाँ अन्य प्रान्तों का सम्बन्ध प्रगतिशील तथा उन्नायक तत्त्वों से बनाए रखा, उनके द्वार नूतन ज्ञान-विज्ञान के सतत संचार के लिये उन्मुक्त रहे वहाँ राजस्थान को सबसे अलग रह कर ही अपना जीवन यापन करना पड़ा। उत्तराधिकार के रूप में हमें जो कुछ भी वीरता, भक्ति, प्रेम, सौंदर्य की सम्पत्ति उपलब्ध थी उसे ही चाट-चाट कर हम जीते रहे। इतना ही नहीं। चूंकि बाहरी दुनिया से सम्पर्क छूट जाने के कारण जीवन का प्रवाह एक तरह से अवरुद्ध था अतः बहुत सी विकृतियां भी आ गई थीं। कहा ही है "बहता पानी निर्मला, बंधा गंदा होय।" हम दुनिया से ही अलग नहीं थे। हम स्वयं आत्म-विभाजित थे। हमारे एक शरीर के अन्दर कितने व्यक्तित्व उभर आये थे और उनमें पारस्परिक एकता हो ही यह कोई आवश्यक नहीं था। आज कल के मनोवैज्ञानिक Multipule personality की बातें करते हैं। कहते हैं कि एक मनुष्य में एकाधिक और परस्पर विरोधी व्यक्तित्वों की अवस्थिति हो सकती है जो जीवन को विकृत कर दे और संगठित विकास में बाधक हो। इन मनोवैज्ञानिकों के लिये Multipule personality का उदाहरण राजस्थान से अच्छा नहीं मिल सकता। जयपुर, जोधपुर, उदयपुर, कोटा, बूंदी एक ही राजस्थान-व्यक्ति के भिन्न-भिन्न व्यक्तित्व नहीं तो और क्या है?

राष्ट्र-पिता गांधीजी तथा भारतीय स्वातन्त्र्य संग्राम के नायक सरदार पटेल की कृपा से अब यह परिस्थिति दूर हो गई है। प्रथम ने सारे भारत को विदेशी शासन से मुक्ति दिलाई। द्वितीय ने राजस्थान के बिखरे दानों को समेट कर राजनैतिक सूत्र में पिरो कर एक माला के रूप में उपस्थित कर दिया। एक बृहद् राजस्थान अपनी बाहरी सज धज के साथ सामने आया। हम भी क्या सारी दुनिया ही इसके रूप पर मुग्ध है। अब हमारी और सबकी इसके नूतन प्रयोगों की ओर टकटकी बांध कर देख रहे हैं। हां, कुछ संशयालु भी हैं पर वे देख रहे हैं

हैं। [illegible] विश्वास है कि मध्य युग की तरह ही भारत के [illegible] के इतिहास में राजस्थान के भारती का महत्वपूर्ण योग रहेगा।

आइये हम इतिहास की उपासना करें। इतिहास के [illegible] को पहचानें। समझें, कि इतिहास हम से क्या मांगता है? इतिहास हम से क्या [illegible] है इसे जान लिया तो फिर भी अपेक्षाकृत [illegible] है। [illegible] हैं, मार्ग-दर्शन करने वाली [illegible] हैं, दर्द [illegible] हैं, [illegible] हैं। [illegible] Stuff को, हमारी [illegible] को, हमारी भाषा को पहचानने में [illegible]

[illegible]

बतला सके - 'भाई, हम लोगों ने इतना ही किया है, हमारा कृतित्व यही है।" प्रश्न को, समस्या को, ठीक और सही ढंग से सामने रखना और सुलझाने में सहायता देना ही होता है। नाटक, कहानी, उपन्यास, कविता तथा आलोचना के क्षेत्र में राजस्थान में इधर दस-बारह वर्षों में क्या उन्नति हुई है इसका थोड़ा सा आभास 'सुजन-बेला' की पंक्तियों में मिलेगा। कविताओं के देखने से राजस्थान के तरुण-हृदय की भावात्मक स्थिति का भी पता चलेगा। पता चलेगा कि हमारे [illegible] की भावनाओं का रुख क्या है, वे किस दिशा में क्या सोच रहे हैं? निश्चय ही 'सुजन-बेला' से राजस्थान के आधुनिक साहित्य के विकास का सर्वांगीण चित्रण नहीं हो सका है। इसके लिये अधिक समय तथा धन की अपेक्षा है। हम अपनी ओर से यही कह सकते हैं कि हमने अपने सीमित साधनों के अन्दर इस उद्देश्य की प्राप्ति के लिये चेष्टा की है।

[illegible]

— [illegible]

सेमिनार

!!

'एक दृष्टि में'

!!

"सत्यं शिवं सुन्दरम्"

[illegible] i

[illegible]

[illegible] vi

[illegible]

[illegible] ix

[illegible]

[illegible] xi

[illegible]

[illegible] xiii

[illegible]

हेशा–

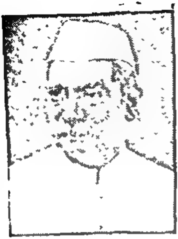

राष्ट्रपति भवन
नई दिल्ली

दिसम्बर २६, १९६०
पौ० ८, १८८२ शाके

मुझे यह जानकर प्रसन्नता हुई कि राजस्थान साहित्य अकादमी के तृतीय वार्षिक सेमिनार के अवसर पर अन्य रोचक तथा उपयोगी विषयों के साथ साथ राजस्थान के साहित्य पर भी विचार विनिमय होगा। मैं इस सेमिनार की सफलता चाहता हूं और राजस्थान की साहित्य अकादमी को अपनी शुभ कामनायें भेजता हूं।

राजेन्द्र प्रसाद

सत्यमेव जयते

PRIME MINISTER'S SECRETARIATE

NEW DELHI

पत्र संख्या ६।७।६१ हि

१८ फरवरी, १९६१
२९ माघ, १८८२ शक

प्रिय महोदय,

आपका पत्र दिनाङ्क १२ फरवरी १९६१ प्राप्त हुआ।

राजस्थान साहित्य अकादमी के तृतीय वार्षिक सेमिनार के अवसर पर प्रधान मंत्रीजी अपनी शुभ कामनायें भेजते हैं।

भवदीय

Sd/- (प्राणनाथ माही)

प्रधान मंत्री जी के निजि सचिव

डा० हरिवंशराय 'बच्चन'
एम. ए., पी-एच. डी. (कैन्टब)

विदेश मंत्रालय
नई दिल्ली

दिनांक २३-२-१९६१

प्रिय महोदय,

पत्र के लिए धन्यवाद। सेमिनार की सफलता के लिए शुभ कामनाएँ। आना तो संभव नहीं। स्मरण करने के लिए आभारी। सेमिनार की कार्यवाही प्रकाशित हो तो उसे देखना चाहूँगा।

धन्यवाद।

ह०/-(बच्चन)

सं० २५/६१-शि० एम०

शिक्षा मंत्री
भारत
नई दिल्ली
३ जनवरी १९६१

प्रिय श्री,

आपका पत्र मिला। मुझे प्रसन्नता है कि राजस्थान साहित्य सेमिनार "सामान्य जन और साहित्यकार" जैसा रोचक एवं महत्वपूर्ण विषय लेकर इस वर्ष साहित्य सदावर्त, जयपुर के तत्वावधान में हो रहा है और इस अवसर पर "सृजन वेला" नाम से आप एक सोविनियर का प्रकाशन भी कर रहे हैं। राजस्थान का साहित्य सजीवता से परिपूर्ण है और [illegible], विशेष कर हमारे लिये [illegible] सिद्ध हो सकता है।

मैं आपके आयोजन तथा प्रकाशन की सफलता चाहता हूँ।

भवदीय
ह०/-(का० श्रीमाली)

[illegible]

Govt of India
Ministry of Home Affairs
नई दिल्ली
दिनांक [illegible] जनवरी, १९६१
[illegible]

[illegible]

[illegible]

[illegible]

भवदीय
[illegible]

महामान्य श्री पुरुषोत्तमदास टण्डन

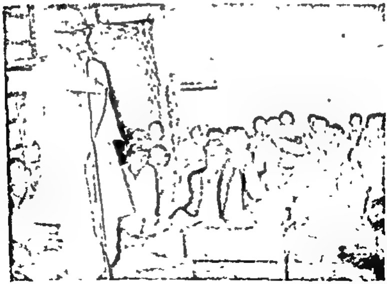

माननीय श्री हरिभाऊ उपाध्याय
वित्तमंत्री, राजस्थान सरकार

साहित्य सदावर्त : एक परिचय

श्री कन्हैयालाल मिश्र, *मन्त्री, साहित्य सदावर्त, जयपुर*

मानव समाज के लिए ज्ञान सर्वोपरि है। 'ज्ञान' ने ही मनुष्य का आदि काल से नेतृत्व किया है। इसी ज्ञान को विद्वानो मे साहित्य का केन्द्र मानकर, साहित्य को "ज्ञान राशि के संचित कोष की संज्ञा दी है। इससे स्पष्ट है कि ज्ञान विकासोन्मुखी जीवन का प्रारम्भ से ही पोषक तत्त्व रहा है और रहेगा। इसे प्राप्त करने के लिए मनुष्य एकाकी और सामूहिक रूपो मे प्रयत्न करता है। यही सामूहिक स्वरूप संस्था के जन्म का आधार-भूत कारण बनता है।

साहित्य सदावर्त की स्थापना का श्रेय श्री कमलाकर 'कमल' को है, जिन्होंने सन् १९३७ मे जन्माष्टमी की पावन वेला मे दो विद्यार्थियो के निशुल्क शिक्षण से इसका श्री गणेश किया था। आज के इस भौतिकवादी युग मे किसी भी प्रकार के कार्य को बिना आर्थिक साधन जुटाए पूर्ण करना असम्भव नही, तो दुष्करतम अवश्य है और इसीलिए बाबा गोविन्ददास और आचार्य श्री पुरुषोत्तम 'उत्तम' का सहयोग, सदावर्त की प्रगति और उन्नति मे निश्चनवर्ता के महत्व को स्वतः ग्रहण कर लिया है। सन् १९४५ मे संस्था के जीवन मे, श्रीपुरुषोत्तम 'उत्तम' की क्रियाशीलता और उदार मनोवृत्ति ने, नई गति ला दी है।

शैक्षणिक स्वरूप :—साहित्य सदावर्त जयपुर ही नहीं अपितु राजस्थान का एक आदर्श निशुल्क शिक्षण संस्थान है। हिन्दी साहित्य सम्मेलन (हिन्दी विश्व विद्यालय) प्रयाग और पंजाब तथा राजस्थान विश्व विद्यालयों की हिन्दी परीक्षाओं के हेतु शिक्षण प्रदान करना 'सदावर्त' का कार्य रहा है। संस्था मे आने वाला प्रत्येक विद्यार्थी संस्था के सभी पारिवारिक सदस्यो से इस प्रकार घुलता-मिलता है कि जैसे वह प्रारम्भ मे ही इस परिवार का अंग रहा हो और यही कारण है कि आज सदावर्त के विद्यार्थियों को राजस्थान भर में पाया जा सकता है। इसमे सन्देह नही कि सदावर्त को कई मोड देखने पडे हैं। कितने ही कडुए, मीठे अनुभव सदावर्त के इतिहास मे सुरक्षित हैं, तो भी अपने कार्य को सदावर्त ने कभी रोका नही। सदावर्त के जीवन मे इन आर्थिक (जो आज भी हैं) कठिनाइयो ने शिथिलता भले ही ला दी हो किन्तु पूर्णतः जड बना देने मे यह समस्याएँ कभी कृतकार्य न हुई हैं और हमारा विश्वास है कि न अब हो सकती हैं।

विद्यार्थी वर्ग को शैक्षणिक-सुविधाएँ प्रदान करने के दृष्टिकोण से सन् १९४५ मे ३ केन्द्र स्थापित किये गए। प्रथम केन्द्र कानानियों का रास्ता (किशनपोल बाजार,) मे, द्वितीय केन्द्र 'पानों के दरीबा' मे और तृतीय केन्द्र 'पुरानी बस्ती' मे रखा गया। जिनका सचालन क्रमशः श्री कमलाकर 'कमल', श्री पुरुषोत्तम 'उत्तम' और श्री कन्हैयालाल मिश्र के द्वारा होता रहा।

शिक्षण के प्रति सदावर्त के सहयोगी अध्यापकों की प्रारम्भ से ही मान्यता रही है कि पुस्तकीय आधार पर विद्यार्थियो को पूर्ण ज्ञान प्रदान नहीं दिया जा सकता अतएव पुस्तकों के अध्ययन-अध्यापन के साथ ही साथ सदावर्त ने कन्य कई प्रकार की नवीन विधियों को जन्म दिया, जिनके संचालन हेतु

साहित्य सदावर्त : एक परिचय

श्री कन्हैयालाल मिश्र, मन्त्री, साहित्य सदावर्त, जयपुर

मानव समाज के लिए ज्ञान सर्वोपरि है। 'ज्ञान' ने ही मनुष्य का आदि काल से नेतृत्व किया है। इसी ज्ञान को विद्वानों ने साहित्य का केन्द्र मानकर, साहित्य को "ज्ञान राशि के संचित कोष की संज्ञा दी है। इससे स्पष्ट है कि ज्ञान विकासोन्मुखी जीवन का प्रारम्भ से ही पोषक तत्त्व रहा है और रहेगा। इसे प्राप्त करने के लिए मनुष्य एकाकी और सामूहिक रूपों से प्रयत्न करता है। यही सामूहिक स्वरूप संस्था के जन्म का आधार-भूत कारण बनता है।

साहित्य सदावर्त की स्थापना का श्रेय श्री कमलाकर 'कमल' को है, जिन्होंने सन् १९३७ में जन्माष्टमी की पावन वेला में दो विद्यार्थियों के निशुल्क शिक्षण से इसका श्री गणेश किया था। आज के इस भौतिकवादी युग में किसी भी प्रकार के कार्य को बिना आर्थिक साधन जुटाए पूर्ण करना असम्भव नहीं, तो दुष्करतम अवश्य है और इसीलिए बाबा गोविन्ददास और आचार्य श्री पुरुषोत्तम 'उत्तम' का सहयोग, सदावर्त की प्रगति और उन्नति में सिंचनकर्ता के महत्त्व को स्वतः ग्रहण कर लेता है। सन् १९४५ में संस्था के जीवन में, श्री पुरुषोत्तम 'उत्तम' की क्रियाशीलता और उदार मनोवृत्ति ने, नई गति ला दी है।

शैक्षणिक स्वरूप :—साहित्य सदावर्त जयपुर ही नहीं अपितु राजस्थान का एक आदर्श निशुल्क शिक्षण संस्थान है। हिन्दी साहित्य सम्मेलन (हिन्दी विश्व विद्यालय) प्रयाग और पंजाब तथा राजस्थान विश्व विद्यालयों की हिन्दी परीक्षाओं के हेतु शिक्षण प्रदान करना 'सदावर्त' का कार्य रहा है। संस्था में आने वाला प्रत्येक विद्यार्थी संस्था के सभी पारिवारिक सदस्यों से इस प्रकार घुलता-मिलता है कि जैसे वह प्रारम्भ से ही इस परिवार का अंग रहा हो और यही कारण है कि आज सदावर्त के विद्यार्थियों को राजस्थान भर में पाया जा सकता है। इसमें सन्देह नहीं कि सदावर्त को कई मोड़ देखने पड़े हैं। कितने ही कड़ुए, मीठे अनुभव सदावर्त के इतिहास में सुरक्षित हैं, तो भी अपने कार्य को सदावर्त ने कभी रोका नहीं। सदावर्त के जीवन में इन आर्थिक (जो आज भी हैं) कठिनाइयों ने शिथिलता भले ही ला दी हो किन्तु पूर्णतः जड़ बना देने में यह समस्याएँ कभी कृतकार्य न हुई हैं और हमारा विश्वास है कि न कभी हो सकती हैं।

विद्यार्थी वर्ग को शैक्षणिक-सुविधाएँ प्रदान करने के दृष्टिकोण से सन् १९४५ में ३ केन्द्र स्थापित किये गए। प्रथम केन्द्र कानानियों का रास्ता (किशनपोल बाजार,) में, द्वितीय केन्द्र 'पानों के दरीबा' में और तृतीय केन्द्र 'पुरानी बस्ती' में रखा गया। जिनका संचालन क्रमशः श्री कमलाकर 'कमल', श्री पुरुषोत्तम 'उत्तम' और श्री कन्हैयालाल मिश्र के द्वारा होता रहा।

शिक्षण के प्रति सदावर्त के सहयोगी अध्यापकों की प्रारम्भ से ही मान्यता रही है कि पुस्तकीय आधार पर विद्यार्थियों को पूर्ण ज्ञान प्रदान नहीं किया जा सकता अतएव पुस्तकों के अध्ययन-अध्यापन के साथ ही साथ सदावर्त ने अन्य कई प्रकार की नवीन विधियों को जन्म दिया, जिनके संचालन हेतु

माननीय श्री निरंजननाथ आचार्य
उपाध्यक्ष
(राजस्थान विधान सभा)

अध्यक्ष,
आयोजन समिति,
तृतीय वार्षिक साहित्य सेमिनार

१७. ,, डा० देवराज उपाध्याय
१८. ,, स्व० प्रो० रामकृष्ण शुक्ल 'शिलिमुख'
१९. ,, गुलाबराय एम० ए०
२०. ,, नित्यानन्द 'मृदुल'
२१. ,, देवीशंकर तिवाड़ी
२२ ,, नबी बख्श 'फलक'
२३. ,, डॉ० मोतीलाल
२४. ,, गोपालप्रसाद 'नीरज'
२५. ,, गोपालप्रसाद व्यास
२६. ,, मेघराज 'मुकुल'
२७. श्रीमती सुशीला देवी नय्यर

साहित्यालोचना (गोष्ठि) परिषद्—

गवेषणात्मक एवं आलोचनात्मक साहित्य को प्रोत्साहन देने के दृष्टिकोण से इस परिषद् का गठन किया गया। सन् १९४५–४६ में इसके प्रारम्भिक काल में निम्नांकित पदाधिकारी रहे हैं —

१. श्री प्रो० रामकृष्ण शुक्ल 'शिलिमुख'—अध्यक्ष
२. ,, डॉ० सरनामसिंह 'अरुण' —मंत्री
३. ,, कपूरचन्द 'कुलिश' — संयुक्त मंत्री
४. ,, मदनमोहन शर्मा —प्रचार मंत्री

इस गोष्ठि के प्रयत्नों के फलस्वरूप साहित्य सृजन का निखरा हुआ स्वरूप उपलब्ध होने लगा। यह क्रम कोई ३–४ साल तक चलता रहा। इसी परिषद् के तत्वावधान में सन् १९४६ में एक विशेष समारोह का आयोजन किया गया जिसमें बाबू गुलाबराय एम० ए० के द्वारा इतिहास प्रसिद्ध आलोचक स्व० श्री रामकृष्ण शुक्ल 'शिलिमुख' को 'आचार्य' पद से विभूषित किया गया। किन्तु बाद में कुछ विकट परिस्थितियों और श्री 'शिलिमुख' जी की अस्वस्थता ने इस परिषद् को शिथिल कर दिया।

सन् १९५९ में मरुधरा की सहयोगी संस्था "संगम समिति" एवं सर्वश्री कपूरचन्द 'कुलिश' पुरुषोत्तम 'उत्तम', रामनिवास शाह, और चन्द्र कुमार 'सुकुमार' के सद्प्रयत्नों से इस कार्य में पुनः जीवन संचार हुआ। जिसके परिणाम स्वरूप आलोचना (गोष्ठि) परिषद् फिर सजीव होकर कार्यरत हुई। संगम समिति ने अपने जन्म से आज तक कई महत्वपूर्ण कार्य किए हैं। 'संगम' मासिक पत्रिका का प्रकाशन और 'भारत भूमि' द्वारा कवि सम्मेलन में पठित कविताओं का विवेचना के साथ पूर्व प्रकाशन समिति की विशिष्ट परम्परा है लेकिन कुछ साथियों को स्वय सृजन की आलोचना से भय होने लगा, फलस्वरूप कटुता भी बढ़ी और इसीसे कुछ समझदार साथियों और श्री हिम्मतलाल (मन्त्री) ने इस परिषद् के कार्यकलापों को सीमित कर दिया है।

महिला हितकारिणी परिषद्—

आज के युग में ही नहीं वरन् भारतवर्ष आदिकाल से ही नारी और पुरुष के अधिकार और कर्तव्य क्षेत्र को समान दृष्टि से मनोनत माना है। इतिहास साक्षी है। फिर भी जीवन-क्रम और ऐतिहासिक घटना क्रम ने नारीवर्ग को कुछ पिछड़ा दिया है, जिसको समुन्नत करना पुरुष वर्ग का प्रथम और अनिवार्य कर्तव्य है। इसी दृष्टिकोण से सन् १९४५–४६ में "महिला हितकारिणी परिषद्" को जन्म दिया गया। परिषद् ने नारी वर्ग में क्रान्तिकारी परिवर्तन ला दिए, उदाहरण स्वरूप पर्दा-प्रथा का बहिष्कार लिया जा सकता है। जयपुर शहर के जीवन में यह एक महत्वपूर्ण कार्य हुआ है। नारी के प्रति कुत्सित विचारों और धारणाओं की कटु आलोचना कर, सद्भाव और स्नेह, समानता की भावना उत्पादन करने वाली इस परिषद् का, आज भी नगर निवासी स्मरण करते ही रहते हैं। नारी शिक्षण के साथ ही साथ दूर कार्य एव

ऊपर दाएं से बाएं

१. श्री दामोदरलाल व्यास
अध्यक्ष, साहित्य सदावर्त

२ श्रीमती इन्दुबाला सुखाडिया
उपाध्यक्षा, साहित्य सदावर्त

३ श्री कन्हैयालाल मिश्र
मन्त्री, साहित्य सदावर्त

मध्य में—

४. श्री रामकिशोर व्यास
कुलपति, साहित्य सदावर्त

नीचे दाएं से बाएं

१. श्री रामनिवास शाह
उपाचार्य एवं कोषाध्यक्ष
साहित्य सदावर्त

२. आचार्य श्री पुरुषोत्तम 'उत्तम'
प्रधानाचार्य, साहित्य सदावर्त

३. श्री हिम्मतलाल 'हिमकरनेगी'
पूर्व मन्त्री, साहित्य सदावर्त

कताई, बुनाई, सिलाई, कढ़ाई आदि का पूर्ण ज्ञान प्रदान करना इस परिषद् का कार्य रहा है।

राजस्थान राज्य समाज कल्याण बोर्ड की सहायता से सन् १९६७-६८ में इस परिषद् को अनुदान दिया गया। "[illegible] एवं उद्योग [illegible] समिति" नाम देकर इस परिषद् का कार्य विस्तार किया गया। आज इसी समिति के द्वारा कई [illegible] महिलाएं [illegible] और जीविका प्राप्त कर रही हैं।

[illegible] समिति—[illegible] और [illegible] [illegible]

[illegible]

होगी। इस कार्य में हमें अधिक कठिनाई का अधिक मात्रा में सामना करना पड़ेगा यह हम करेंगे।

इसी संदर्भ में [illegible] से हम यह निवेदन करना चाहेंगे कि वह ऐसे महत्वपूर्ण कामों के लिए संस्थाओं को पूर्ण सहयोग प्रदान करें।

समाज शिक्षा समिति—नए समाज का निर्माण कर देश को नया रूप देना, बौद्धिक एवं शारीरिक विकास के साथ सांस्कृतिक चेतना को प्रगति के शिखर पर पहुंचाना इसी उद्देश्य की प्राप्ति के लिए ही माधोपुर, [illegible] ([illegible]) टोंक, अजमेर, [illegible], पुष्कर और [illegible] स्थानों में समय-समय पर समारोहों का आयोजन [illegible] की ओर से किया गया है। [illegible]

[illegible]

[illegible]

निबन्ध–प्रतियोगिता प्रमुख है जिसमे १४७१ प्रतियोगी भाग ले चुके है। किन्तु ७ वर्ष तक चले आरहे इस कार्य को "विरर विद्यालय आयोग" की एक विज्ञप्ति के परिणाम स्वरूप एकाएक बन्द कर देना पड़ा।

संस्था की आर्थिक स्थिति:– इस क्षेत्र मे संस्था की स्थिति समस्यापूर्ण रही है। जो कुछ आर्थिक सहयोग अब तक प्राप्त हुआ वह विद्यार्थियो और सहयोगी तथा संरक्षक व्यक्तियो से प्राप्त हुआ है। इसके अतिरिक्त राज्य के शिक्षा विभाग, समाज कल्याण बोर्ड, साहित्य अकादमी एव केन्द्रीय समाज कल्याण बोर्ड से भी आर्थिक सहायताएं समय-समय पर प्राप्त हुई हैं।

संस्था की अब तक की आय १०४५०८.०० रु० तथा व्यय ११०५०८.०० रु० है। वर्तमान मे संस्था पर ६०००'०० रु० कर्जा है। स्पष्ट ही है कि संस्था की योजनाओ को पूर्ण करने मे आर्थिक कठिनाई गतिरोध उत्पन्न करती है। तो भी संस्था के कार्यकर्ताओ ने घुटने नही टेके है। धैर्य और हिम्मत के साथ प्रगति–पथ पर अपने चरण आगे बढाते जा रहे है।

संस्था का वर्तमान स्वरूप.—राज्य के संस्था–नियमोपनियमो के अन्तर्गत संस्था पंजिबद्ध होकर शिक्षा विभाग द्वारा मान्यता प्राप्त कर चुकी है। गत ५ वर्षों मे संस्था का संचालन राजस्थान के गणमान्य व्यक्तियो द्वारा निर्मित संचालन समिति द्वारा हो रहा है। संचालन समिति का गठन इस प्रकार है।

श्री राम किशोर व्यास	—	कुलपति
,, दामोदर लाल व्यास	—	अध्यक्ष
श्रीमती इन्दुबाला सुखाड़िया	—	उपाध्यक्षा
श्री कन्हैयालाल मिश्र	—	
,, पुरुषोत्तम 'उत्तम'		
,, हिम्मत लाल 'हिमकरनेगी	—	अर्थ मन्त्री
,, राम निवास शाह	—	कोषाध्यक्ष
,, चन्द्र कुमार 'सुकुमार'	—	सदस्य
,, निरंजननाथ आचार्य	—	सदस्य
,, सहदेव शर्मा	—	सदस्य
,, किस्तूरमल शाह	—	सदस्य
सुश्री शकुन्तला श्रीवास्तव	—	सदस्य
श्री बहादुरसिंह 'सहायक'	—	सदस्य
,, कैलाश तिवाड़ी 'विद्रोही'	—	सदस्य

यह हर्ष की बात है कि राजस्थान साहित्य अकादमी (संगम) उदयपुर ने संस्था को सम्बन्धित कर अपना अंग बना लिया है। संस्था इस सराहनीय प्रयास के लिए अकादमी के अध्यक्ष श्री जनार्दनराय नागर तथा संचालक डॉ० मोतीलाल मेनारिया को धन्यवाद देना अपना कर्तव्य मानती है।

संस्था की भावी योजना—राष्ट्रभाषा हिन्दी के विस्तार–प्रस्तार हेतु "हिन्दी कालेज" की स्थापना करना तथा साहित्यिक क्षेत्र में सेवा–कार्य करने के उद्देश्य मे एक पूर्णतः साहित्यिक पत्रिका का प्रकाशन करना, इसके कार्यकर्ताओं के मानस में जाने कब से जाग रही आकांक्षाओं का सृजन रूप है।

वैसे तो 'हिन्दी कालेज' के स्वरूप को रात्रि कालेज के रूप मे अक्टूबर प्रारम्भ से संचालित करना आ रहा है, किन्तु समस्याओ के उचित समाधानो की व्यवस्था की कमी के कारण पूर्ण विकसित रूप अभी हम नही दे पाए हैं।

'अक्षरम्' के पास अपना कोई निजी स्थान और भवन नही है। यह भी प्रगति मे एक बाधा रही है। किन्तु निकट भविष्य मे ही राज्य सरकार द्वारा भूमि प्राप्त कर भवन ...

उद्घाटन के शब्द

उपस्थित देवियो और सज्जनो,

इस सेमिनार के आयोजकों ने इसका विचारणीय विषय परिस्थिति के अत्यन्त अनुकूल रखा है—"सामान्य जन और साहित्यकार"। अगर सचमुच कहा जाय तो यह सामान्य जन का युग नहीं है, सामान्य जन को मान्य बनाने का दिन है। आज तक राजा लोग मान्य थे, राजा जिसको मान्य करे, वह मान्य बनता था। अब सामान्य लोगों को मान्य बनाने का दिन आ गया है, स्वराज्य का दिन नहीं है, लोक राज्य का दिन है। स्वराज्य हो चुका है, अब कोशिश करके लोक राज्य बनाने का दिन आ गया है। हम जिनके हाथ में सारे राज्य को देने वाले हैं, उनको तैयार करने का काम दो वर्गों के हाथ में आ गया है—एक है राजनैतिक पुरुष, जिसके हाथ में आजकल सारी सत्ता है और दूसरा है साहित्यकार, जिसके हाथ में प्रेरणा देने का अधिकार है। इन दोनों के प्रयत्न से जो कुछ होगा वह होगा। साहित्यकार में भी दो पक्ष हो गये हैं—एक साहित्यकार कहता है, क्या नीति और क्या धर्म? ये सब बातें पुरानी हो गई हैं, हम तो प्रजा का रंजन करेंगे, जिसमें जीवन की अभिव्यक्ति हो। हम, जीवन में जितनी कुछ इच्छाएं, आकांक्षाएं, वासनाएं होती हैं, उनको जागृत करेंगे। इन सब वासनाओं को जागृत करने के लिए जितने लोग प्रयत्न कर सकते हैं, वे करें। यही लोग फिर कहते हैं कि हम समाज के गुरु हैं लेकिन ये दोनों बातें साथ-साथ नहीं चल सकती। या तो आप रंजन करें, या फिर लोगों की उच्चाभिलाषा या हीनाभिलाषाओं, दोनों में से एक की जागृति का प्रयत्न करें। दूसरा साहित्यकार है, उसमें सबके लिए स्थान है, सब समाज का कार्य उसके पास है, जीवन को प्रेरणा देने का काम भी उसके पास है, जीवन उन्नत कैसे हो? स्वावलम्बी कैसे हो? उसका ह्रास ज्यादा से ज्यादा न हो, इसके लिए जो प्रेरणा देनी है, उस प्रेरणा को देने का काम साहित्यकार का है। इसके लिए उसको अपने जीवन में साधना करनी होगी। हमारी तरफ न देखिये, हमारा साहित्य कैसा है, उसकी तरफ देखिये, यह कहने की नौबत नहीं आनी चाहिए। जितना हमारा साहित्य उन्नत है, उससे भी हमारा जीवन उन्नत बने, इसके लिए हमें साधना करनी चाहिए, इतना तो कम से कम हम करें ही।

सरकार दो काम कर सकती है—जनता को अक्षर ज्ञान और राज्य के अधिकार। ये दोनों खतरनाक चीजें हैं। लोगों को वोट के अधिकार मिले। आज वोट की सत्ता है, आज अगर कोई काम आ सकता है तो वह वोट है। वोट जिसको चाहेगा वह आयेगा, जिसको चाहेगा हटायेगा। दूसरा अक्षर ज्ञान है, वह भी खतरनाक है, उसमें क्या पढ़ेंगे? क्या नहीं पढ़ेंगे? यह आपके हाथ की बात है। आप लोगों को पढ़ाने की सत्ता दे चुके हैं। इससे से क्या भलाई होगी, यह पता नहीं हो सकता। डिमोक्रेसी के मायने हैं "act of faith" जिन लोगों के हाथ सर्व सत्ता देने वाले हैं, वे वोट और अक्षर ज्ञान पाने पर भूल कर इसको व्यर्थ नहीं करेंगे, ऐसे विश्वास से सारी सत्ता उनके हाथ में दी है। आपके प्रदेश की समस्या ही लें। इस प्रदेश के अध्यक्ष ने अपने हिसाब से ज्यादा दिन

तक रहने की कोशिश की। जैसे कभी वर्ष के दिन बढ़ जाते हैं, उसी तरह मध्यकाल ने अपने हिसाब से ज्यादा दिन रहने की कोशिश की। इस मध्य-काल की जिल्द बांध देनी है, वर्तमान को मजबूत बनाना है और भविष्य काल को स्थाई करना है। इसकी सारी परिस्थिति का आपको आन्तरिक ज्ञान है और आपके पास दीर्घ दृष्टि है, ऐसे साहित्यकार हमें मिलें तो सब कल्याण होगा। लेकिन अगर लोग कहें कि आपके संत, आपके ऋषि, आपके मुनि महात्माओं ने भलाई के पाठ इतने पढ़ाये हैं कि हम सब ऊब गये हैं। आज हम स्वतंत्र हो गये तो कहते हैं कि अब जरा भोग विलास का अनुभव करने दीजिये। भोग विलास आनन्द का बीज है, इसका कौन विरोध करेगा? अगर वह कल्याणकारी है, हितकारी है। लेकिन यह देखा गया है कि जो लोग जनता के भोग विलास को बढ़ा देते हैं, उन का ही बलिदान लिया जाता है, यह एक ऐतिहासिक नियम है। इस बारे में साहित्यकार इस न समझें कि आज अगर हम भोग और विलास बढ़ा देंगे तो हमारी वाणी मधुर हो जायेगी। लेकिन जब हम [illegible]

करके जो भी आवश्यक है, वह साहित्य होगा। आज तक साहित्य के विषय थे—प्रेम, शौर्य, भक्ति और मरण। चारों विषयों में साहित्यकार ने अपनी प्रतिभा दर्शायी। प्रेम सनातन विषय है, इसके नये नये अन्वेषण होते रहते हैं। मृत्यु के द्वारा जो प्राप्त होता है वह अजीब है। जीवन का अंत मरण है। मारने की कला हर एक को प्राप्त नहीं होती, जो मार सकता है वह मर भी सकता है। मरने की कला आपके पास है, यह जीवन के द्वारा सभी को प्राप्त होती है। मरने की दूसरी कला ऐसी है, जैसी महात्माओं के पास होती है, वे समझते हैं, जीवन में दूसरों की सेवा करने का मौका मिलता है। मरने के बाद भी सेवा करने का मौका मिले तो एक क्षण के अन्दर मनुष्य इतना जीता है जितना सारे जीवन में नहीं जीता। जितनी सारी जीवन में सेवा की, वह मरने के बाद की। इस तरह चार सनातन विषय रहे हैं। [illegible]

अब भाषा का सवाल आ सकता है, भाषा ऐसी होनी चाहिए कि उसमें जीवन के मूल्य आ जायें। मैं पूछता हूं कि जब हिन्दी बोलने वालों की संख्या, और भाषा बोलने वालों की संख्या में चार पांच गुनी है, दस गुनी है, तो भाषा क्यों न ऐसी हो कि जिससे जनता को समझने में दिक्कत नहीं हो। इस वास्ते राजस्थान के जो साहित्यकार साहित्य सृजन कर रहे है, उनकी हिन्दी ऐसी हो कि सब लोगों की समझ में आ जाये, तब तो लोग समझेंगे कि अपनी बात है। अब पांडित्य पूर्ण भाषा नहीं चलेगी। अगर आपको जनता की सेवा करनी है तो जनता समझ सके ऐसी भाषा बोलें। राजस्थानी में शब्दों की भरमार है, हिन्दी में ऐसे राजस्थानी शब्द लायें जिन्हें लोग समझ सकें, ऐसी हिन्दी का आविष्कार करना होगा। साथ ही देश की रक्षा कैसे हो, यह बताने वाला भी साहित्य हो। मैं पूछता हूँ कि हिन्दुस्तान की रक्षा के लिए क्या २ करना चाहिए, इसके बारे में एक भी किताब लिखी है? अभी चीन और भारत के अधिकारियों की बात हुई, उसकी रिपोर्ट अंग्रेजी में लिखी है। अभी तक राज्य हिन्दी का नहीं है, नहीं तो भारत की रक्षा के लिए, सारे हिमालय की क्या हालत है, इसकी रिपोर्ट अंग्रेजी में न दी जाती।

साहित्यकारों से प्रार्थना है कि पिछड़ी हुई जनता का एक भी आदमी पिछड़ा हुआ आपके प्रदेश में रहता है और एक भी आदमी अपमानित होता है, तो आपकी नाक कट गई। मैं और प्रदेश की बात नहीं करता, राजस्थान में पिछड़ापन बहुत है और स्त्रियों की क्या हालत है, केवल ११ महिलायें विधान सभा और लोक सभा के लिए हैं। उनके बारे में भी विचार करें।

मुझे आपके बीच में आने का अवसर मिला, मैं कृतार्थ हुआ। मुझे विश्वास है आज जो जनता का युग शुरू हो गया है, उसकी प्रतिष्ठा बढ़ा कर, सामान्य जन की सेवा करके समाजवाद लाने के लिए आप प्रयत्न करेंगे। मुझे आशा है जनता और सामान्य जनता की एकनिष्ठ सेवा करने का प्रन लेकर आप सेमिनार से वापिस लौटेंगे।

२१-२-६१

—काका कालेलकर

"संचालक- की ओर से"

आदरणीय काका साहब, साहित्यकार बन्धुओ, उपस्थित सज्जनों और महिलाओं। एक प्रश्न है आज साहित्यकार और जनता के बीच जितनी दूरियाँ खड़ी हो गई हैं उनके लिए उत्तरदायित्व किसका है? इससे पहले मैं यह प्रश्न भी पूछना चाहता हूँ कि क्या सचमुच जनता और साहित्यकार के विवेचन की आवश्यकता है? जनता के कष्ट का उत्तरदायित्व साहित्यकार का है! इतिहास की दृष्टि से देखा जाय तो इस प्रकार की मिसालें है, वैदिक काल में ऋषि ऋचाएं गाते थे, राजा और महाराजाओं के पास बैठते थे, उनके बोले हुए शब्द धर्म के नाम पर प्रचारित किये जाते थे। लेकिन उसके बाद यह भी देखते हैं कि जब धर्मियों के हाथ में बल आया तो बौद्धिक वर्ग या साहित्यकार सम्पन्न बन कर रहने लगा। भारत वर्ष का इतिहास प्रमाणित करता है कि उस समय संघर्ष हुआ है और लोगों ने अनुभव किया कि यह संघर्ष भारत की उन्नति का नाश करता है। इसलिए नियम बने,

विधान बने और उसमें रखा कि वे भीख मांग कर पालन करें ताकि स्वार्थ की चिन्ता न हो। हमारे सामन्त काल में यह मर्यादा भी रही है कि जब साहित्यकार आता था तो राजा उसकी पालकी को कन्धे पर लेकर चलता था। आज यह दुर्दशा है कि उसे उपदेश और सलाह दी जाती है। यह करो, यह न करो। यह दायित्व किसका है ? क्या उसका है जो जनता के नाम पर जनता का शोषण कर रहे हैं ? कौन कर रहा है जनता का शोषण ? साहित्यकार अथवा कोई और ? जनता के नाम पर जनता को [illegible] करने का प्रश्न नहीं है।

भीख का आशय [illegible] गया है। दो हजार, ढाई हजार वर्ष पहले भी यही था। उस [illegible] को साहित्यकार ने [illegible] रखा है। किन्तु आज [illegible] है। साहित्यकार भी [illegible] [illegible]

जो ऐसा कहते हैं कि साहित्यकार मानव के [illegible] को स्थापित करे, उन व्यक्तियों ने उन महन्तों और [illegible] को सुना या नहीं। हम नहीं जानते उसके बाद [illegible] का व्यवसाय भी बहुत चलता रहा, उसके कारण [illegible] ने धर्म और मोक्ष की ओर नहीं देखा, इसलिए [illegible] बाद काफी उत्थान और पतन देखे गये। और आज भी मानव का गौरव देखना है तो साहित्यकार के पास ही जाना पड़ेगा। उसके आगे दो प्रकार के साहित्यकार हो गये, एक तो वे जो दरबारों में चले गये और दूसरे वे जो साधना में लगे रहे। जो दरबारों में चले गये वे जीवन को, धर्म को तथा संस्कृति और इतिहास को नहीं समझ सके। लेकिन फिर भी ऐसे साहित्यकार रहे जो [illegible] साधना में लगे रहे, उनमें से महाकवि कालिदास का नाम सामने आता है। उनकी महान कृति को देखने से पता लगता है कि साहित्यकार का गौरव [illegible] नहीं हुआ है, राज्य उसको पाला [illegible]। जिस दिन राज्य की आज्ञा के ऊपर साहित्यकार ने साहित्य सृजन की, उस दिन उसका [illegible] नष्ट हो जायगा। कुछ लेखक हैं जो इस [illegible] लिखते हैं, मैं समझता हूँ कि लेखकों को [illegible]

डॉ॰ [illegible]

राजस्थान की साहित्यिक संस्थायें

कुमारी कमला आकड, जयपुर

राजस्थान के साहित्य जगत मे साहित्यिक संस्थाओं का महत्वपूर्ण स्थान है। सामूहिक रूप मे साहित्य के अनुसंधान, प्रचार, प्रकाशन एवं प्रांत के जन-मानस मे साहित्यिक अभिरुचि उत्पन्न करने मे संस्थाओं का प्रशंसनीय योगदान रहा है। इतना ही नही साहित्य के लिये पाठक तैयार करने में इन संस्थाओं ने जो तत्परता प्रकट की है साहित्य जगत को निश्चित ही आभार दिया है। साधन और वातावरण के अभाव में अनेक प्रतिभायें कुण्ठित हो जाती हैं किन्तु संस्थाओं के सहयोग से प्रान्त की प्रतिभायें काफी मात्रा मे कुंठित होने से बची हैं। हम यहां प्रान्त की कुछ महत्वपूर्ण संस्थाओं के बारे मे संकेत देते हुए निवेदन करेंगे कि अतीत की सुरक्षा, वर्तमान के परिष्कार और भविष्य के विकास के लिये जनता, राज्य और सम्पन्न लोगों के साथ २ प्रान्त के साहित्यकारों को भी इन केन्द्रों को सद्भावनापूर्ण योग देने मे तत्पर रहना चाहिये।

प्रान्त की प्रमुख संस्थाओं मे 'साहित्य संस्थान उदयपुर', हिन्दी साहित्य समिति भरतपुर, बागड प्रदेश साहित्य परिषद् डूंगरपुर, अन्तर्प्रान्तीय कुमार साहित्य परिषद् जोधपुर, राजस्थानी शोध संस्थान चोपासनी, हिन्दी विश्व भारती बीकानेर, राजस्थान साहित्य समिति बिसाऊ, भारतेन्दु समिति कोटा, और 'साहित्य मण्डल' नाथद्वारा आदि का संवेनात्मक परिचय यहां देते हुए निवेदन करेंगे कि राजस्थान की अन्य साहित्यिक संस्थाओं का परिचय प्राप्त करने मे असमर्थ रहे हैं एतदर्थ क्षमा याचना करते हैं।

साहित्य संस्थान उदयपुर.—की स्थापना सं० १९९८ मे प्राचीन साहित्य की अनुसंधान एवं प्रकाशन तथा अर्वाचीन साहित्य के सृजन और प्रचार की दृष्टि से हुई। तब से यह संस्थान निरन्तर साहित्य सेवा मे संलग्न है। संस्थान के अन्तर्गत चलने वाली प्रवृत्तियों में प्रमुखतः प्राचीन साहित्य के अनुसंधान को महत्व देते हुए प्राचीन साहित्य-विभाग का गठन राजस्थान के प्राचीन साहित्य को प्रकाश मे लाने के उद्देश्य से किया है। इस विभाग के द्वारा अनेक प्राचीन कवि और ग्रन्थों का परिचय अनेक प्रसिद्ध और अधिकारी विद्वानों के द्वारा साहित्य जगत को प्राप्त हुआ है। संस्थान का दूसरा विभाग है राजस्थानी प्राचीन साहित्य। सन् १९५४ तक इस विभाग ने कुल अठारह हजार गाथा सो गीतों को संग्रहित किया है जिसमें ११५५ तक महाराणाओं के गीत, चूडावतों के गीत, राजस्थानी दोहे आदि का सपादन किया जा चुका है। इसके साथ ही 'पृथ्वीराज रासो' का सपादन भी इस विभाग का महत्वपूर्ण कार्य है।

संस्थान, लोक साहित्य, आदिवासी साहित्य और राजस्थानी लोक गीत आदि के संग्रह और प्रकाशन के लिये निरन्तर प्रयत्नशील रहा है। मेवाड की कहावतें २ भाग, मालवी कहावतें और राजस्थानी लोक दोंगों के संग्रह, इस विभाग का प्रकाशन है।

संस्थान प्राचीन साहित्य के साथ २ अर्वाचीन साहित्य के प्रकाशन के लिये भी निरन्तर प्रयत्नशील रहा है जिसमें डोंगरजी के निबन्धों [illegible] संग्रह और श्री जनार्दन राय नागर के 'आचार्य चाणक्य'

(नाटक) का प्रकाशन महत्वपूर्ण है। इसके साथ ही संस्था के अन्तर्गत शोध संस्थान का कार्य भी महत्वपूर्ण दिशा है जिसमें दूर २ से शोध-स्नातक शोध के लिये आते हैं। इसी विभाग के अन्तर्गत शोध पत्रिका का प्रकाशन भी हुआ था। साहित्यिक आयोजनों की परम्परा भी संस्थान की अपनी उपज है। जिसके अन्तर्गत 'सूर्यमल' ... और प्रेमचन्द आदि के नाम से आयोजनों की स्थापना की गई है जो निरन्तर इन दिशाओं पर विचार विमर्श करते रहते हैं।

हिन्दी साहित्य समिति भरतपुर:—समिति की स्थापना सम्वत् १९६९ में [illegible] [illegible] के द्वारा हुई थी। [illegible]

[illegible]

[illegible]

संस्था को आशीर्वाद दिया है। संस्था ने [illegible] 'स्वर्ण जयन्ती' महोत्सव मनाया है जिसमें [illegible] कृष्णन (उप-राष्ट्रपति) ने पधार कर संस्था को आशीर्वाद दिया।

बागड़ प्रदेश साहित्य परिषद्, डूंगरपुर —

परिषद् की स्थापना सं० २००१ कार्तिक पूर्णिमा को हुई थी। तभी से संस्था बागड़ प्रदेश में साहित्य के प्रचार एवं प्रसार के लिये प्रयत्नशील रहे बागड़ भाषा और उसके साहित्य की उन्नति के लिये भी कार्यशील है। संस्था की प्रवृत्तियों में [illegible] राष्ट्र भाषा महाविद्यालय, उदयपुर बोर्ड [illegible] भाषा प्रचार समिति, प्रौढ़ एवं बाल शिक्षा [illegible] महिला शिक्षा, राजस्थानी शोध विभाग, वाचनालय एवं पुस्तकालय और प्राचीन हस्तलिखित ग्रन्थों का संग्रहालय प्रमुख है। अर्थ के अभाव और [illegible] की कमी के कारण परिषद् योजनाओं के अनुरूप विकास करने में समर्थ नहीं हो सकी। [illegible] भवन न होने के कारण भी दुविधा में है।

अन्तर्प्रान्तीय कुमार साहित्य परिषद्, जोधपुर —

यह संस्था [illegible]

[illegible]

में और हिन्दुस्तान में तथा उसके बाहर, हैदराबाद देहली, बेंगलोर, कलकत्ता और सागोतों का फिजि-द्वीप समूह में है। परिषद् देश के विभिन्न प्रसिद्ध विद्वानों को बुला अपने अधिवेशनों की अध्यक्षता के द्वारा उनके ज्ञान से प्रान्त के जन-मानस को लाभान्वित करती है।

राजस्थानी शोध संस्थान, चौपासनी:—

चौपासनी शिक्षा समिति जोधपुर द्वारा राजस्थानी साहित्य के शोध और प्रकाशन के महत्वपूर्ण कार्य के लिये १५ अगस्त १९५५ को शोध संस्थान की स्थापना की गई थी। तब से यह शोध संस्थान प्रान्त के साहित्य वैभव को वर्द्धित करने में संलग्न रहा है। त्रैमासिक शोध पत्रिका 'परम्परा' के प्रकाशन के द्वारा संस्थान ने जो प्राचीन साहित्य और लोक साहित्य, रसज्ञ पाठकों के समक्ष प्रस्तुत किया है, प्रशंसनीय है। 'परम्परा' द्वारा प्रकाशित प्रमुख प्रकाशन हैं लोक गीत, गोरा हट जा, डिंगल-कोष, जेठवेरा सोरठा, राजस्थानी बात संग्रह, रस राज आदि हैं। इसके अतिरिक्त संस्थान के द्वारा 'साहित्य और समाज' (श्री विजयदान देथा) 'साहित्य संगीत और कला' (कोमल कोठारी) शीर्षक दो निबन्धों की पुस्तकों का भी प्रकाशन हुआ है। संस्थान का अद्वितीय और प्रशंसनीय कार्य है 'बृहद् राजस्थानी शब्द कोष' का प्रकाशन। इस शब्द कोष में लगभग एक लाख पच्चीस हजार शब्द होंगे। शब्द कोष चार भागों में प्रकाशित होगा—जिसका प्रथम भाग शीघ्र ही पाठकों के हाथ में आने वाला है। यह चार हजार पृष्ठों में छपेगा। वास्तव में संस्थान का यह कार्य राजस्थानी भाषा का अमरत्व और साहित्य के गौरव में वृद्धि करने वाला होगा, इस कार्य में श्री सीताराम लालस लगे हुये हैं।

संस्थान हस्तलिखित ग्रन्थों, लोक-गीतों, डिंगल गीतों, राजस्थानी बातों, पुराने-चित्रों एवं डिंगल के कवियों की जीवनी के संग्रहों में भी संलग्न है। अब तक क्रमशः पांच सौ हस्तलिखित ग्रन्थ, ५०० लोक-गीत, २००० डिंगल गीत व छन्द, दो सौ राजस्थानी बातें, एक सौ बीस चित्र और एक सौ जीवनियां संग्रहित कर चुका है।

हिन्दी विश्व भारती, बीकानेर:—

भारती की स्थापना बीकानेर साहित्य सम्मेलन द्वारा २६ जून १९५७ को हुई थी। तब से विश्व-भारती, बीकानेर के जीवन में साहित्यिक अभिरुचि उत्पन्न करने में प्रयत्नशील है। समिति के अन्तर्गत चलने वाली प्रवृत्तियां में अनुसंधान विभाग, समाज कल्याण विभाग, अन्तर्राष्ट्रीय विभाग, पुस्तकालय व वाचनालय तथा प्रौढ़ शिक्षा एवं प्रशिक्षण विभाग चलते हैं। ये विभाग लगन एवं कर्मठता के साथ अपने कार्य में संलग्न रह जन-सेवा में लीन हैं। इसके साथ ही भारती की प्रमुख प्रवृत्ति है नियमित रूप से होने वाली अनुसंधान एवं विचार गोष्ठियां। ये गोष्ठियां सप्ताह में दो बार रविवार और बुधवार को होती हैं। जिसमें विभिन्न विषयों पर प्रसिद्ध विद्वानों के भाषण तथा निबन्ध पाठ होते रहते हैं।

राजस्थान साहित्य समिति, बिसाऊ:—

समिति की स्थापना २४ अगस्त १९५३ ई० को हुई थी। तब से समिति प्रचार, प्रकाशन और अपने क्षेत्र में साहित्यिक वातावरण कायम रखने के लिये प्रयत्नशील है। समिति ने राजस्थानी दोहों की राम कथा, राजस्थानी-लोक संस्कृति की रूप रेखा, अर्वाचीन राजस्थानी काव्य, कलगी अमर, अब तक प्रकाशन किया है। 'वरदा' नामक त्रैमासिक शोध पत्रिका भी प्रकाशित होती है। भविष्य में समिति की योजना राजस्थान के साहित्य का रूप में प्रकाशित करने की है।

भारतेन्दु समिति, कोटा:—

समिति की स्थापना आज से लगभग ३५ वर्ष पूर्व कोटा नगर तथा हाड़ौती प्रदेश में हिन्दी प्रचार को लक्ष्य मानकर सन् १९२९ में हुई थी। उसी समय से समिति, साहित्य के प्रचार, प्रकाशन एवं नवीन प्रतिभाओं को प्रोत्साहन देने के कार्य में संलग्न है। नाटकों का अभिनय, कवि सम्मेलन, निबन्ध प्रतियोगिता, कहानी सम्मेलन, राज्य भाषा के स्थान पर हिन्दी का प्रचार और मजदूरों की बस्तियों में प्रौढ़ शिक्षा की व्यवस्था करना तथा प्रसिद्ध साहित्यकारों की जयन्तियां और साहित्यिक उत्सवों का आयोजन करना समिति की प्रमुख प्रवृत्ति रही है। [illegible]

[illegible]

सभी विषयों पर [illegible] मण्डल के पुस्तकाल[illegible] से भी दैनिक, स[illegible] करीब ५५ आते हैं [illegible] भवन है। संस्था के [illegible] के पुस्तक सदस्य थी [illegible] के लिए श्रम-[illegible] के प्रयत्न से [illegible]

उपर्युक्त संस्था[illegible] धनराज, सुधाकर [illegible] समिति व्यापार का [illegible]

इस भांति रा[illegible] संस्थाएं प्रान्त के [illegible] बनाये रखने के लिये [illegible] भी इसी प्रकार की [illegible]

राजस्थान की साहित्यिक परंपरा

विवेचनात्मक एवं परिचयात्मक विश्लेषण

[illegible]यान में— १

संस्कृत-साहित्य ५
डॉ० [illegible] आचार्य '[illegible]'

अपभ्रंश-साहित्य और उसकी मुख्य प्रवृत्तियाँ १९
डॉ० [illegible] '[illegible]'

जैन-साहित्य २७
श्री [illegible]

[illegible] और [illegible] ३८
डॉ० [illegible]

"[illegible]" [illegible] ४९
डॉ० [illegible] त्रिपाठी

[illegible]-साहित्य [illegible]
डॉ० [illegible]

[illegible] [illegible]
श्री [illegible] '[illegible]'

[illegible] · (कविता) [illegible]
[illegible]

[illegible] [illegible]
[illegible]

[illegible] [illegible]
[illegible]

[illegible] [illegible]
[illegible]

[illegible] [illegible]
[illegible]

[illegible] [illegible]
[illegible]

[illegible]
[illegible]

संस्कृत साहित्य

प्रो० हरिराम आचार्य 'अभिताभ' एम ए., संस्कृत विभाग, महाराजा कालेज, जयपुर

राजस्थान की वीर प्रसविनी धरती मे जहा एक ओर बलिदानी वीरो का जन्म हुआ, वही दूसरी ओर साहित्यिक मनीषियो एवं रचनाकारो की भी निरंतर सृष्टि हुई है। १० वी शताब्दी के बाद प्रायः प्रत्येक शती मे संस्कृत–साहित्य का सर्जन होता रहा है। हम निस्संकोच कह सकते हैं कि राजस्थान मे भी संस्कृत–साहित्य–सर्जन की एक सुदीर्घ परंपरा रही है। इस प्रान्त की राजधानी यह ऐतिहासिक नगर जयपुर कुछ शतक पूर्व भारत भर मे वाराणसी के बाद संस्कृत–शिक्षण का प्रमुख केन्द्र माना जाता था और यहा उद्भट विद्वानो की छत्रछाया मे शिक्षा प्राप्त करने के लिए सुदूर देशो से ज्ञान–पिपासु छात्र आते रहते थे।

कुछ सीमाओ तक यहा के राजाओ का सहयोग एवं आश्रय भी संस्कृत लेखन के लिए प्रेरणास्पद रहा। यद्यपि युद्धप्रिय होने के कारण राजस्थान के राजपूत राजा संस्कृत के अमूल्य ग्रंथो के संचय की व्यवस्था की ओर ध्यान नही दे पाये, फिर भी निःस्पृह भाव मे रचना करने वाले पंडितो की कई हस्तलिखित रचनाएं भंडारो, मंदिरो और जैन उपाश्रयो मे बड़े यत्न मे सुरक्षित रही है। राजस्थान में हस्तलिखित प्रतियां के ज्ञान-भंडार साहित्य-संसार मे सर्व विदित है। बीकानेर, जैसलमेर, नागोर, जय-पुर आदि के ग्रंथागार विदेशी विद्वानो तक के लिए आकर्षण के केन्द्र रहे है। हस्तलिखित प्रतियो की अधिकाधिक संख्या मे उपलब्धि बीकानेर मे होती है, जहां ऐसी करीब ५० हजार प्रतियां मौजूद है। उसके बाद जैसलमेर का स्थान है जहा विदेशी विद्वान् प्रो० बूलर (Buhler) को "गउडवहो" जैसे सुप्रसिद्ध प्राकृत महाकाव्य और महाकवि बिल्हण रचित "विक्रमांक देवचरित" महाकाव्य जैसे दुर्लभ ग्रन्थो की प्राप्ति हुई थी। संस्कृत के मुकृती रचनाकारो के साथ २ उन महामना जैन मुनियो का भी हमे ऋणी होना चाहिए जिन्होने अपने संस्कृतानुराग के कारण कई दुर्लभ एवं विस्मृत संस्कृत ग्रन्थो को अपनी ममतामयी क्रोड मे स्थान देकर उन्हे काल के भयंकर थपेडो मे और इतिहास की खूंख्वार तलवारो से बचाये रखा।

यह कहते हुए हमे गर्व होता है कि "शिशुपाल वध" के प्रणेता महाकवि माघ ने राजस्थान की भूमि को अपने जन्म से अलंकृत किया था। भीन-माल (श्रीमाल) नगर आपकी जन्मभूमि थी। अतः हम कह सकते हैं कि माघ ने लगभग १३०० वर्ष पूर्व ही माघ ने बृहत्त्रयी मे परिगणित होने वाले महाकाव्य की रचना करके राजस्थान मे संस्कृत–साहित्य–सर्जन का प्रथम शंखनाद कर दिया था। उसके बाद भी कई साहित्य स्रष्टाओ का सम्बन्ध राजस्थान के साथ जोड़ा जाता है किन्तु उनके विषय मे पर्याप्त मतभेद है। लेकिन माघ के बाद "तिलकमंजरी" नामक सुप्रसिद्ध ग्रन्थ के रचयिता महाकवि धनपाल के राजस्थान–निवासी होने के सुनिश्चित प्रमाण हमे मिलते है। धनपाल यद्यपि धारानगरी के निवासी ब्राह्मण तथा राजा भोज (११०० ई०) की सभा के पंडितों मे से थे। पर भोज राजा द्वारा "तिलकमंजरी" ग्रन्थ को अग्नि-समर्पण कर दिये जाने पर क्षुब्ध होकर वे मारवाड़

[illegible] के सांचोर नामक स्थान में आकर रहने लगे। इनके अतिरिक्त लगभग १०वीं शती से यहां सुप्रसिद्ध [illegible] जैनमुनियों की लेखनी से अनेकानेक संस्कृत ग्रन्थ प्रसूत हुए और प्रत्येक युग में होते रहे हैं। इनमें से निम्नलिखित मुख्य हैं।

१. '[illegible]' के रचयिता मेवाड़ निवासी [illegible]।

२. सुविख्यात दार्शनिक जैनाचार्य हरिभद्रसूरि (चित्तौड़)।

३. '[illegible]' की उपाधि से विभूषित जिनदत्त सूरि।

४. १५वीं शती के '[illegible]' के रचयिता [illegible] सूरि।

इनके अलावा अन्य कई जैन-विद्वानों के [illegible] जैन [illegible] में सुरक्षित हैं, [illegible]

[illegible]

होती है—(१) परंपरा का अनु[illegible] नयी विधाओं की प्रतीक्षा। इस युग में प्रा[illegible] प्रचलित साहित्य शैलियों पर विद्वानों ने [illegible] बनाईं—टीका, काव्य, इतिहास, नीति, धर्म, [illegible] गद्याख्यान, तथा अनुवाद और सुन्दर [illegible] गये। राजस्थान प्रान्त के विभिन्न राज्यों के [illegible] अपने २ क्षेत्र में सीमित रहकर भी [illegible] पर लिखते रहे। जयपुर इनकी प्रमुख [illegible] रही है, अन्य राज्यों (तत्कालीन रजवाड़ों) में प्रायः यह शृंखला बनी रही है, उनका [illegible] परिचय प्रस्तुत है।

सन् १८८८ से १९२० ई० में लगभग [illegible] में सवाई माधोसिंहजी राज्यासीन रहे। वे [illegible] के सेवक व गंगा और गोपाल के भक्त थे। [illegible] राज्यकाल में जहां एक ओर पं० लक्ष्मीनाथ [illegible] द्राविड़, पं० कृष्णशास्त्री तथा दुर्गाप्रसाद द्विवेदी [illegible] "दूर्वाशंसियों का इतिहास" लिखा, [illegible] पं० लक्ष्मीनाथ शास्त्री द्राविड़ ने "[illegible]" [illegible] पं० दुर्गाप्रसाद द्विवेदी ने, जो [illegible] [illegible]

[illegible]

रखती हैं। पं० मधुसूदन रचित–वेदों का विज्ञान भाष्य, वैदिक कोश तथा इन्द्रविजय काव्य आदि काफी उपादेय एवं सुन्दर कृतियां हैं। वैद्यजी के भाई पं० हरिवल्लभजी ने भी 'जयनगरपंचरंगलोचनोल्लास' ग्रन्थ लिखा। इनके साथ ही पं० शिवदत्त दाधीच तथा श्री केवलरामजी ज्योतिषी के नाम भी उल्लेखनीय हैं।

साहित्य-लेखन की इस परंपरा मे दो व्यक्तियो के नाम विशेषतः उल्लेखनीय हैं जिनकी वरद लेखनी कई दशकों की अथक साधना के बाद आज भी अनवरत गति से सृजन-पथ पर अग्रसर है, काल की दुर्दम्य शक्ति भी जिसे कुंठित नही कर पाई है। वे महामना सुकृती रचनाकार हैं—महामहोपाध्याय पं० गिरधर शर्मा चतुर्वेदी तथा भट्ट श्री मथुरानाथ शास्त्री।[1] पं० गिरधर शर्मा आज भी राजस्थान के वरिष्ठ साहित्यकारो मे अग्रगण्य हैं और भारतीय दर्शन तथा संस्कृति के साथ २ वैदिक वाङ्मय के अद्वितीय विद्वान् हैं। आपके द्वारा लिखित 'प्रमेय–पारिजात', 'विधवा धर्म मीमांसा' आदि अनेक ग्रंथ विद्वत्समाज के लिए वरदान तुल्य है। भट्ट मथुरानाथ शास्त्री के नाम के साथ छोटे–बड़े लगभग २० ग्रंथो की सूची सम्पृक्त है, जिनमे से प्रत्येक उनकी पारगामी विद्वत्ता का परिचायक है। संस्कृत भाषा पर भट्टजी का पूर्ण अधिकार है और सरल सुबोध भाषा मे प्रसादपूर्ण एवं ललित रचना करने मे वे सिद्धहस्त है। संस्कृत के प्राचीन छंदो के अतिरिक्त उन्होंने ब्रजभाषा के दोहा चौपाई आदि प्रायः सभी छंदों पर, उर्दू भाषा के बजनो पर और लोक शैली के लावनी आदि की तर्जों पर संस्कृत मे विपुल साहित्य का सृजन किया है। रसगंगाधर, काव्य प्रकाश तथा कादम्बरी की विद्वत्तापूर्ण टीकाओं के अतिरिक्त साहित्य–वैभव, जयपुर वैभव, गोविंद वैभव तथा भारत वैभव जैसे विशुद्ध साहित्यिक काव्यों के आप जन्मदाता हैं। भावी इतिहास भट्टजी को एक युगांतरकारी साहित्य-स्रष्टा के रूप मे सम्मानित करेगा। संस्कृत-साहित्य-भंडार की श्रीवृद्धि मे आपका योगदान अमूल्य है। आपके सुयोग्य पुत्र श्री कलानाथ शास्त्री, जो स्वयं एक समर्थ संस्कृत कवि हैं, भट्टजी की इस परंपरा को अक्षुण्ण रखेंगे, ऐसी आशा है।

इनके अतिरिक्त पण्डित मोतीलाल शास्त्री वैदिक साहित्य के अपूर्व विद्वान् थे। गीता-भाष्यकार के रूप में तथा शतपथ ब्राह्मण के अनुवादक के रूप में उनकी प्रसिद्धि है। उनके ज्येष्ठ भ्राता पं० रमानाथ शास्त्री के ग्रंथो में धार्मिकता तथा काव्यात्मकता का सुन्दर संगम मिलता है। स्तुति पारिजात, रामलीला, छांदोग्योपनिषद् भाष्य आदि आपके प्रसिद्ध ग्रंथ हैं। श्री हरि शास्त्री भक्ति सम्बन्धी मुक्तक काव्यों के रचयिता हैं। जयपुर के संस्कृत कॉलेज के श्री चन्द्रशेखर द्विवेदी, गंगाधर द्विवेदी आदि अनेक विभूतियों ने अपनी सुललित कृतियों से संस्कृत-साहित्य की श्रीवृद्धि की है। जैनाचार्यों में मुनि जिन विजय जी, पं० गुणलाल जी तथा पं० चैनसुखदास जी के नाम विशेष स्मरणीय हैं।

जोधपुर में श्री विश्वेश्वरनाथ रेऊ ने ऐतिहासिक ग्रंथ "आर्य विधानम्" लिखा। पं० नित्यानन्द शास्त्री लिखित "रामचरिताब्धि रत्नम्" रामचरित पर लिखा हुआ बड़ा सुन्दर काव्य है। आज भी वहां आचार्य जगदीश झा एवं पं० मणिशंकर द्वारा बाल संस्था में सुन्दर साहित्य का सर्जन हो रहा है। बीकानेर मे पं० विद्याधर शास्त्री ने "हरिनामामृतम्" नामक वर्णनप्रधान सुन्दर काव्य लिखा। उनकी लेखनी ने कई विशेष एवं और काव्य की

1. विशेष के लिए द्रष्टव्य–आगरकर रिसर्च इन्स्टीट्यूट व शार्दूल रिसर्च इन्स्टीट्यूट की रिपोर्ट्स

अपभ्रंश साहित्य और उसकी मुख्य प्रवृत्तियाँ

लेखक—डॉ० हरीश, एम. ए. डी. फिल, हिन्दी विभाग, महाराजा कालेज, जयपुर

अपभ्रंश साहित्य का परिवार बड़ा विशाल है। इस साहित्य का बहुत बड़ा अंश अभी जैन-अजैन भंडारों में सुरक्षित है। अब जैन भंडारों की पर्याप्त शोध हो रही है। अतः इस साहित्य की समृद्धि में उत्तरोत्तर वृद्धि होती जा रही है, नहीं तो शोध के अभाव में एक बार प्रसिद्ध जर्मन विद्वान् पिशल को कहना पड़ा था कि "अपभ्रंश का विपुल साहित्य खो गया है।" वास्तव में उस समय सम्यक् शोध की कठिनाइयां चरम सीमा पर थी। साथ ही जैनी लोग भी अपने भंडारों को दिखाना अपना अपमान समझते थे। सौभाग्यवश अब ऐसी बात नहीं है। राजस्थान, गुजरात, दिल्ली, जयपुर, नागौर, बीकानेर तथा जैसलमेर के भंडारों में अपभ्रंश की अनेकों कृतियां मिली और मिलती जा रही हैं। डा० हीरालाल जैन ने कारंजा के जैन भंडार में उपलब्ध अनेक कृतियों की सूचना देकर तथा उनमें से कुछ का सम्पादन करके अपभ्रंश भाषा में विरचित साहित्य की सम्पन्नता को निर्भ्रांत सिद्ध कर दिया है। अपभ्रंश के इस असाधारण साहित्य की रक्षा करने का सारा श्रेय जैन भंडारों को है।

अपभ्रंश भाषा के साहित्य का उद्भव यद्यपि विद्वानों ने चौथी-पांचवी शताब्दी से सं० १००० तक निर्धारित किया है परन्तु वास्तव में इस साहित्य का सिंहावलोकन करने पर यह ज्ञात हो जाता है कि उद्भवकाल में उपलब्ध रचनाएं बहुत पुष्ट प्रतीत नहीं होती। अपभ्रंश साहित्य के परिशीलन के लिए इसके इतिहास को दो कालों में विभक्त किया जा सकता है।

१. प्रारंभिक काल (सन् ५०० ई० से ८०० ई० तक)

२. स्वर्णकाल (सन् ८०० ई० से १५०० ई० तक)।

यद्यावधि, ५ वीं से ८ वीं शताब्दी का अपभ्रंश साहित्य ठीक से उपलब्ध नहीं हो पाया है। इसका तात्पर्य यह नहीं है कि इस काल में साहित्य रचना हुई ही नहीं अपितु इसके लिए एक जीवट पूर्ण शोध की अपेक्षा है। ऐसी स्थिति में ८ वीं से १५ वीं शताब्दी का उपलब्ध साहित्य ही हमारे अध्ययन का आधार बन जाता है। यो तो अपभ्रंश साहित्य सारे देश में लिखा गया, परन्तु विशेष रूप से इसका सृजन राजस्थान, गुजरात, मगध और महाराष्ट्र में ही अधिक हुआ। इस साहित्य का विभाजन विभिन्न प्रदेशों की दृष्टि से रख कर इस प्रकार किया जा सकता है :

(१) राजस्थान, मालवा और गुजरात में विरचित अपभ्रंश साहित्य।

(२) महाराष्ट्र में विरचित अपभ्रंश साहित्य।

(३) मगध तथा मिथिला में विरचित साहित्य।

(४) उत्तरी प्रदेशों में विरचित अपभ्रंश साहित्य।

हम अपने प्रस्तुत लेख में राजस्थान के अपभ्रंश साहित्य पर ही प्रकाश डालेंगे। यों तो अपभ्रंश साहित्य १८ वीं शताब्दी तक रचा जाता रहा है, परन्तु राजस्थान में विरचित यह साहित्य अपभ्रंश के स्वर्णकाल की अनुकृति है। अतः सं० १००० से

वीं शताब्दी तक राजस्थान में अपभ्रंश की
स्थिति रही इसी पर प्रस्तुत रूप से यहां विचार
ला जा रहा है। १५ वीं शताब्दी तक राजस्थान
न साहित्य रचना की दृष्टि से विशाल प्रदेश
ा है। अतः इस काल में गुजरात तथा मालवा
इन्य प्रदेश अपभ्रंश कवियों का साहित्य भी आ
ता है। प्रस्तुत निबंध में अधिकतर अपभ्रंश के उन्हीं
वियों के साहित्य की चर्चा है जो इन प्रदेशों में
कर साहित्य सृजन करते रहे। इस समस्त
हित्य को पश्चिमी अपभ्रंश का विशिष्ट साहित्य
न जा सकता है।

अपभ्रंश के प्रबंध तथा खण्ड काव्यों में

प्रबंधात्मकता

राजस्थान के अपभ्रंश काव्यों में अनेक प्र
तथा खंड काव्य विद्यमान हैं। संस्कृत और प्रा
के प्रबंध काव्यों ने राम और कृष्ण के जीवन
काव्य का आधार बना कर प्रबंध काव्य लिखा।
महाभारत और पुराण इन कवियों के आदर्श
रहे। ठीक इसी प्रकार अपभ्रंश ने प्राकृत का अनु
गमन किया। इन प्रबंधों में मौलिक कथाओं
भी मौलिक रूप से आता है। ये जन

कसौटी मे देखने पर, इनमे नायक, वर्णन, लक्ष्य, तथा वैविध्य, रस और अन्य सभी बातो का सम्यक् निर्वाह मिलता है परन्तु थोडे-थोडे परिवर्तन के साथ। यो मूल मे इनके वर्णन क्रम, काव्य पद्धतियो घटना विन्यास के आधारभूत तत्वो मे पर्याप्त समानता है, परन्तु साहित्य की इस संक्रातिकालीन स्थिति ने महाकाव्य को लडखडा दिया। उसमे जीवनोत्पन्न संस्कृत की तुलना मे कम हो गया। संस्कृत की ह्रासोन्मुख प्रकृति का प्रभाव पडे बिना नही रह सका और यही कारण है कि वही कथा रूढिया, वही काव्य रूढिया, वर्णन क्रम, परंपरित घटनाक्रम और कथा का तारतम्य वही बना रहा। फिर भी उन सबके अतिरिक्त इनमे धार्मिकता, प्रचार तथा जन समाज मे सम्पर्क होने के कारण अपभ्रंश के प्रबधो मे लोक जीवन का संस्पर्श सौन्दर्य, आध्यात्मिकता, कथात्मकता-ललित, सौन्दर्य प्रवाह सरलता और शृंखलाबद्धता आदि गुण विद्यमान हैं। अपभ्रंश साहित्य पर शोध करने वाले विद्वानो ने यद्यपि अपभ्रंश काव्यो की प्रबंधात्मकता और साहित्यिक सौन्दर्य को संस्कृत के काव्यो की अपेक्षा दुर्बल कह कर संदेह की दृष्टि मे देखा है, परन्तु वास्तव मे बात ऐसी नही है। इस साहित्य का मन्थन अभी तक ठीक मे हो नही पाया है। संस्कृत की परम्परायें तो उनमे अवश्य सुरक्षित है परन्तु ८ वी से १३ वी शताब्दी के इस संक्रांति काल मे ऐसे सुन्दर महाकाव्यो, खडकाव्यो, रोमांटिक-काव्यों तथा मुक्तक काव्य ग्रंथो का मिलना हमारे प्राचीन साहित्य की अपूर्व सम्पन्नता का द्योतक है। वर्णन परम्परा काव्यात्मकता, छन्द, अलंकार, रस किसी भी दृष्टि मे ये काव्य कमजोर नहीं पड़ते। हाँ संस्कृत काव्यो मे तुलना करने पर इनमें अपेक्षा-कृत दोष-दर्शन का आरोप भले ही लगाया जाता रहा हो।[1] कथा और चरित ग्रंथो में स्वयंभू का पउम चरिउ, हरिवंश पुराण, महापुराण। धनपाल की भविसयत्त कहा।[2] हेमचद्र कृत त्रिषष्ठि शलाका चरित, धवल कवि का हरिवंश पुराण[3]। अजैन कृतियो मे पृथ्वीराज रासो के अपभ्रंश के अंश, रयधू के पद्म या बलभद्र पुराण[4], यश:कीर्ति का पाण्डवपुराण, हरिवंश पुराण[5] तथा श्रुतकीर्ति का हरिवंश पुराण, पुष्पदंत का जयकुमार चरिउ, जसहर चरिउ[6], वीर कवि का जंबूस्वामी चरिउ[7], नयनंदी का सुदंसण चरिउ[8], कनकामर का करकंड चरिउ, सागरदत्त का जम्बू स्वामी चरिउ[9], प्राकृत के सुरसुन्दरीय चरिउ, अपभ्रंश के अंश, देवचंद के सुलोचना चरिउ[10] और वर्धमान सूरि का वर्धमान चरित, धाहिल कवि का पउमसिरि चरिउ[11], श्रीधर कवि का पासणाह चरिउ, सुकुमाल चरिउ, तथा सुलोचना चरिउ[12], कवि सिंह रचित पज्जुण्ण

१. देखिए अपभ्रंश साहित्य - डा. हरिवंश कोछड़, पृ. ५३-५४। २ जो. सी. एम. संपादक श्री सी. डी. दलाल और गुणे तथा हिन्दी के विकास मे अपभ्रंश का योग पृ० २२६, डा. नामवरसिंह।

३. दिगम्बर जैन मंदिर बड़ा तेरह पंथियो का भंडार-जयपुर मे सुरक्षित तथा इलाहाबाद यूनिवर्सिटी स्टडीज भाग १, सन् १९२५ मे प्रो० हीरालाल जैन का निर्देशन।

४. आमेर शास्त्र भण्डार जयपुर। ५. अपभ्रंश साहित्य डा० कोछड़, पृष्ठ ११८-१२०

६. वही, पृष्ठ १२०-१२६ ७. आमेर शास्त्र भण्डार—जैन शोध संस्थान, जयपुर।

८. देखिये—अपभ्रंश प्रकाश पृष्ठ २० देवेन्द्रकुमार—प्रकाशक वर्णी ग्रन्थमाला, काशी।

९. अपभ्रंश प्रकाश पृष्ठ २६-३० देवेन्द्रकुमार एम ए, प्रकाशक वर्णी ग्रन्थमाला, काशी।

१०. वही ११. अपभ्रंश साहित्य, पृष्ठ २०७-२०६ डा० कोछड़ १२. वही, आमेर भण्डार, जयपुर

...रिउ (प्रद्युम्न चरित) हरिभद्र विरचित सनत्कुमार चरित[1] लखमदेव कृत णेमिणाह चरिउ, बाहुबली चरिउ, तथा यशःकीर्ति का चंदप्पहं चरिउ[2] तथा ...तू का सुदर्शन चरित, सन्मति नाथ चरित तथा ...० वी शताब्दी में अपभ्रंश का मृगांक लेखा चरित तथा और भी अनेक अप्रकाशित रचनायें, ...तक की उपर अपभ्रंश के साहित्य की शोध ... उपलब्ध हुई है और जो अपभ्रंश की प्रौढ ...उत्कृष्टता की प्रतीक है। प्रस्तुत लेख की पृष्ठ...

धनपाल की अपभ्रंश हेमचंद्र की अपभ्रंश से प्राचीन है।[3] अतः ये स्वयंभू के बाद तथा हेमचंद्र से पूर्व हुए। धनपाल ने स्वयं को—

'सरसइबहुलद्ध महावरेण'[4] (सरस्वती का ...) कहा है। धनपाल का प्रसिद्ध ग्रंथ है 'भविसयत्त कहा'

'भविसयत्त कहा' एक व्यापारी पुत्र भविष्यदत्त की कथा है। इसको तीन भागों में बांटा जा सकता है। पहले भाग में उसकी सम्पत्ति का वर्णन है। ...

(२) नखशिख :—

(१) अप्पल दल दीहर पायहिं,
नहमणि विरण करंबिय छायहिं।
जंघोरय गुज्झंतर पासइं,
सुणियरयइं णिभीण परिवासइं।
पोतंतर अविभग पयासइं,
तं पिहसंति पिहिय परिहासइं।
विपहु नियंब बिंबु सोहिल्लउ,
रेहइ अद्धाइद्ध कडिल्लउ।
रोमावलि बलि अगि विहावइ,
चिय पिपीलि रिछोलिव नावइ।
रमणादाम निबंधणु सोहइ,
किंकिणि रणझणतु मणु मोहइ।
समसवकलु वडियनु बिमु मज्झइ,
मज्जइ करय मुट्ठिहि गिज्झउ।
तिवलि तरंगइं नाहीमंडलू,
नं आवत्ता इद्ध महाजलु।
पीणुन्नय निबिडइं थणवट्टइ,
निभिभ दइं हारावलि वट्टइं।
मारइ माला कोमल—बाहउ,
रयणु-वलय-केऊर सणाहउ[१]।

(विस्तार भय से हिन्दी भावार्थ नहीं दिया जा सका)

(३) विरोधाभास अलंकार :—

असिरिव सिरिवत्त सअन वरंग वरंगणावि,
मुद्धवि सवियार रंजण मोह निरंजणावि[२]।

धनहीन (असिरि) होते हुए भी वह श्रीमती (सिरिवत्त) थी। श्रेष्ठ अंगो वाली न होते हुए भी वह सजल वराग (वरांगना) अस्नेहयुक्त अंगो वाली थी। मुग्धा (मूर्ख) होते हुए भी विचारवान थी। निरंजन होने पर भी वह (रंजण मोह) अर्थात् अंजनरहित आंखो वाली अत्यन्त मोहक लगती थी।

(४) भाषा में सुभाषितों और लोकोक्तियों की भरमार

(१) कि घिउ होइ विरोलिए पाणिए (क्या पानी का मथन करने से घी हो सकता है)?

(२) अणइच्छियइ होंति जिम दुक्खइं सहसा परिणावंति तिह सोक्खइं (जैसे स्वेच्छा से दुःख आते हैं वैसे ही सहसा सुख भी आ जाते हैं)।

(३) अहो चंद हो जोन्ह कि मइल्लजइ दूरि हुए" (क्या दूरी होने पर भी चंद्रमा की ज्योत्स्ना मैली की जा सकती है)?

इसी प्रकार के अनेक प्रभावपूर्ण भावात्मक स्थलों का उल्लेख किया जा सकता है। यह कृति निर्वेद (शांत रस) में समाप्त हुई है।

धनपाल द्वितीय—

ये ११ वीं शताब्दी के कवि थे और मालवा में हुए। महाराज भोज के सभापंडित थे। धनपाल संस्कृत, प्राकृत तथा अपभ्रंश के प्रकाण्ड पंडित थे।

इन्होंने अपभ्रंश में प्रसिद्ध ग्रंथ 'तिलक मंजरी' लिखा। धनपाल ने "महावीर उत्साह"[३] एक गीत

---

१. वही ग्रन्थ, पृ० ३२–३३   २ वही, (११, ६.१८)
३. देखिये–पुरुषोत्तमदास टण्डन अभिनन्दन ग्रन्थ, पृष्ठ ५०६–५११, लेखक का "आदिकालीन हिन्दी जैन साहित्य की प्राचीनतम कृति, सत्यपुरीय महावीर उत्साह और उसकी भाषा शैलीगत विशेषता," सन् १९६० ।

ी राजस्थान मे सांचोर सत्यपुर में लिखा। यह
ग्रार अपभ्रंश का है परन्तु अपभ्रंश की प्रवाहात्म-
कता इसमें देखी जा सकती है। धनपाल पर स्वतंत्र
रूप से अन्य प्रकाश डाला जायगा।

रइधू :—

राजस्थान के अपभ्रंश कवि रइधू ने अनेक
काव्यकृतियों का सृजन किया। इन्होंने २६९ कडवकों
में पद्मपुराण लिखा है। ग्रंथ में राम कथा है, जो
…ियों में विभक्त है। जयपुर के आमेर भंडार में

इन काव्यों के अतिरिक्त अनेक 'लोक…
राजस्थान के अपभ्रंश साहित्य में उपलब्ध हैं,
जिनमें कुछ प्रमुख इस प्रकार हैं:—

१. नयनंदी-सुदंसण चरिउ सं० ११०० (…
काव्य) सकलविधि विधानकाव्य सं० ११००।

२. सिंह पज्जुण्ण चरिउ (प्रद्युम्न चरित) सं०
१२०० लगभग (खंड काव्य)

३. हरिभद्र सनत्कुमार चरिउ सं० १२१६

४. लखमदेव णेमिणाह चरिउ, सं० १४…

जाहे कंठ रेहत्तय णिज्जिय,
संख समुद्दे बुड्डु णलज्जिय।
जाहे अहरराएं विद्दुमगुणु,
जित्तउ जेणधरइ कठिणत्तणु।
जाहे दंसण कंतिए जियणिम्मल,
सिप्पिहें ते पइट्ठ मुत्ताहल।
जाहे सास सुरहि भणउ पावइ,
पवणु तेण उव्विं विरुधावइ।
जाहे विमल मुह इंद समाणए,
णिवडण खप्पर व महि भासइ।

(सदमण चरिउ [1])

(यदि ब्रह्मा उसकी रोमावली रूपी लोहे की श्रृंखला की सृष्टि नही करता, तो उसके मनोहारी और गुरु स्तनो के भार से कटि प्रदेश अवश्य ही भग्न होता। जिसकी सुन्दर भुजाओं को देख कर सुन्दर हाथ रूपी पल्लवों की अशोक वृक्ष भी इच्छा करता है। जिसके स्वर माधुर्य को सुन कर कोकिला श्यामा हो गई। जिसके कंठ की रेखाओं ने शंख को लज्जित कर समुद्र मे डूबने को बाध्य कर दिया। जिसके होठों के रक्तिम राग से पराजित होकर विद्रुम कठोर हो गया। जिसके दांतों की निर्मल कांति से विजित होकर निर्मल मुक्ता सीपियों मे छिप गये। जिसके मुखचंद्र के सामने, चन्द्रमा एक खप्पर की भांति लगता है।)

सकल विधिनिधान काव्य

भाषा के अनुरणन और विविध वाद्यों की ध्वनियां देखिए—

धुण कट किमट किमटर भट धुम
धु धुंद धंद नरखे अगुभि भि
कुं गिडं ड भा भें धोगिर धुधागिर
धुरट मट किटि किय क्यि क्रियात्र
हथ हप्पु खुखुखु खु किय किय
थरि थरि थरि रि थरि तूथ तूथ
तथु तथु तथु तथु
देते तदे तंद तंदागु
चिरिरिचिरिरि चिरि थरि चिरि रावहि
भं भ भिणि किटि भिणि किटि भावहि
ठईं ठईं ठईं ठईं ठग ढुगे ढुगे डगहि
भि भि भि ना ना संजोगहि [2]

ऐसे शब्द केवल मात्र कवि का शब्द चमत्कार प्रदर्शित करते हैं।

२. पज्जुण्ण चरिउ (प्रद्युम्न चरित [3]) (सिंह)
"भय मंथु करिणि जहि वेए धंडु,
खर दंडु सरोरुहु णगि गंसंडु।

---

१. नयनंदी राजस्थान (मालवा) के धारा नगर निवासी कवि हैं तथा संदसण चरिउ अपभ्रंश की अप्रकाशित कृति है। इसकी तीन हस्तलिखित प्रतियां आमेर भण्डार में श्री कस्तूरचन्द कासलीवाल की संरक्षता में विद्यमान है। यह काव्य १२ संधियों का है तथा इसका रचनाकाल स० ११०० है।

२. यह भी अप्रकाशित काव्य है। कृति की प्रति आमेर भण्डार में सुरक्षित है। देखिये पन्ना ३५, १२-१३

३ यह काव्य अप्रकाशित है। १५ संधियों में पूरा हुआ है। प्रतियां आमेर शास्त्र भण्डार जयपुर में हैं। देखिये प्रति संख्या (पृष्ठ १३१-१३८)। इसके सिद्ध और सिंह दोनों नाम मिलते हैं। रचनाकाल १२ वीं शती का पूर्वार्द्ध है।

जाहे कंठ रेहत्तय णिज्जिय,
संख समुद्दे बुड्डु णिलज्जिय।
जाहे अहरराएं विद्दुमगुणु,
जित्तउ जेणधरइ कठिणत्तणु।
जाहे दंसण कंतिए जियणिम्मल,
सिप्पिहें ते पइट्ठ मुत्ताहल।
जाहे सास सुरहि मणउ पावइ,
पवणु तेण उब्बिं विहयावइ।
जाहे विमल मुह इंद णयणमए,
णि वडउण खप्परं व महि भामइ।

(सदगण चरिउ [1])

(यदि ब्रह्मा उसकी रोमावली रूपी लोहे की शृंखला की सृष्टि नहीं करता, तो उसके मनोहारी और गुरु स्तनों के भार से कटि प्रदेश अवश्य ही भग्न होता। जिसकी सुन्दर भुजाओं को देख कर सुन्दर हाथ रूपी पल्लवों की, अशोक वृक्ष भी इच्छा करता है। जिसके स्वर माधुर्य को सुन कर कोकिला श्यामा हो गई। जिसके कंठ की रेखाओं ने शंख को लज्जित कर समुद्र में डूबने को बाध्य कर दिया। जिसके होठों के रक्तिम राग से पराजित होकर विद्रुम कठोर हो गया। जिसके दांतों की निर्मल कान्ति से विजित होकर निर्मल मुक्ता सीपियों में छिप गये। जिसके मुखचंद्र के सामने चन्द्रमा खप्पर की भांति लगता है।)

सकल विधिविधान काव्य

भाषा के अनुरणन और विविध वाद्यों की ध्वनियां देखिए—

डुण कट झिपट झिपटर पट गुन
सु सु द भट नच्चे धगुभि धि
धु गिड डु धा धें धोगिद डुधागिद
डुरट मट विटि झिप झिप झियान
हप हपु गुगुगु गु झिप झिप
थरि थरि थरि रि थरि तूप तूप
तगु तगु तगु तगु
देने नदे मट तडगु
विरिरिविरिरि विरि थरि विरि तावहि
भं भ भिणि विटि भिणि किटि भावहि
टहुं टहुं टहुं टहुं धग डुगे डुगे करहिं
भि भि भि भं भं समोगहि [2]

ऐसे शब्द केवल मात्र कवि का शब्द चमत्कार प्रदर्शित करते हैं।

२ पज्जुण्ण चरिउ (प्रद्युम्न चरित [3]) (सिंह)

"भय मंगु करिलि जहि वेद कंदु,
भर दंडु सरोरहु ससि मंयंदु।

1. नयनंदी राजस्थान (मालवा) के धारा नगर निवासी कवि हैं तथा सुदंसण चरिउ अपभ्रंश की अप्रकाशित कृति है। इसकी तीन हस्तलिखित प्रतियां आमेर भण्डार में श्री कस्तूरचन्द कासलीवाल की संरक्षता में विद्यमान हैं। यह काव्य १२ संधियों का है तथा इसका रचनाकाल सं० ११०० है।
2. यह भी अप्रकाशित काव्य है। कृति की प्रति आमेर भण्डार में सुरक्षित है। देखिये पन्ना ३५, १२-१३
3. यह काव्य अप्रकाशित है। १५ संधियों में पूरा हुआ है। प्रतियां आमेर शास्त्र भण्डार जयपुर में है। देखिये प्रति संख्या (पृष्ठ १३१-१३८)। इसमें सिद्ध और सिंह दोनों नाम मिलते हैं। रचनाकाल १२ वीं सदी का पूर्वार्द्ध है।

जाहे कंठ रेहत्तय णिज्जिय,
संख समुद्दे बुड्डु णलज्जिय ।
जाहे अहरराएं विद्दुमगुणु,
जित्तउ जेणधरइ कठिणत्तणु ।
जाहे दंसण कंतिए णियणिम्मल,
सिप्पिहें . से पइट्ठ मुत्ताहल ।
जाहे सास सुरहि मणउ पावइ,
पवणु तेण डब्बिं विद्धावइ ।
जाहे विमल मुह ह द मयामए,
णि वडण खप्परं व महि भामइ ।

(सुदंसण चरिउ [1])

(यदि सत्ता उसकी रोमावली रूपी लोहे की शृंखला की सृष्टि नहीं करता, तो उसके मनोहारी और पुष्ट स्तनों के भार से कटि प्रदेश अवश्य ही भग्न होता। जिसकी सुन्दर भुजाओं को देख कर सुन्दर हाथ रूपी पल्लवों की अशोक वृक्ष भी इच्छा करता है। जिसके स्वर माधुर्य को सुन कर कोकिला श्यामा हो गई। जिसके कंठ की रेखाओं ने शंख को लज्जित कर समुद्र में डूबने को बाध्य कर दिया। जिसके होठों के रक्तिम राग से पराजित होकर विद्रुम कठोर हो गया। जिसके दांतों की निर्मल कांति से विजित होकर निर्मल मुक्ता सीपियों में छिप गये। जिसके मुखचंद्र के सामने चन्द्रमा एक खप्पर की भांति लगता है।)

सकल विधिविधान काव्य

भाषा के अनुरणन और विविध वाद्यों की ध्वनियां देखिए—

दुण कट त्रियट किमटर मट मुण
सु सु द मंद नवे वग्गुभि भि
धुं गिड दु भा भें धोंगिड दुधांगिड
दुरट मट विटि त्रिय त्रिय त्रियात्र
हय हणु गुगुगु सु त्रिय त्रिय
थरि थरि थरि रि थरि स प स प
तणु तणु तणु तणु
देने तदे मंद गदगणु
विरिरिविरिरि विरि थरि विरि रावहि
झं झ झिणि विटि झिणि विटि भावहि
टहुं टहुं टहुं टहुं ठण दुगे दुगे वगहि
झि झि झि थों थों संजोगहि [2]

ऐसे शब्द केवल मात्र कवि का शब्द चमत्कार प्रदर्शित करते हैं।

२. पज्जुण्ण चरिउ (प्रद्युम्न चरित [3]) (सिंह)

"मय संधु चरित्तु जहिं वेर गंडु,
खर दंडु सरोरुहु मनि मसंडु।

१. नयनंदी राजस्थान (मालवा) के धारा नगर निवासी कवि हैं तथा सुदंसण चरिउ अपभ्रंश की अप्रकाशित कृति है। इसकी तीन हस्तलिखित प्रतियां आमेर भण्डार में श्री कस्तूरचन्द कासलीवाल की संरक्षता में विद्यमान हैं। यह काव्य १२ संधियों का है तथा इसका रचनाकाल सं० ११०० है।

२. यह भी अप्रकाशित काव्य है। कृति की प्रति आमेर भण्डार में सुरक्षित है। देखिये पन्ना ३५, १२-१३

३ यह काव्य अप्रकाशित है। १५ संधियों में पूरा हुआ है। प्रतियां आमेर ... भण्डार जयपुर में है। देखिये प्रति संख्या (पृष्ठ १३१-१३८)। इसके सिद्ध और ... मिलते हैं। रचनाकाल १२ वीं शती का पूर्वार्द्ध है।

उठि रूपे कछु बिरहु भरीर,
घरहरात तनु अरु धार नीर।
रहु तनु तन्तु [illegible] हराय,
कर हाथ्नी पीरे [illegible] हरार्य।
रत [illegible] [illegible] [illegible],
मरि [illegible] [illegible] [illegible]।
[illegible] [illegible] [illegible] हरार्य,
[illegible] [illegible] अरि [illegible]।
[illegible] [illegible] [illegible] कहु [illegible],
मूर्छित [illegible] [illegible] [illegible]।

[illegible]

हृदय को प्रभावित करना, रोना मचाना, मूर्छित होना, उठ उठ कर हार तोड़ना, बातों को न कहना [illegible] अधिक [illegible] को [illegible] आदि सब वर्ण-व्यापारों से उनकी स्वकीय स्थिति का उल्लेख होता है। शरीर क्या ही रोमांचक है। रोम-[illegible] नारी की पीड़ा धरती से [illegible] [illegible] [illegible] है) इस उद्धरण में नारी-विरह वर्णन को [illegible] मार्मिकता हुआ है।

८ [illegible] [illegible] ([illegible] [illegible])
([illegible] देव [illegible])

त्मक समृद्धि का अनुमान लगाया जा सकता है। इन कृतियों का कलापक्ष अपने ही ढंग का है। इनमे महापुराण, पुराण, चरित काव्य, रूपक काव्य, कथात्मक शृंगारिक खण्डकाव्य, संधिकाव्य, रास आदि अनेक काव्य रूप हैं। इनकी कलात्मकता, ऐतिहासिकता तथा काव्य रूपों पर सामान्य जानकारी इस प्रकार दी जा सकती है। इनको इन प्रबन्ध काव्यों की सामान्य विशेषताएं कही जा सकती हैं। वे इस प्रकार हैं :—

राजस्थान के अपभ्रंश काव्यों का कलापक्ष

राजस्थान के अपभ्रंश के प्रबन्ध काव्यों का कलापक्ष छंद, अलंकार, शब्द–चयन भाषा आदि सभी रूपों मे पुष्ट हैं। ये कवि कला के प्रति सच्चा प्रेम करते थे। यहाँ तक कि इन जैन कवियों को इतना अधिक प्रेम था कि अनेक अजैन कवियों के ग्रन्थों को भी इन कवियों ने अपने भंडारों मे सुरक्षित रखा है। बौद्ध रचनाएं, अब्दुल रहमान का सन्देश रासक तथा बीसलदेव रास ग्रन्थ इस बात के ज्वलंत उदाहरण हैं।

राजस्थान की अपभ्रंश काव्य पद्धतियों मे दोहा-चौपाई पद्धति को प्राधान्य मिला है। अपभ्रंश काव्यों मे तोटक, दोधक, अडिल्ल, डोमा, दुहुलिया, पद्धडिया, रास, कुण्डली, वस्तु, घत्ता, रड्डा, रासाकुल, धादाकुलक, पज्झटिका, खंडक भुजंगप्रयात आदि अनेक छंद मिलते हैं। यही नहीं, छंदों और वर्णन की काव्य पद्धतियों ने हिन्दी साहित्य के आधुनिक काल तक को प्रभावित किया है।

इसी प्रकार कला पक्ष मे स्वाभाविक अलंकारों, शब्द चयन की अनुप्रासात्मकता, नादात्मकता तथा ध्वन्यात्मकता का अनुरणन द्रष्टव्य है। जैनियों ने ही नहीं, अनेक अजैन कवियों ने भी राजस्थान तथा राजस्थान से बाहर अपभ्रंश में काव्य रचना की है। अतः इनका कलापक्ष भावपक्ष मे निर्बल नहीं है। चंद की चारण शैली में अपभ्रंश के अंशों से इस भाषा की समता का परिचय मिलता है।

राजस्थानी अपभ्रंश काव्यों में काव्य रूप

आदिकालीन हिन्दी जैन साहित्य मे जिस प्रकार पद्धतियों और काव्य रूपों में वैविध्य मिलता है ठीक उसी प्रकार राजस्थान के अपभ्रंश काव्यों में भी काव्य रूपों का वैविध्य मिल जाता है। चरित, रास, आख्यान, चर्चरी, कहा, संधि, लोक–कथा–काव्य आदि अनेक काव्य रूप मिलते हैं। अपभ्रंश के इन काव्य रूपों का मूल इन पुरानी हिन्दी के काव्य-रूपों में दृष्टिगोचर होता है। यद्यपि इनमें से अनेक काव्य रूप अपभ्रंश में नहीं मिलते परन्तु उनमें प्रकारान्तर से इनका सम्बन्ध स्पष्ट हो जाता है। काव्य पद्धतियों मे भी अपभ्रंश की इन वर्णन पद्धतियों का विकास पुरानी हिन्दी की रचनाओं के मूल में हैं। रूपककाव्य, संधिकाव्य तथा चरित–काव्यों में ये काव्य रूप स्पष्ट द्रष्टव्य हैं। मुक्तक काव्यों में गीति, स्तोत्र, स्तवन, दोहा, सज्झाय आदि अनेक काव्य रूप मिल जाते हैं। इस तरह वैविध्य मुक्तक काव्य रूप अपभ्रंश की इन कृतियों में देखने को मिलते हैं। काव्य रूपों का यह वैशिष्ट्य अपभ्रंश की अपनी विशेषता है। पुरानी हिन्दी में जो अनेकों प्रकार के काव्य रूप मिलते हैं उनमें वैविध्य प्रस्तुत करने की प्रेरणा अपभ्रंश के इन्हीं काव्य रूपों ने दी है।

राजस्थान के अपभ्रंश की ऐतिहासिकता

राजस्थान की अपभ्रंश रचनाएं अपनी ऐतिहासिकता का प्रतिपादन भी करती हैं। इन रचनाओं के द्वारा तत्कालीन भाषा, समाज और संस्कृति के सभी रूपों का ऐतिहासिक महत्व स्पष्ट हो जाता है। अपभ्रंश की कथा कविता, वस्तु विन्यास, [illegible]

और सौन्दर्य की मार्मिकता और भोग–जीवन से [illegible] तथा संस्कृत की सभी परंपराओं का विशेष [illegible] इन रचनाओं में मिलता है। [illegible] का [illegible] से पुष्पित रहा। भाषा के [illegible] में [illegible] शैली [illegible] के [illegible] में [illegible] करने का [illegible] प्राप्त कर गया। यद्यपि वर्णन की [illegible] वर्णन की

पुष्पित हो रही थी। [illegible] विलास तर्क जाल में उलझा था, संस्कृत काव्य हृदय के सहज उच्छ्वास को छोड़कर पांडित्य प्रदर्शन तथा [illegible] चमत्कारिक [illegible] में [illegible] था। [illegible] का [illegible] था। रस के [illegible], [illegible] ध्वनियों के [illegible] थे। प्रकृति चित्रण, नाम परिगणन और विस्तार से बोझिल था। [illegible] कर्मभूमि संकुचित होकर [illegible] हो रही थी। राजदरबार के उनके वैभव की [illegible] पुष्पित हो रहा था। और

है परन्तु यहां हम प्रमुख रूप से तीन कवियों के मुक्तक काव्यों को सोदाहरण प्रस्तुत कर रहे हैं। ये कवि राजस्थान के अपभ्रंश भाषा के मुक्तक काव्यकारों में प्रतिनिधि कहे जा सकते हैं। ये निम्नांकित है :—

१. जोइन्दु—परमप्पयासु (परमात्म प्रकाश)[1]
२. मुनिरामसिंह—पाहुड़ दोहा[2]
३. देवसेन सावय धम्म दोहा

इसके अतिरिक्त जिनदत्त के उपदेश रसायन रास (सं० ११००-१२) हेमचंद्र के प्राकृत व्याकरण (१२००) के अपभ्रंश के दोहे, सोमप्रभाचार्य का कुमारपाल प्रतिबोध (सं० ११६५) तथा मेरुतुङ्ग के प्रबन्ध चिंतामणि(सं० १३६१) आदि के अपभ्रंश अंशों को भी इस प्रसंग में विस्मृत नहीं किया जा सकता। साथ ही अपभ्रंश के हरिषेण के कथाकाव्य धम्म परिक्खा सं० १०४४ और राजस्थान में विरचित अपभ्रंश की अनेक गद्य कृतियों पर भी अपेक्षित रूप से विस्तार में लिखा जा सकता है। जिस पर हम यथावसर अन्यत्र विचार करेंगे। यह सब सम्पत्ति राजस्थान में उत्पन्न कवियों की निधि है। यहां उक्त तीनों कवियों के काव्य कौशल के कतिपय चुने हुए उदाहरण प्रस्तुत कर रहे हैं। ये सब मुक्तक काव्य हैं तथा इनके वर्ण्य विषय आध्यात्मिक, उपदेश प्रधान तथा शांत रस पूर्ण हैं।

जोइन्दुः—१. परमप्पयासु (परमात्म प्रकाश) योगिन्दु
२. योगसार

परमप्पयासु

(१) अप्पु जि तिं त्थु म जाहि जिय अप्पु जि गुरउ म सेवि
अप्पु जि देउ म चिंति तुहुं अप्पा विमलु मुएवि (१ ९५)

(निर्मल स्वभाव वाले उस परमात्मा को छोड़कर तीर्थ यात्रा, गुरुसेवा तथा किसी भी अन्य देवता को सोचना व्यर्थ है)

(२) जसु हरिणच्छी हियवडए तसु णवि बंभु वियारि
एक्कहिं केम समंति वढ बे खंडा पडियारि (१.१२१)

(जिसके हृदय में मृगनयनी सुंदरी निवास करती है वह ब्रह्मविचार कैसे कर सकता है ? एक ही म्यान में दो तलवार कैसे रह सकती हैं ?)

(३) जे दिट्ठासूरुग्गमणि ते अत्थवणि ण दिट्ठ
तें कारणि वढ धम्मु करि धणि जोव्वणि कउ तिट्ठ (२.१३२)

1. देखिये परमप्पयासु-योगिन्दु—डा० आदिनाथ नेमिनाथ उपाध्ये द्वारा सम्पादित सन् १९३७ रचनाकार का समय श्री राहुलजी ने १००० ई० माना है। ये हेमचन्द्र के पहले हुए थे। इनका जन्म स्थान राहुलजी ने राजस्थान माना है। जोइन्दु जैन मुनि थे। इनके दोनों ग्रन्थों के वर्ण्य विषय ज्ञान, समाधि, अलख निरंजन, आत्मा परम तत्व, निरंजन योग, पंथ, पोथी पत्रो, निन्दा शून्यध्यान, योगभावना आदि हैं।

2. देखिये पाहुड़ दोहा, सम्पादक—डा० हीरालाल जैन कारंजा सीरीज सन् १९३३। मुनि रामसिंह राजस्थान के थे। राहुलजी इनका समय सन् १००० ई० मानते हैं। इनके वर्ण्य विषय-जगगुरु, निरंजन साधना, आत्मा, पाखण्ड खण्डन, गुरु महिमा, बाह्याडम्बर निंदा आदि है। डा० हीरालाल जैन इनको राजपूताने का मानते हैं। साथ ही देखिये—'हिन्दी काव्य धारा, श्री राहुल सांकृत्यायन-किताब महल इलाहाबाद सन् १९४५

और [illegible] की [illegible] और [illegible]
[illegible]
[illegible] है।
[illegible]
[illegible]
[illegible]
[illegible] की
[illegible]
[illegible]
[illegible] की

[illegible] हो रही थी। [illegible]
[illegible]
[illegible]
[illegible]
[illegible]
[illegible]
विषय में [illegible] था। [illegible]
[illegible]
हो रही थी। [illegible]
[illegible] में [illegible]
[illegible]

है परन्तु यहां हम प्रमुख रूप से तीन कवियों के मुक्तक काव्यों को सोद्धरण प्रस्तुत कर रहे हैं। ये कवि राजस्थान के अपभ्रंश भाषा के मुक्तक काव्यकारों में प्रतिनिधि कहे जा सकते हैं। ये निम्नांकित हैं :—

१. जोइन्दु—परमप्पयासु (परमात्म प्रकाश)[1]

२. मुनिरामसिंह—पाहुड दोहा[2]

३. देवसेन सावय धम्म दोहा

इसके अतिरिक्त जिनदत्त के उपदेश रसायन रास (सं० ११००–१२) हेमचंद्र के प्राकृत व्याकरण (१२००) के अपभ्रंश के दोहे, सोमप्रभाचार्य का कुमारपाल प्रतिबोध (सं० ११६५) तथा मेरुतुङ्ग के प्रबन्ध चिंतामणि (सं० १३६१) आदि के अपभ्रंश ग्रंथों को भी इस प्रसंग में विस्मृत नहीं किया जा सकता। साथ ही अपभ्रंश के हरिषेण के कथाकाव्य धम्म परिक्खा सं० १०४४ और राजस्थान में विरचित अपभ्रंश की अनेक गद्य कृतियों पर भी अपेक्षित रूप से विस्तार से लिखा जा सकता है। जिस पर हम यथावसर अन्यत्र विचार करेंगे। यह सब सम्पत्ति राजस्थान में उत्पन्न कवियों की निधि है। यहां उक्त तीनों कवियों के काव्य कौशल के कतिपय चुने हुए उद्धरण प्रस्तुत कर रहे हैं। ये ग्रंथ मुक्तक काव्य हैं तथा इनके वर्ण्य विषय आध्यात्मिक, उपदेश प्रधान तथा शांत रस पूर्ण हैं।

जोइन्दु:—१. परमप्पयासु (परमात्म प्रकाश) योगिन्दु

१. योगसार

परमप्पयासु

(१) अप्पा जि तिं सु म जाहि जिय अप्पा जि गहम म सेवि
अप्पा जि देउ म चिंति तुहुं अप्पा विमलु मुएवि (१ ६५)

(निर्मल स्वभाव वाले उस परमात्मा को छोड़कर तीर्थ यात्रा, गुरुसेवा तथा किसी भी अन्य देवता को सोचना व्यर्थ है)

(२) जसु हरिणच्छी हियवडए तसु णवि बंभु वियारि
एक्कहिं केम समंति वड वे खंडा पडियारि (१.१२१)

(जिसके हृदय में मृगनयनी सुंदरी निवास करती है वह ब्रह्मविचार कैसे कर सकता है? एक ही म्यान में दो तलवार कैसे रह सकती हैं?)

(३) जं दिट्ठ सूरुग्गमणि ते अत्थवणि न दिट्ठ
तें कारणि वड धम्मु करि धणि जोव्वणि कउ णिट्ठ (२.१३२)

---

१. देखिये परमप्पयासु-योगिन्दु—डा० आदिनाथ नेमिनाथ उपाध्ये द्वारा सम्पादित सन् १९३० रचनाकार का समय श्री राहुलजी ने १००० ई० माना है। ये हेमचन्द्र के पहले हुए थे। इनका जन्म स्थान राहुलजी ने राजस्थान माना है। जोइन्दु जैन मुनि थे। इनके दोनों ग्रन्थों के वर्ण्य विषय ज्ञान, समाधि, अलख निरंजन, आत्मा परम तत्त्व, निरञ्जन योग, पथ, पोथी पत्रों, निन्दा शून्यध्यान, योगभावना आदि हैं।

२. देखिये पाहुड दोहा, सम्पादक—डा० हीरालाल जैन कारंजा सीरीज सन् १९३३। मुनि रामसिंह राजस्थान के थे। राहुलजी इनका समय सन् १००० ई० मानते हैं। इनके वर्ण्य वि[illegible] निरंजन साधना, आत्मा, पाखण्ड खण्डन, गुरु महिमा, बाह्याडम्बर निन्दा [illegible] हीरालाल जैन इनको राजपूताने का मानते हैं। साथ ही देखिये—'हिन्दी काव्यधारा'-[illegible] किताब महल इलाहाबाद सन् १९४५

(२) मणु यत्तणु दुल्लहु लहिवि भोयहं पेरिउ जेण
इंघण कज्जे कप्पयरु मूल हो खंडिउ तेण
(वही दोहा २१६)

(मनुष्य दुर्लभ तन को प्राप्त करके भी जिसने उसको भागो मे लिप्त किया उसने ईंधन के लिए कल्पवृक्ष का समूलोच्छेदन कर डाला, ऐसा समझो)

इस प्रकार उक्त उदहरणो मे हम इन कृतियों का शिल्प समझ सकते हैं। अपभ्रंश की इन रचनाओ की मुख्य प्रवृत्तियों का विश्लेषण संक्षेप में इस प्रकार किया जा सकता है।

राजस्थान के अपभ्रंश मुक्तक काव्य

उक्त मुक्तक रचनाओं मे आध्यात्मिक रचनाएं प्रमुख हैं। इनमे कवि ने संसार की नश्वरता, मुक्ति का स्वरूप, आत्म-दर्शन, आत्म-ज्ञान, कर्म–विपाक, विषय निवृत्ति और कैवल्य का सुन्दर वर्णन किया है। ऐसी रचनाओं में जो इन्दु का परमात्म प्रकाश और मुनिरामसिंह कृत पाहुड दोहा प्रमुख कृतियां हैं। आध्यात्मिक उपदेशो के साथ जैन कवियो ने आत्म-शुद्धि और सदाचार को भी पूर्ण महत्व दिया है। नीति और सदाचार से ही मनुष्य जितना आत्म-निष्ठ साधक बनकर मनोविकारो को दूर कर सकता है उतना तप और तितिक्षा तथा वाह्याडंबर मे नहीं। ऐसी रचनाओ मे देवसेन का "सावय धम्म दोहा" और जिनदत्त सूरि का "काल स्वरूप कुलक" और उपदेश रसायन रास प्रमुख है। इन ग्रन्थो का मुख्य उद्देश्य धर्म विवेचन करना तथा प्रचार है।

उपदेश प्रधान रचनाओ मे दूसरा स्थान स्तोत्र, स्तवन सम्बन्धी रचनाओ का आता है। अपभ्रंश के अंधिदय, अभय देवसूरि कृत जिहुयण स्तोत्र तथा धर्मसूरि स्तुति ऐसी ही रचनाएं है। जिनदत्त सूरि की चर्चरी भी प्रशंसित दान तथा स्तुति है।

अपभ्रंश मे रची कुछ उपदेश प्रधान रचनाएं बौद्धो और सिद्धो की भी मिलती हैं। जिनमे केवल बौद्ध धर्म के सिद्धान्तो का प्रतिपादन है। बौद्धो ने इन मुक्तक रचनाओ मे कर्मकाण्ड रूढ़िवादी दृष्टिकोण तथा वाह्याडम्बर की खूब निन्दा की है। इन्हीं बौद्धो में दोहाकोश, चर्यापद तथा कश्मीर दर्शन पर लिखे कुछ शैवो के सिद्धान्त भी मिलते हैं। जिनमे कई फुटकर पदो मे विषय वैविध्य, भावो की तीव्रता तथा अभिव्यंजना की क्षमता मिलती है। इस प्रकार जैन अजैन दोनो अपभ्रंश प्रधान काव्यों, मे उपदेश प्रधान, धर्म प्रधान, नीति तथा सदाचार प्रधान भावनाएं ही मिलती हैं। ये सब उपदेश जनता को सदाचारी बनाने के लिए जनता की ही भाषा मे लिखे गये थे। अतः जैन कवियो ने अपभ्रंश भाषा को ही अपनाया। क्योंकि अपभ्रंश उस समय जन साधारण की बोलचाल की भाषा थी।

जैन कवियो ने जितने भी काव्य लिखे हैं उन सभी मे धर्म प्राणधारा के रूप मे विद्यमान है। उदाहरणार्थ चरित काव्यो को ही लें इनमे कथा-त्मकता, प्रेमाख्यान, लोक गाथाएं तो रहती ही हैं, कवियो ने उनमे स्थानीय रंग, समाज की परम्पराएं, प्रेम तथा लोक कथानको की रंगीनियों द्वारा सरस बना डाला है। धर्म उनके मूल में है। प्रेरणा के रूप मे यह धर्म इन रचनाओ मे विद्यमान है। कहीं कहीं तो यह धर्म रचनाओ की पृष्ठभूमि तक बन जाता है। कर्म–विपाक, पुनर्जन्म आदि जैन दर्शन की विविध धाराओ का जन समाज मे प्रचार करने के लिए जैन कवि काव्यो मे अनेक स्थलो मे उपदेश इतना दीर्घ पड़ता है। उपदेश और जैन दर्शन के दे इस उसे कवि मे प्रचारक बना देते हैं। डा० कोछड़ ने अपभ्रंश की रचना का उद्देश्य जैनियों के धर्म–विशेष का सिद्धान्त दर्शन होना है। इसी को सिद्ध करने के लिए जैन कवि इतिहास के इतिवृत्त

[illegible] करके उसे [illegible] में [illegible] देते थे। [illegible] सिद्धान्त की पुष्टि के लिए जैन कवि [illegible] का [illegible] लेता है। [illegible] साहित्य की रचना की प्रवृत्ति [illegible] धर्म प्रचार है। जैन [illegible] है [illegible]।

[illegible] कहा जा सकता है, [illegible] जा सकता है कि [illegible] जैन कवि के [illegible] के [illegible] तथा [illegible] सिद्धान्तों की [illegible] कवि ने [illegible] और [illegible] के आधार पर [illegible] है।

[illegible] प्रकार [illegible] के [illegible] है। वे [illegible] प्रकार [illegible] ही [illegible] का साहित्य [illegible] है। [illegible] किए जा सके हैं।

[illegible]

जैन कवियों ने महाकृति और [illegible] देश ऊंचा उठाता है। अतः उनके [illegible] आदर्श बन गये हैं।

[illegible] के [illegible] भी [illegible] गयी है। [illegible] में इनको राजस्थान में [illegible] के [illegible], [illegible] के लिए [illegible] तथा [illegible] पर प्रकाश डाला है। इनमें [illegible] कवियों का [illegible] भी नहीं किया जा सकता है। [illegible] के [illegible] राजस्थानी कवियों का साहित्य [illegible] में [illegible] है। राजस्थान के [illegible] साहित्य के [illegible] के लिए [illegible] की बहुत बड़ी [illegible] है। [illegible] है कि वे [illegible] इस साहित्य को [illegible] सके।

जैन-साहित्य

लेखक—श्री अगरचन्द नाहटा

राजस्थानी जैन साहित्य बहुत विशाल एवं विविध है। विशाल इतना कि परिमाण में मेरी धारणा के अनुसार चारणों के साहित्य से भी बाजी मार लेगा। उसकी मौलिक विशेषताएं भी कम नहीं हैं। उसकी सबसे प्रथम विशेषता यह है कि वह जन भाषा में लिखा है। अतः वह सरल है। चारणों आदि ने जिस प्रकार शब्दों को तोड़—मरोड़ कर अपने ग्रंथों की भाषा को दुरूह बना लिया है वैसा जैन विद्वानों ने नहीं किया है। इसीलिए वह बहुत अधिक लोगों द्वारा सुगमता से समझा जा सकता है। उसकी दूसरी विशेषता है जीवन को उच्च-स्तर पर ले जाने वाले प्राणवान् साहित्य की प्रचुरता। जैन मुनियों का जीवन निवृत्ति-प्रधान था। वे किसी राजाओं आदि के आश्रित नहीं थे, जिससे कि उन्हें बढ़ाकर चाटुकारी वर्णन करने की आवश्यकता होती। युद्ध में प्रोत्साहित करना भी उनका धर्म नहीं था और शृंगार रसोत्पादक साहित्य द्वारा जनता को विलासिता की ओर अग्रसर करना भी उनके आचार-विरुद्ध था। अत. उन्होंने जनता के उपयोगी और उनके जीवन को ऊंचे उठाने वाले साहित्य का ही निर्माण किया। चारणों का साहित्य वीररस प्रधान है और उसके बाद शृंगार रस का स्थान आता है। भक्ति रचनाएं भी उनकी कुछ प्राप्त हैं। पर जैन साहित्य नैतिकता और धर्म प्रधान है और शान्त रस की मुख्यता तो सर्वत्र पाई जाती है। जैन विद्वानों का उद्देश्य जन-जीवन में आध्यात्मिक जागृति फूंकना था। नैतिक और धर्मपूर्ण जीवन ही उनका चरम लक्ष्य था। उन्होंने अपने इस उद्देश्य के लिए कथानकों को विशेष रूप से अपनाया। तत्वज्ञान सूक्ष्म एवं कठिन विषय है। साधारण जनता की वहां तक पहुंच नहीं और न उसमें उनकी रुचि व रस हो सकता है। उनको तो दृष्टान्तों के द्वारा धर्म का मर्म समझाया जाय, तभी उनके हृदय को वह धर्म छू सकता है। कथा—कहानी सबसे अधिक लोक-प्रिय होने के कारण उनके द्वारा धार्मिक तत्वों का प्रचार शीघ्रता से हो सकता है। इस बात को ध्यान में रखते हुए उन्होंने दान, शील, तप और भावना एवं इसी प्रकार के अन्य धार्मिक व्रत-नियमों का महात्म्य प्रगट करने वाले कथानकों को धर्म-प्रचार का माध्यम बनाया। इसके पश्चात् जैन तीर्थंकरों एवं आचार्यों के गुणवर्णनात्मक एवं ऐतिहासिक काव्यों का नम्बर आता है। इससे जनता के सामने महापुरुषों के जीवन-आदर्श सहज रूप से उपस्थित होते हैं। इन दोनों प्रकार के साहित्य से जनता को अपने जीवन को सुधारने में एवं नैतिक तथा धार्मिक आदर्शों से परिपूर्ण करने में बड़ी प्रेरणा मिली।

राजस्थानी—जैन—साहित्य के महत्व के सम्बन्ध में दो बातें उल्लेखनीय हैं—प्रथम : भाषा-विज्ञान की दृष्टि से उसका महत्व है, द्वितीय : ११ वीं से १५ वीं शताब्दी तक के जैनेतर राजस्थानी स्वतन्त्र ग्रन्थ उपलब्ध नहीं हैं। इसकी पूर्ति राजस्थानी-जैन—साहित्य करता है। प्रारंभ से राजस्थानी भाषा के विकास के सूत्र राजस्थानी-जैन-साहित्य द्वारा ही प्राप्त होते हैं, क्योंकि जब से राजस्थानी भाषा में ग्रन्थों का निर्माण प्रारम्भ हुआ तब से

बालावबोध, हेम व्याकरण भाषा टीका, सारस्वत बालावबोध।

२. छंद:—पिंगल शिरोमणि, दूहाचन्द्रिका, राजस्थानी गीतो का छन्द ग्रन्थ, वृत्त रत्नाकर बालावबोध।

३. अलंकार:— वाग्भट्टालंकार बालावबोध, विदग्धमुखमंडन बालावबोध, रसिकप्रिया बालावबोध।

४. काव्य टीकाएं.—भर्तृहरिशतक, भाषा–टीकात्रय, अमरु शतक, लघुस्तव बालावबोध, किसन रुक्मणी वेलि की ६ टीकाएं, धूर्तारव्यान कथासार, कादम्बरी कथासार।

५. वैद्यक:—माधवनिदान टब्बा, सन्निपात कलिका टब्बाद्वय, पथ्यापथ्य टब्बा, वैद्यजीवन टब्बा, शतश्लोकी टब्बा, फुटकर प्रयोगों के संग्रह तो राजस्थानी भाषा में हजारों पत्र प्राप्त हैं।

६. गणित:— लीलावती भाषा चौपाई, गणित सार चौपाई।

७. ज्योतिष —लघुजातक वचनिका, जातक कर्मपद्धति बालावबोध, विवाहपटल बालावबोध, भुवन दीपक बालावबोध, चमत्कार चिन्तामणि बालावबोध, मुहूर्त चिन्तामणि बालावबोध, विवाहपटल भाषा, गणित साठीसो, पंचांग नयन चौपाई, भुवन दीपिका चौपाई, अंगफुरकन चौपाई, वर्षफलाफल सज्झाय।

हीरकलश—राजस्थानी दोहों आदि में यह ज्योतिष सम्बन्धी अत्यन्त महत्वपूर्ण ग्रन्थ है। इसकी रचना सं० १६५७ में हीरकलश नामक खरतर गच्छीय जैन यति ने की है। पद्यसंख्या १००० के लगभग है। इसे साराभाई मणिलाल नवाब ने गुजराती विवेचन के साथ अहमदाबाद से प्रकाशित भी कर दिया है।

८ नीति:—चाणक्यनीतिटब्बा, पंचाख्यान—चौपाई। मबलाक अनमोहल्यनी यह फारसी ग्रन्थ 'नीति प्रकाश' के नाम से मुहणोत संग्रामसिंह रचित उपलब्ध हुआ है जो बहुत ही महत्त्वपूर्ण है। पंचाख्यान का गद्य मे अनुवाद भी मिला है। जोधपुर से 'परम्परा' मासिक मे यह प्रकाशित हो रहा है। एक दोहा सार भी प्राप्त है जो बहुत सुन्दर है।

६. ऐतिहासिक:—मुंहणोत नैणसी की ख्यात तो राजस्थान के इतिहास के लिए अनमोल ग्रन्थ है। यह सर्व विदित है। मुहणोत नैणसी जैन श्रावक थे। इन्होंने मारवाड़ के गांवों के सम्बन्ध में एक और भी महत्त्वपूर्ण ग्रंथ लिखा है, जिसकी प्रति उनके वंशज वृद्धराज जी के भतीजे बुधराज जी मुहणोत के पास है। इस ग्रंथ को प्रकाश मे लाना अत्यन्त आवश्यक है। नैणसी की ख्यात का कुछ अंश मूल रूप मे पं० रामकर्णजी आसोपा ने दो भागों में प्रकाशित किया है। अभी उसका एक सुन्दर संस्करण राजस्थान पुरातत्त्व मंदिर मे छपा है।[1] जिसका सम्पादन श्री बदरी प्रसाद जी साकरिया कर रहे हैं। राठौड़ अमरसिंह की बात भी समकालीन जैन-यति लिखित मेरे संग्रह मे है। जिसे मैंने 'भारतीय विद्या' में प्रकाशित कर दिया है। राठौड़ों की ख्यात और वंशावलियां जैन यतियों द्वारा लिखित प्राप्त हैं। जोधपुर के गांवों की उपज संबंधी हकीकत जयपुर के श्रीपूज्यजी के पास है, जिसकी प्रतिलिपि मेरे संग्रह में है। बाड़मेर के यति हस्तचन्द्रजी के संग्रह मे वेगडगच्छीय जिनसमुद्रसूरि रचित राठौड़-वंशावली मैंने देखी थी। कुमारपाल रासो, वस्तुपाल चौपाई, जैत्रचन्द्र प्रबंध चौपाई आदि ग्रन्थ विशुद्ध ऐतिहासिक तो नहीं, पर लोकप्रवाद के आधार में रचित अर्द्ध ऐतिहासिक हैं। कर्मचन्द्रवंश प्रबन्ध चौपाई में बीकानेर के इतिहास की कई बातें लिखित होती हैं। जैनगजलें, भावनाएं, नीसाणी, देश नगर वर्णन सम्बंधी

1. प्रथम भाग प्रकाशित हो चुका है। द्वितीय छप रहा है। शीघ्र ही प्रकाशित होगा।

हैं जिनमे तीन अपूर्ण हैं। उनमे भी विविध विषयों का वर्णन बहुत ही मनोहर है। इनका परिचय मैं स्वतन्त्र लेख द्वारा राजस्थान भारती मे प्रकाशित कर चुका हूं। मुनि जिनविजयजी से १७ वी शताब्दी के सुकवि सूरचन्द्र रचित पदैक-विंशति नामक ग्रन्थ की एक अपूर्ण प्रति प्राप्त हुई है। ग्रन्थ संस्कृत मे है। पर प्रासंगिक वर्णन राजस्थानी गद्य मे ही दिया है, जो बहुत ही महत्त्वपूर्ण है। ग्रन्थ की पूर्ण प्रति प्राप्त होने पर इसका महत्व भली भांति ही विदित हो सकेगा। पद्य मे दुष्काल वर्णन, शीत-ताप वर्णन आदि रचनाएं प्राप्त हैं। नगर-देश वर्णनात्मक पद्यबद्ध रचनाएं भी विद्वानो की अनेक मिलती हैं।

(१८) सम्वाद:—सम्वादसंज्ञक जैन रचनाओं मे बहुत सो का सम्बन्ध जैन धर्म से नही है। इनमे कवियो ने अपनी सूझ एवं कवि प्रतिभा का परिचय अच्छे रूप में दिया है। मोती कपासिया सम्वाद, जीभ-दांत सम्वाद, आंख-कान सम्वाद, उद्यम-कर्म सम्वाद, यौवन-जरा सम्वाद, लोचन-काजल सम्वाद आदि रचनाएं उल्लेख योग्य हैं।

(१९) देव-देवियों के छंद:—लोकमान्य कई यक्ष, शनिश्चर आदि ग्रह, त्रिपुर आदि देवो की स्तुतिरूप छन्द, जैन यतियो द्वारा रचित बहुत से मिलते है। उन देवी-देवताओं का जैन-धर्म मे कोई सम्बन्ध नही है। रामदेव जी, पाबूजी, सूरजजी और अमरसिंह जी आदि की स्तुतिरूप भी कई रचनाएं मिलती हैं।

(२०) लोकवार्ताओं संबन्धी ग्रन्थ:—लोक साहित्य के संरक्षण मे जैन विद्वानो की सेवा अनुपम है। सैकडों लोक वार्ताओं को उन्होंने अपने ग्रन्थो मे संग्रहित की है। एक २ लोकवार्ता के सम्बन्ध मे संस्कृत एवं लोक भाषा मे उनके बहुत से ग्रन्थ उपलब्ध है। बहुत सी लोक वार्ताएं तो यदि वे न अपनाते तो विस्मृति के गर्भ मे कभी की विलीन हो जाती। यहां राजस्थानी भाषा मे रचित फुटकर लोक वार्ताओं की सूची दी जा रही है—

अंबड चरित्र	कर्त्ता	विनयसमुद्र, रूपचन्द्र
कर्पूर मंजरी	,,	मतिसार
गोरा बादल	,,	हेमरत्न, लब्धोदय
चन्दनमलयागिरि	,,	भद्रसेन, क्षेमहर्ष, जिनहर्ष, सुमतिहंस, यशोवर्धन.
ढोला मारु	,,	कुशल लाभ
नंदबत्तीसी चौपाई	,,	सिंह कुशलगणि जिनहर्ष
पनहरवी बनाराम	,,	वीरचन्द
पंचाख्यान	,,	वच्छराज, हीरकलश
प्रियमेलक	,,	समयसुन्दर, मानसागर
भोज-चरित्र	,,	मालदेव, सारंग, हेमानन्द, कुशलधीर।

(देखें ना. प्र. पत्रिका मे प्रकाशित मेरा लेख)

विक्रम चरित्र—महाराजा विक्रम की दान-शीलता, पराक्रम एवं बुद्धिचातुर्य लोक साहित्य मे सबसे अधिक प्रचारित है। भारतीय प्रत्येक भाषा मे विक्रम संबंधी लोक कथाओं का प्रचुर साहित्य उपलब्ध है। मरु-गुर्जर भाषा में भी करीब ४५ रचनाएं प्राप्त हो चुकी हैं। यहां उनमें थोड़ी सी राजस्थानी रचनाओं का उल्लेख किया जा रहा है। विशेष जानने के लिए मेरे विक्रमादित्य संबंधी जैन साहित्य (विक्रम स्मृति ग्रन्थ में) देखना चाहिये।

ग्रन्थ नाम	कर्त्ता नाम
विक्रम चौपाई,	हेमानन्द, मुनिमाल
पंच दण्ड चौपाई,	विनयसमुद्र, धर्मसमुद्र, मालदेव, लाभवर्धन
सिंहासन बत्तीसी,	ज्ञानचन्द्र, हीरकलश, विनयसमुद्र, हीरकलश, विनयलाभ

मारवाड़ बोर्ड बीकानेर, राजगीर, [illegible], लाम वर्णन।

और सभा सम्बन्धी वर्णित ग्रन्थ यह है :—

धीरतरी बोर्ड,	बाबद्धरि जिन्द कुलनाथ
विद्या विलास बन्द,	हीरानंदसूरि, [illegible], [illegible], [illegible], [illegible]
[illegible]	[illegible]वार्ड, [illegible]
[illegible] बोर्ड,	[illegible]वार्ड
[illegible],	[illegible], [illegible]
[illegible] बोर्ड,	[illegible]
[illegible],	[illegible]
[illegible],	[illegible]
[illegible]	[illegible]
[illegible] बोर्ड,	[illegible]
[illegible],	[illegible]
[illegible],	[illegible]

मे "जैन गुर्जर कवियो" भाग ३ के परिशि[illegible] में पृष्ठ १८११ से २१०४ तक मे दी है। [illegible] की संख्या २१०० के लगभग है। जिसमे [illegible] के करीब तो राजस्थानी भाषाओं की है।

(२१) जैनेतरों के मान्य ग्रंथो पर [illegible] विद्वानों ने पुष्ट ग्रंथ बनाये हैं जिनका उल्ले[illegible] किया जा चुका है। देखो [illegible], [illegible] [illegible] स्वयं पुष्ट है। और भी जैनेतर ग्रं[illegible] लोकोपयोगी विषयों पर प्रचुर साहित्य [illegible] जैन यतियों द्वारा लिखा मिलता है। [illegible] कोई भी ऐसा विषय नहीं जिस पर जैन (राजस्थ[illegible] रचनाएं उपलब्ध न मिले।

राजस्थानी जैन रचनाओं की विविधता [illegible] के लिए इन रचनाओं की विविध प्रकार [illegible] पर दृष्टि डालना ही काफी होगा। भांति [illegible] [illegible] [illegible]

इन मध्यवर्ती ४०० वर्षों मे जैन विद्वानो ने निरंतर राजस्थानी मे रचना की है और वे छोटी–मोटी शताधिक सख्या मे हैं। पद्य–साहित्य के साथ २ इस समय की गद्य रचनाएं भी प्रचुर हैं। जबकि १७ वीं शताब्दी से पहले की जैनेतर गद्य राजस्थानी रचना स्वतन्त्र रूप से एक भी प्राप्त नही है। केवल अचलदास खीची री वचनिका में गद्य के थोड़े से उदाहरण मिलते हैं। जबकि इन ४०० वर्षों में करीब ५०-६० ग्रंथो के बड़े-बड़े बालावबोध राजस्थानी गद्य मे जैन विद्वानो के द्वारा निर्मित प्राप्त हैं। खरतरगच्छीय विद्वान् मेरुसुन्दर अकेले ने ही २० ग्रंथो पर गद्य में बालावबोध-भाषा टीका लिखी है। जिनका परिमाण ३०–४० हजार श्लोक के करीब का होगा। चारण आदि कवियो द्वारा ख्यातो का लेखन अकबर के समय से प्रारम्भ हुआ प्रतीत होता है। गद्य–वार्तायें तो अधिकांश १८ वी शताब्दी मे ही लिखी गई हैं।

(२) रचनाओं की संख्या पर दृष्टि डालने से भी जैनेतर राजस्थानी साहित्य के बड़े ग्रन्थ तो बहुत ही थोड़े हैं। फुटकर दोहे एवं डिंगल गीत ही अधिक है जबकि राजस्थानी जैन ग्रंथो, रास आदि बड़े २ ग्रन्थो की संख्या सैकड़ों है। दोहे और डिंगल गीत हजारो की संख्या मे मिलते हैं। उनका स्थान जैन विद्वानो के स्तवन, सज्झाय, गीत, भास, पद आदि लघु कृतियां ले लेती है, जिनकी संख्या हजारो पर है।

(३) कवियों की संख्या और उनके रचित साहित्य के परिमाण मे तुलना करने पर भी जैन साहित्य का पलड़ा बहुत भारी नजर आता है। जैनेतर राजस्थानी साहित्य निर्माताओ मे दोहो व गीत निर्माताओ को छोड़ देने पर बड़े २ स्वतन्त्र ग्रन्थ निर्माता कवि थोड़े से रह जाते हैं और उनमे से भी किसी कवि ने उल्लेखनीय ३–४ कहीं-कहीं और छोटी २०–३० रचनाओं से अधिक नहीं लिखी। राजस्थानी भाषा का सबसे बड़ा ग्रन्थ "वंश भास्कर" है। जबकि जैन कवियों में ऐसे बहुत से कवि हो गये हैं जिन्होंने बड़े २ रास हीं काफी संख्या में लिखे हैं। यहां कुछ प्रधान कवियों का ही निर्देश किया जा रहा है:—

(१) कविवर समयसुन्दर:—आप राजस्थान के महाकवि हैं। प्राकृत, संस्कृत भाषा में अनेकों रचनाएं लिखने के साथ राजस्थानी मे भी प्रचुर रचनाएं निर्माण की हैं। फुटकर स्तवन, सज्झाय, गीत आदि की संख्या तो ६०० के लगभग प्राप्त है। वैसे सीताराम चौपाई राजस्थानी का जैन-रामायण है। यह ग्रन्थ ३७०० श्लोक प्रमाण है। इसके अतिरिक्त साम्ब प्रद्युम्न चौपाई, चार प्रत्येक बुधरास, नलदमयन्तीरास, प्रियमेलक रास, पुण्यसार चौपाई, वल्कलचीरी रास, शत्रुञ्जय रास, वस्तुपाल रास, थावच्चा चौपाई, क्षुल्लक कुमार प्रबन्ध, चम्पक श्रेष्ठि चौपाई, गौतमपृच्छा चौपाई, धनदत्त चौपाई, साधुवन्दना, पुञ्जा ऋषिरास, द्रौपदी चौपाई, केशी प्रबन्ध, दानादि चोढालिया एवं क्षमा छत्तीसी, कर्मछत्तीसी, पुण्यछत्तीसी, दुःखावबर्णन छत्तीसी, सर्वयाछत्तीसी, आलोयणाछत्तीसी आदि आदि राजस्थानी मे बहुत से ग्रन्थ हैं। कुछ रचनाएं तो हमारे द्वारा प्रकाशित भी हो चुकी है।

(२) जिनहर्ष:—इनका दीक्षापूर्व नाम जसराज था। यह राजस्थानी के बड़े भारी कवि हैं। इन्होंने पूर्ववर्ती जीवन में राजस्थानी भाषा में और पीछे से पाटन चले जाने पर गुजराती मिश्रित भाषा में ५० के करीब रास एवं सैकड़ों स्तवन आदि फुटकर रचनाएं की हैं। इनमें से कई रास तो बड़े २ ग्रन्थ हैं। इसलिए समस्त रचनाओं का परिमाण एक लाख श्लोकों के करीब होगा।

"भाव-लता"

हृदयस्थली में उत्पन्न सुन्दर सुमनप्रद लतिकाओ ! तुम बुद्धि के विशाल वृक्ष पर न चढ़ो, और चढ़ो तो उतरो मत । अरे, उसके फल चखने के इच्छुक स्थूल प्राणी। उन पर चढ़ते उतरते तुम्हें निर्दयता से कुचलते संकोच न करेंगे । तुम्हारे सुमनों का आनन्द तो सुमन से नेत्रों के हित ही है । उड़ने वाले ही तुम पर चढ़ें और तुम्हारी प्रफुल्लता के स्पर्श के अधिकारी हैं । तुम्हारा आनन्द लेने वाले उड़ते ही उड़ते हैं ... दूर से देखते हैं जब तुम्हारे फल पकते हैं। भार सहित चढ़कर नीचे आने वाले स्वार्थ ... ही इच्छा से तुम्हें कुचलने लगें तो ईश्वर तुम्हारी सदा रक्षा करे।

—आ० श्यामसुन्दर त्रिपाठी, मथुरा

डिंगल साहित्य

डॉ० मोतीलाल मेनारिया, संचालक राजस्थान साहित्य अकादमी, उदयपुर

भारतीय साहित्य में राजस्थानी साहित्य (जो डिंगल साहित्य के नाम से प्रसिद्ध है) का स्थान कितने महत्व का है यह बात साहित्य-प्रेमियों से छिपी नहीं है। राजस्थानी भाषा के साहित्य में जो भाव स्फूर्ति और उद्वेग है वह केवल राजस्थान के लिए ही नहीं वरन् सारे भारतवर्ष के लिए गौरव की वस्तु है। वीर-रस की कविता तो इतनी उच्च-कोटि की बन पड़ी है कि उस तरह की कविता संसार के अन्य किसी साहित्य में मिलना दुर्लभ है। कवि सम्राट् रवीन्द्रनाथ ठाकुर को एक बार जब वीर रस की ये कविताएं सुनाई गई तब वे मंत्र-मुग्ध से हो गये और बोले—"भक्ति रस का काव्य तो भारतवर्ष के प्रत्येक साहित्य में किसी न किसी कोटि में पाया जाता है। राधाकृष्ण को लेकर हर एक प्रान्त में मंद या ऊंची कोटि का साहित्य पैदा किया है। लेकिन राजस्थान ने अपने रक्त से जो साहित्य निर्माण किया है उसकी जोड़ का साहित्य और कहीं भी नहीं मिलता।"

राजस्थान के कवियों ने अपनी कविताएँ दो प्रकार की भाषाओं में लिखी हैं, डिंगल और पिंगल। डिंगल राजस्थान की बोलचाल की भाषा राजस्थानी का साहित्यिक रूप है और पिंगल की अपेक्षा अधिक प्राचीन, अधिक साहित्य सम्पन्न तथा अधिक ओज-गुण-विशिष्ट है। इसकी उत्पत्ति अपभ्रंश से हुई है।

राजस्थानी भाषा का नाम डिंगल क्यों और कब पड़ा इस विषय में भिन्न २ विद्वानों के भिन्न २ मत हैं। पहला मत है कि "डिंगल" शब्द का असली अर्थ अनियमित अथवा गंवारू था। व्रज भाषा परिमार्जित थी और साहित्य-शास्त्र के नियमों का अनुसरण करती थी। पर डिंगल इस सम्बन्ध में स्वतंत्र थी। इसलिए इसका नाम डिंगल पड़ा[1]। दूसरे मत के विद्वानों का कहना है कि इस भाषा का प्रारम्भिक नाम 'डगळ' था पर बाद में पिंगल शब्द से तुक मिलाने के लिए शब्द 'डिंगल' कर दिया गया।[2]

तीसरे मत में डिंगल में 'ड' वर्ण बहुत प्रयुक्त होता है [यहां तक यह डिंगल की एक विशेषता कही जा सकती है] 'ड' वर्ण की इस प्रधानता को ध्यान में रख कर ही पिंगल के साम्य पर इस भाषा का नाम डिंगल रक्खा गया है। जिस प्रकार बिहारी-सकार प्रधान भाषा है उसी तरह डिंगल भी डकार शब्द प्रधान भाषा है।[3] चौथा मत—डिंगल, डिम्+गल से बना है। डिम का अर्थ डमरू की ध्वनि तथा गल का गले से तात्पर्य है। डमरू की ध्वनि रण चण्डी का आह्वान करती है तथा यह वीरों को उत्साहित करने वाली है। डमरू वीर रस के देवता महादेव का बाजा है। गले से जो कविता निकल कर डिम.

1. डॉ० एल. पी टेसीटरी [Journal of the Asiatic society of Bengal Vol X, No. 10, Page 376
2. डॉ० हरप्रसाद द्विवेदी [Parliamentary report on the operation in search of MSS of Bardic Chronicles, P. 15.
3. श्री गजराज ओझा [नागरी-प्रचारिणी पत्रिका, भाग १४, पृ० १६६]

(३) वेगड़ जिनसमुद्र सूरि:—इन्होंने भ [illegible] राजस्थानी के बहुत से रास, स्तवन आदि बनाए हैं जिनका परिमाण १०-१० हजार श्लोकों के करीब होगा। कई हमें प्राप्त मिले हैं। (देखें राजस्थानी [illegible] वर्ष, भाग ३)।

(४) खरतरगच्छीय श्रीजिनचन्द्रजी—इनका [illegible] गुरु की [illegible] हो एक ही ग्रन्थ ८० हजार श्लोक परिमाण है जो राजस्थानी का सबसे बड़ा ग्रन्थ है। [illegible] उस ग्रन्थ को [illegible] से परिमाण है [illegible] ग्रन्थों में अधिक [illegible] होगा।

(५) [illegible] गुरु के [illegible] भाषा टीका [illegible] एक ही [illegible] श्लोक परिमाण है।

[illegible]

भी बनाई है। 'किसन रुक्मणी वेलि' [illegible] लीजिये, इस पर लगभग बारह श्लोक [illegible] जो एक ही उपलब्ध है पर जैन विद्वानों द्वारा [illegible] ६-७ टीकाएं प्राप्त हो चुकी हैं, जिनमें से दो टीकाएं संस्कृत भाषा में भी हैं। इसी प्रकार [illegible] और संस्कृत के [illegible] [illegible] ग्रंथों पर [illegible] जैन विद्वानों ने राजस्थानी भाषा में टीकाएं लिखी हैं। उदाहरणार्थ:—संस्कृत के भर्तृहरि शतक, [illegible], [illegible] पर जैन कवियों द्वारा रचित राजस्थानी टीका [illegible] है। भर्तृहरि शतक की तो [illegible], [illegible] [illegible] की तीन टीकाएं [illegible] में [illegible] हैं। हिन्दी ग्रंथों में 'रसिक प्रिया' पर [illegible] और [illegible] के [illegible] राजस्थानी टीका उपलब्ध है। और [illegible]

[illegible]

आभाण शतकम् और राजस्थानी कहावतों की परम्परा

लेखक—डा० कन्हैयालाल सहल, पिलानी

राजस्थान की सभ्यता और संस्कृति को समझने में जैन विद्वानों के ग्रन्थों से बड़ी सहायता मिलती है। सं० १६९९ के पौष मास में श्रीधन-विजय गणि ने 'आभाण शतकम्' नामक ग्रन्थ की रचना राजनगर के समीप उद्भापुर नामक नगर में की थी। इसकी अनेक कहावतें ऐसी हैं जो राजस्थानी लोकोक्तियों का अनुवाद जान पड़ती हैं। तुलना के लिए यहां कुछ कहावतें उद्धृत की जा रही हैं:—

शंखः प्रदक्षिणावर्त्तः पयसा भूयसा भृत ॥४॥

अन्धकारं कृत तेन निमील्य नयने निजे ॥१०॥

गतानिधिर्यदा पूर्वं काष्ठगोर्न च बाध्यते ॥२१॥

पानीयस्य गतिर्नीचैः ॥२३॥

दुष्टायाः को निजाम्बाया.

शाकिनीत्वं प्रकाशयेत् ॥२७॥

पुच्छमिव शुनो वक्रितापुनरपि

सरलं यथा न स्यात् ॥२८॥

भूपतिः कुरुतेऽनीतिं प्रजायाः

का गतिस्तदा ? ॥३८॥

राजा मित्रं न कस्यचित् ॥३९॥

सूर्यं प्रति रजः क्षिप्तं

स्वचक्षुषि पतिष्यति ॥४२॥

स्वस्वर्णं वर्णनादाय यथा

तस्को निषेवते ? ॥४४

अयो नग्नस्य मर्त्यस्य

मस्तके मौलिबन्धनम् ॥५४॥

ऐहिकं समतासौख्यं

त्यक्त्वा कः पारलौकिकम्

कटिस्थं तनुजं यद्दूरस्थं

समीहते ॥५६॥

तृष्णे नष्टाः प्रवृत्तायां वदनाच्छादनं यथा ॥६६॥

गवादीनां यथा पाशा हस्तिनाऽरे महत्तरे ॥७३॥

दर्शने भक्षणे यद्वल्लिप्सन्ता पृथक् पृथक् ॥८५॥

विवाहे विहिते लग्नपृच्छया किं प्रयोजनम् ॥८६॥

धर्मे येनोल्लया दृष्टा न विलोक्या हि दीपकैः ॥९१॥

अविलम्ब्यं अवन्देव ॥९२॥

उप्यते यादृशं धान्यं, लूयते तादृशं जनैः ॥९५॥

करस्थकङ्कणालोके दर्पणदर्शनेन किम् ॥१०१॥

पादं प्रसारयेत्कार्ये यावत्प्रच्छादनानुगम् ॥१०२॥

सन् १८९२ के रायल एशियाटिक सोसाइटी के जर्नल में श्री मानचंद्र बिदा मास्टर ने 'Marwari Weather Proverbs' प्रकाशित करवाई।[1] इसी प्रकार Aduins Archibald ने कतिपय मारवाड़ी कहावतों को अंग्रेजी अनुवाद के साथ पाठकों के समक्ष रखा।[2]

1. Journal of the Royal Asiatic Society 1892 (pp. 253-257).
2. The Western Rajputana States by Aduins Archibald (pp. 95-97).

"भाव-लता"

हृदयस्थली से उत्पन्न सुन्दर सुमनप्रद लतिकाओ ! तुम बुद्धि के विशाल वृक्ष पर न चढ़ो, और चढ़ो तो उससे [illegible] । अरे, उसके फल चखने के इच्छुक स्वार्थी प्राणी उस पर चढ़ते उससे तुम्हें निर्दयता से कुचलते संकोच न करेंगे । तुम्हारे सुमनों का आनन्द लो सुमन ही नेत्रों के लिए ही है । उड़ने वाले ही सुन पर चढ़ने और तुम्हारी मधुरता के स्वादों के अधिकारी हैं । तुम्हारा आनन्द लेने वाले उड़ते ही उड़ते हैं [illegible] [illegible] हैं जब तुम्हारे पास आते हैं । [illegible] सहित चढ़कर नीचे आने वाले [illegible] ही इच्छा से तुम्हें कुचलने वाले हैं । ईश्वर तुम्हारी सदा रक्षा करे ।

—[illegible] त्रिपाठी, [illegible]

डिंगल साहित्य

डॉ० मोतीलाल मेनारिया, *संचालक राजस्थान साहित्य अकादमी, उदयपुर*

भारतीय साहित्य मे राजस्थानी साहित्य (जो डिंगल साहित्य के नाम से प्रसिद्ध है) का स्थान कितने महत्व का है यह बात साहित्य-प्रेमियो से छिपी नही है। राजस्थानी भाषा के साहित्य मे जो भाव स्फूर्ति और उद्वेग है वह केवल राजस्थान के लिए ही नही वरन् सारे भारतवर्ष के लिए गौरव की वस्तु है। वीर-रस की कविता तो इतनी उच्च-कोटि की बन पडी है कि उस तरह की कविता संसार के अन्य किसी साहित्य में मिलना दुर्लभ है। कवि सम्राट् रवीन्द्रनाथ टाकुर को एक बार जब वीर रस की ये कविताएं सुनाई गई तब वे मंत्र-मुग्ध से हो गये और बोले—"भक्ति रस का काव्य तो भारतवर्ष के प्रत्येक साहित्य मे किसी न किसी कोटि मे पाया जाता है। राधाकृष्ण को लेकर हर एक प्रान्त में मंद या ऊंची कोटि का साहित्य पैदा किया है। लेकिन राजस्थान ने अपने रक्त से जो साहित्य निर्माण किया है उसको जोड का साहित्य और कही भी नही मिलता।"

राजस्थान के कवियो ने अपनी कविताएँ दो प्रकार की भाषाओ मे लिखी है, डिंगल और पिंगल। डिंगल राजस्थान की बोलचाल की भाषा राजस्थानी का साहित्यिक रूप है और पिंगल की अपेक्षा अधिक प्राचीन, अधिक साहित्य सम्पन्न तथा अधिक ओज-गुण-विशिष्ट है। इसकी उत्पत्ति अपभ्रंश से हुई है।

राजस्थानी भाषा का नाम डिंगल क्यों और कब पडा इस विषय मे भिन्न २ विद्वानो के भिन्न २ मत हैं। पहला मत है कि "डिंगल" शब्द का असली अर्थ अनियमित अथवा गंवारू था। ब्रज भाषा परि-मार्जित थी और साहित्य-शास्त्र के नियमो का अनु-सरण करती थी। पर डिंगल इस सम्बन्ध मे स्वतंत्र थी। इसलिए इसका नाम डिंगल पडा[1]। दूसरे मत के विद्वानो का कहना है कि इस भाषा का प्रारम्भिक नाम 'डगळ' था पर बाद मे पिंगल शब्द से तुक मिलाने के लिए शब्द 'डिंगल' कर दिया गया।[2]

तीसरे मत से डिंगल मे 'ड' वर्ण बहुत प्रयुक्त होता है [यहां तक यह डिंगल की एक विशेषता कही जा सकती है] 'ड' वर्ण की इस प्रधानता को ध्यान मे रख कर ही पिंगल के साम्य पर इस भाषा का नाम डिंगल रखा गया है। जिस प्रकार बिहारी-सकार प्रधान भाषा है उसी तरह डिंगल भी डकार शब्द प्रधान भाषा है।[3] चौथामत—डिंगल, डिम्+गल से बना है। डिम का अर्थ डमरू की ध्वनि तथा गल का गले से तात्पर्य है। डमरू की ध्वनि रण चण्डी का आह्वान करती है तथा वह वीरो को उत्साहित करने वाली है। डमरू वीर रस के देवता महादेव का बाजा है। गले से जो कविता निकल कर डिम्

1. डॉ० एल. पी. टैसीटरी [Journal of the Asiatic society of Bengal Vol X, No. 10, Page 376
2. डॉ० हरप्रसाद द्विवेदी [Parliamentary report on the operation in search of MSS of Bardic Chronicles, P. 15]
3. श्री गजराज ओझा [नागरी-प्रचारिणी पत्रिका, भाग १४, पृ० १२२]

बदल गई है। आज की मान्यता है कि किसी भी प्रलोभन से जो कविता की जाती है उसमें वह रस चमत्कार और बल कदापि नहीं आ सकता जो स्वान्तः सुखाय कविता करने वाले कवियों की रचना में मिलता है[1]। यह कथन ठीक भी है; और शायद यही कारण है कि राज्याश्रित कवियों की कविता में आत्मानुभूति और आत्म-विस्मृति की अक्षय छाप हमें नहीं दिखाई पड़ती है। चारण भाटों में स्वान्तः सुखाय रचनाकार कवि भी हुए हैं किन्तु ऐसे कवियों की संख्या एक तरह से न होने के बराबर है।

भाषा—डिंगल कविता की भाषा प्रधान रूप से दो प्रकार की पाई जाती है। वीर गाथा काल के काव्य ग्रंथों की भाषा बहुत अस्त-व्यस्त, बेमेल है, जो डिंगल व्याकरण की दृष्टि से अशुद्ध है। लेकिन इनके बाद के ग्रन्थों तथा फुटकर कविताओं की भाषा बहुत शुद्ध, संयत एवं प्रौढ़ है। फिर भी एक बात जो डिंगल के सभी कवियों में समान रूप से पाई जाती है, वह है। शब्दों की मन-माने ढंग से तोड़-मरोड़। यह तोड़-मरोड़ इतने मन-माने ढंग से की गई है कि आज उसके मूल रूप के पहिचानने में भी भारी कठिनाई का सामना करना पड़ता है। उदाहरणार्थ—

शब्द	शुद्ध रूप
जुजटिळ	युधिष्ठिर
पथ	पार्थ
वेसा	वेश्या
भोण	भवन
कोद	कवच
ढिल्ली	दिल्ली

छंदः—डिंगल में सबसे अधिक प्रयोग दोहा, छप्पय का हुआ है। छप्पय पद्धति का अनुकरण बहुत पीछे तक होता रहा है। आधुनिक काल में भी उसका प्रभाव ज्यों का त्यों देखा जाता है। इसका मुख्य कारण यह है कि डिंगल कविता में वीर रस का प्राधान्य है, जिसका निरूपण इन छन्दों में अधिक सफलता के साथ हो सकता है। दोहा, छप्पय के अतिरिक्त मन्दाक्रान्ता, भुजंगप्रयात, मुक्तादाम, पद्धरी और तोमर आदि छन्द भी प्रयुक्त हुए हैं। फुटकर रचनाओं में गीत छंद का प्रयोग भी बहुत हुआ है, जो डिंगल साहित्य की खास विशेषता मानी जाती है। छप्पय को डिंगल में 'कवित्त' और दोहा को 'दूहो' कहते हैं। हिन्दी में दोहा छंद एक ही प्रकार का होता है पर डिंगल में इसके दूहो, सोरठियो दूहो, बड़ा दूहा और तूंबेरी दूहो चार भेद माने गये हैं।

अलंकार-डिंगल में अधिकतर वर्णनात्मक प्रधान कविता है। अतएव डिंगल कवियों ने ऐसे अलंकारों का प्रयोग विशेष रूप से किया है जो वर्ण्य विषय की सजीवता एवं भाव व्यंजना को बढ़ाने में सहायक होते हैं। इनकी फुटकर रचनाओं में अलंकारों का प्रदर्शन कम देखा जाता है। लेकिन कथाबद्ध ग्रंथों में उपमा, उत्प्रेक्षा, रूपक आदि सादृश्य मूलक अलंकारों का प्रयोग बड़े संयम के साथ किया है। अलंकारों के फेर में पड़कर भाव भ्रष्ट करने की प्रवृत्ति डिंगल कवियों में कहीं भी नहीं दिखाई पड़ती। एक अलंकार अवश्य ऐसा है जिसका प्रयोग डिंगल कवियों ने अत्यधिक मात्रा में

१. When a poet turns round and addresses himself to another person, when the expression of his emotions is tinged also by that desire of making an impression up on another mind, then it ceases to be poetry and becomes eloquence.

—John Stuart Mill

किया है वह है वयण-सगाई। इसे हम हिन्दी में अन्त्यानुप्रास का एक भेद कह सकते हैं। वयणसगाई का साधारण नियम यह है कि किसी छंद के प्रथम शब्द का प्रारम्भ जिस वर्ण से हुआ हो उसके अन्तिम शब्द का प्रारंभ भी उसी वर्ण से होना चाहिए। जैसे—

[illegible] [illegible] [illegible], [illegible] [illegible] [illegible] हुआ।
[illegible] [illegible] [illegible], [illegible] [illegible] [illegible] ॥
—दुरसाजी

रस —डिंगल काव्य में वीर रस का प्राधान्य है। शृंगार, शान्त आदि अन्य रसों का भी चित्रण मिलता है पर अपेक्षाकृत बहुत कम। डिंगल कवियों का प्रिय [illegible] वीर रस ही है [illegible] है। डिंगल के [illegible] वीर [illegible] [illegible] [illegible] [illegible] [illegible] डिंगल की वीर रस [illegible] सिद्ध [illegible]। इसका [illegible] गये हुए वीर नायक की अनुपस्थिति में उसकी वीर पत्नी भी घर पर क्या करती है। लेकिन डिंगल के कवि उन्हें न भूले। डिंगल कविता में नायक के एक हाथ में तलवार दिखाई देती है तो उसी के दूसरे पहलू में उसकी वीर पत्नी है। दोनों ही [illegible] में नायक एवं नायिका पीछे नहीं रहते। दोनों ही क्षेत्र में प्रवीणता और पूर्णता है। इन वीर क्षत्राणियों की [illegible] भावनाओं को भी उन्होंने अपनी रचनाओं में ला उतारा है जो डिंगल साहित्य को डिंगल के कवियों की अपूर्व देन है।

डिंगल काव्य में वीर रस की प्रधानता देख कर कुछ लोगों ने यह निष्कर्ष निकाला है कि डिंगल भाषा वीर रस के लिये जितनी उपयुक्त है उतनी शृंगार आदि अन्य रसों के लिए नहीं। लेकिन यह विचार भ्रमात्मक है और रस के अतिरिक्त दूसरे रसों की भी यथेष्ट अभिव्यक्ति डिंगल कविता में हुई है।

रौद्र—

" विळकुळियो वदन जेम प्रकट्यो,
मड ग्रहि धनुर पुरा सर सन्धि ॥
त्रिमन रवम धाउध छेदण काजि,
वे लखि धणी मूठि द्रिठि बन्धि ॥ "

बीभत्स—

कांपिया उर कायरां अनुभवारियो,
नाजति नीसाणे गहहे।
ऊजळिया धारा ऊबड़ियो,
परनाळें जळ रुहिर पड़ै ॥

दोष वर्णन—काव्य में मुख्य अर्थ की प्रतीति को हानि पहुंचाने वाली वस्तु को दोष कहते हैं। डिंगल में दोष ग्यारह प्रकार के माने गये हैं। अंध, छबकळ, हीन, निनंग, पागळो, जातविरुद्ध अपस, नाळ छेद, पखतूट, बहरो व अमंगळ।

संक्षिप्त इतिहास

डिंगल साहित्य को भाषा के क्रमागत विकास की दृष्टि से और उसकी साहित्यिक प्रौढ़ता को ध्यान में रखकर ६०० वर्षों का इतिहास विभाजन किया जाय तो वह तीन भागों में विभक्त हो सकता है—

(१) सं० १००० से १४०० तक आरम्भ काल

(२) सं० १४०० से १८०० तक मध्य काल

(३) सं० १८०० से १९९७ तक उत्तर काल

आरम्भ काल (सं० १०००–१४००)

डिंगल के आदि काल की सामग्री बहुत न्यून मात्रा में उपलब्ध होती है और जो है वह भी बहुत संदिग्ध और अव्यवस्थित है। इस समय डिंगल के बहुत से कवियों की गणना हिन्दी साहित्य के इतिहास लेखकों ने अपने वीर गाथा काल के कवियों में भी की है। पर इस सम्बन्ध में उन्होंने बड़ा धोखा खाया है। इसका मुख्य कारण है डिंगल भाषा से उनकी अनभिज्ञता। डिंगल भाषा में ही कुछ ऐसी विशेषता है कि वह बहुत पीछे की होते हुए भी बहुत प्राचीन दिखाई पड़ती है। वंशभास्कर के प्रत्येक प्रकाश इस कथन के प्रत्यक्ष उदाहरण हैं। ये ग्रंथ आधुनिक काल में लिखे होने पर भी भाषा से कई शताब्दियों पहले के प्रतीत होते हैं।

इस काल के मुख्य कवियों का संक्षिप्त परिचय दिया जाता है। इस विषय में नवीन शोध ग्रंथों से सहायता ली गई है।

१. दलपत विजय—इनका लिखा खुमाण-रासो नामक एक ग्रन्थ प्रसिद्ध है। ये मेवाड़ के राजा खुमाण (दूसरे) के समकालीन माने जाते हैं। कहा जाता है ये जाति के भाट थे। अगरचन्द नाहटा ने जो लेख लिखा है उसके अनुसार खुमाण ने सं० ८७० से ९०० तक राज्य किया था। अतः यही समय दलपत विजय का ठहरता है। श्री नाहटा के अनुसार दलपत विजय जाति के भाट नहीं बल्कि तपागच्छ के कोई जैन साधु थे जिन्होंने सं० १७३० से १७६० के बीच किसी समय खुमाण रासो की रचना की थी। उक्त कथन भाषा को देखते हुए ठीक ही है।

२ नरपति नाल्ह—इनकी जाति, जन्म तिथि आदि के विषय में निश्चित रूप से कुछ भी ज्ञात नहीं हो सका है। कोई इन्हें राव, कोई भाट और कोई ब्राह्मण ब्राह्मण बतलाते हैं। इनके रचे बीसलदेव रासो का स्थान हिन्दी साहित्य में बड़े महत्व का माना जाता है। इसके रचना काल के सम्बन्ध में बड़ा मतभेद है। इसकी भाषा को देख कर तो उसे १६ वीं शताब्दी से पहले का मानने को जी नहीं चाहता। डा० गौरीशंकर हीराचन्द ओझा ने हम्मीर काव्य के रचयिता नयचन्द्र सूरि (सं० १५२८) और नाल्ह का समकालीन माना है अतः दोनों के

मतानुसार नाल्ह कृत रासो का निर्माण काल सं० ११२८ के आस पास ठहरता है।[1]

बीसलदेव रासो एक वर्णनात्मक काव्य है जो १११ छन्दों में समाप्त हुआ है। इसकी भाषा बोलचाल की राजस्थानी, वर्णन बहुत साधारण तथा कथा भाग अधिकतर कपोलकल्पित है। इससे मालूम होता है कि शायद कोई चंद ही ऐसा निकले जो इस रचित हो।

चंद नाम का कोई कवि पृथ्वीराज के राज्य काल में हुआ ही नहीं।

(४) जल्हण:—ये चन्द बरदाई के पुत्र थे। इनका लिखा हुआ कोई ग्रन्थ अभी तक नहीं मिला। लेकिन प्रसिद्ध है कि पृथ्वीराज रासो के निम्नलिखित दोहे के बाद का जो अंश है, वह उन्हीं का लिखा हुआ है:—

आदि अन्त लगि वृत्ति मन, वन्नि गुनी गुनराज।

१. पृथ्वीराज:—ये बीकानेर राजवंश में से थे। इनका जन्म वि० सं० १६०६ के मार्गशीर्ष में हुआ था। सम्राट् अकबर के प्रसिद्ध सेनापति महाराजा रायसिंह इनके बड़े भाई थे। पृथ्वीराज बड़े वीर, स्वदेशाभिमानी एवं स्पष्ट भाषी थे। ये सहृदय कवि होने के साथ ही संस्कृत साहित्य, दर्शन, ज्योतिष, छंद शास्त्र, संगीत शास्त्र आदि कई विषयों में भी पारंगत थे। इनकी रचना 'वेली कृष्ण रुक्मणी री' डिंगल साहित्य में शृंगार रस का सर्वोत्कृष्ट ग्रंथ माना जाता है।

इसमें श्री कृष्ण के साथ रुक्मणी के विवाह की कथा का वर्णन है और भाव, भाषा, माधुर्य, ओज और विषय सभी दृष्टियों से यह अपने रङ्ग ढङ्ग का अप्रतिम है। इनके "दसरथ रावउत," 'वसदेरावउत,' और गंङ्गालहरी नामक तीन ग्रंथ और भी हैं। इनके सिवाय इनके रचे दो ग्रन्थ और कहे जाते हैं—प्रेम दीपिका, और श्री कृष्ण रुक्मिणी चरित्र।

२. ईसरदास—इनका जन्म मारवाड़ राज्य के भाद्रेस नामक गांव में सं० १५६५ में हुआ था। ये जाति के चारण थे। ये उच्च कोटि के भक्त थे। अपने समय में ये देवता की तरह पूजे जाते थे। लोग इन्हें "ईसरा सो परमेसरा" कह कर इनका सम्मान करते थे। इनके ग्रंथों के नाम ये हैं—हरि रस, छोटा हरि रस, बाल लीला, गुण भगवन्त हंस, गरुड़ पुराण, गुण आगम, निंदास्तुति, देविआन वैराट, रास कैलास, सभापर्व, और हालां भालां रा कुण्डलियां। इन्होंने शान्त और वीर दोनों रसों में रचनाएं की हैं। इनकी भाषा बहुत सरल तथा स्पष्ट है। कविता में कहीं भी परिश्रम की झलक नहीं दिखाई देती।

३. दुरसाजी—ये आढ़ा गोत्र के चारण थे। इनका जन्म सं० १५९२ में तथा देहावसान १७१२ में हुआ। ये राष्ट्रीय कवि थे। महाराणा प्रताप की प्रशंसा में लिखी हुई इनकी 'विरुदछहतरी' का एक-एक दोहा अपने ढंग का अप्रतिम है। ये अकबर के कृपा पात्र थे। अकबर के आश्रित होकर भी इन्होंने कभी एक शब्द भी उसकी प्रशंसा में न लिखा। यह एक ऐसी बात है जो दुरसाजी को अन्यान्य चारणों में ऊंचा उठा देती है। इनकी कविता में तत्कालीन समाज का बड़ा सुन्दर चित्रण हुआ है।

अकबर समद अथाह, तिह डूबा हिन्दू तुरक।
मेवाड़ो तिण मांह, पोयण फूल प्रताप सी॥

४. मुहणोतनैणसी—ये जोधपुर के महाराजा जसवन्तसिंह (प्रथम) के दीवान थे। इनका रचना काल १७२० के लगभग है। इन्होंने डिंगल गद्य में एक इतिहास ग्रन्थ लिखा है जो *"मुहणोत नैणसी री ख्यात"* के नाम से प्रसिद्ध है।

५. मान—इनके वंश, माता-पिता के संबंध में कोई जानकारी नहीं है। इन्होंने "राज विलास" नामक एक ग्रन्थ बनाया जिसकी समाप्ति १७३७ में हुई थी। इतिहास और काव्य दोनों दृष्टि से यह ग्रन्थ महत्वपूर्ण है।

इसके अतिरिक्त मध्य काल में अन्य कवि बारठ, श्रीधर, सूजो, शिवदास, दयालदास, हरिदास, वीरभाण, जग्गाजी व करणीदान आदि हुए हैं।

उत्तर काल (सं० १९००—१९९७)

उन्नीसवीं शताब्दी के प्रारम्भ के साथ साथ डिंगल साहित्य का उत्तर काल भी प्रारम्भ होता है। भाषा और विषय दोनों की दृष्टि से इस काल में महत्वपूर्ण परिवर्तन हुए हैं। बोलचाल की राजस्थानी और ब्रजभाषा, डिंगल पर अपना प्रभाव जमाने लगीं और नए काव्यों का स्वरूप बहुत कुछ कृष्ण लीला, राम महिमा तथा अन्य नैतिक और सौन्दर्यिक विषयों में से लिया। इस काल की डिंगल

और मध्यकालीन डिंगल में थोड़ा सा अन्तर है। राजस्थानी और ब्रज-भाषा मिश्रित इस डिंगल का नाम कुछ विद्वानों ने "कृत्रिम डिंगल" रखा है, जो ठीक ही प्रतीत होता है। इस काल में बांकीदास आदि दो एक कवियों ने ही विशुद्ध डिंगल में कविता की है पर ध्यानपूर्वक देखने से इनकी भाषा पर उक्त दो भाषाओं का प्रभाव स्पष्ट दिखाई पड़ता है।

१ [illegible]—ये बीकानेर के महाराजा [illegible] के आश्रित थे। इन्होंने "[illegible]" नामक एक ग्रन्थ बनाया जिसका दूसरा नाम "[illegible]" भी है। इसका निर्माण सं० १८०० के आस पास [illegible] है। इस ग्रन्थ के आधार पर [illegible] डिंगल भाषा के [illegible] कवि कहे जा सकते हैं।

का पता लगता है। बांकीदास संस्कृत, [illegible] फारसी तथा ब्रज भाषा के प्रकाण्ड पंडित होते थे साथ ही साथ इतिहास के एक बहुत बड़े ज्ञाता थे। [illegible], [illegible] कविराज की भांति ही बांकीदास भी [illegible] थे।

सूर्यमल्ल—ये बूंदी के राजा [illegible] कवि थे। इनका जन्म चारणों की मिश्रण शाखा में एक [illegible] कुल में वि० सं० १८७२ में हुआ। सूर्यमल्ल ने [illegible] विवाह किये थे पर इनके कोई सन्तान नहीं हुई। ये बड़े दिमागी, मस्त, [illegible] मिजाज एवं [illegible] प्रकृति के पुरुष थे। [illegible] कवि होने के अतिरिक्त सूर्यमल्ल एक उच्च कोटि के विद्वान भी थे। [illegible], [illegible] [illegible], [illegible] और [illegible]

संत-साहित्य

लेखक—श्री रामनाथ 'कमलाकर', राजस्थान सार्वजनिक सम्पर्क विभाग, जयपुर।

संत मानव जाति के ऐसे जगमगाते रत्न हैं जिनके मन, वाणी और कर्म के दिव्य प्रकाश मे मानवता का पथ आलोकित होता आया है। सन्तो ने अपने निःस्वार्थ जीवन के आदर्श से समाज के हृदय मे सोई हुई परमार्थ-परक भावना को जागृत और विकसित किया है। उनके सात्विक विचारो ने मानव-प्रवृत्तियो को ऊंचा उठा कर परोपकार और निःश्रेयस की ओर उन्मुख किया है। सन्तो की लोक हितैषिणी प्रवृत्ति से मनुष्य को "बहुजन हिताय बहुजन सुखाय" जीने का संदेश मिला है। सन्त साहित्य की सुधा से ईर्ष्या, द्वेष और मारकाट से भरे लोक मे एक अलौकिक शान्ति के नन्दन कानन की सृष्टि की है, जहां भटकी हुई, प्रताडित और सतप्त आत्माओ को जीने का सबल मिलता है। तुलसीदासजी के शब्दो मे सन्त आम के वृक्ष की भांति दूसरो के लिए ही फलता-फूलता है। सच्चा सन्त संसार को देता ही देता है। ससार से कुछ लेता नही है। महात्मा सुन्दरदासजी ने सन्त की देन के महत्व का प्रतिपादन कितना अच्छा किया है.—

> साधो उपदेश देत, भली रे सीख देत,
> समता सुबुद्धि देत, कुमति हरत है।
> मारग दिखाई देत, भाव भक्ति देत,
> प्रेम की प्रतीति देत अभरा भरत है।
> ज्ञान देत, ध्यान देत, आतम विचार देत,
> ब्रह्म को बताई देत, ब्रह्म में चरत है।
> 'सुन्दर' कहत जग सन्त कछु देत नाही,
> सन्त जन निस-दिन देवोई करत है।

ससार के असत् से सत् की ओर, अन्धकार से प्रकाश की ओर तथा मृत्यु से अमरता की ओर ले जाने वाली सन्त परम्परा भारत मे अति प्राचीन काल से चली आती है। सतवाणी के उदाहरण सर्व प्रथम वैदिक साहित्य मे उपलब्ध होते हैं। ऋग-वेद के कतिपय कथानक सम्बन्धी सूक्तो को छोड दिया जाय तो शेष सारा ऋगवेद सन्तो की वाणी ही है। सामवेद तो ऋगवेद मे के ही भजनो का चुनाव है, जिनकी एक विशेष ढग से सामपाठियों ने स्वर लिपि बना रखी थी।

वेदो मे 'एको ब्रह्म द्वितीयो नास्ति' अर्थात् एकेश्वरवाद का प्रतिपादन हुआ है। उपासना के लिए उपासक एक ही ब्रह्म के भिन्न-भिन्न रूप पसन्द कर सकते हैं—

> एकं सद्विप्रा बहुधा वदन्ति।
> अग्निर्यम मातरिश्वानं आहु ॥

वेदो के पश्चात् सन्तवाणी का दूसरा आविर्भाव भगवान बुद्ध की गाथाओ मे तथा तीसरा आविर्भाव दक्षिण के शैव और वैष्णव भक्तो मे मिलता है। वेदवाणी, बुद्धवाणी और दक्षिण की भक्ति वाणी ही वह भूमिका है जिसमे से बाद की सारी भारतीय सन्तवाणी की सहस्र धाराएं प्रसूत हुईं।

उत्तर भारत की सन्तवाणी में राजस्थान की देन विशेष महत्वपूर्ण है। यों तो राजस्थान का प्राचीन इतिहास शौर्य, वीरता और बलिदान के लिए जगद् विख्यात है ही, यहां सन्त साहित्य का सृजन भी प्रचुर मात्रा में हुआ है। [illegible]

दादूदयाल, रज्जबजी, सुन्दरजी, बाजिद जी, स्वामी सुन्दरदास, चरणदास, सहजो बाई, दया बाई, प्रभृति सन्तों ने राजस्थान की मरुभूमि में अपनी वाणी से निर्गुण भक्ति के आनन्द की मन्दाकिनी बहाई है।

मुनि रामसिंह

जैन मुनि रामसिंह ने ११ वीं शताब्दी में उच्च कोटि के अपभ्रंश में दोहे लिखे हैं। मुनिजी का एक जैन पाहुड़ दोहा प्रकाशित हो चुका है। इसकी भाषा अपभ्रंश अर्थात् प्राकृत है जो हिन्दी के पूर्व रूप से भिन्न है। इनके दोहों में उपनिषदों की दृष्टि का [illegible] है —

[illegible] दाहिण [illegible] [illegible]।
[illegible] [illegible] [illegible] [illegible]॥

[illegible] वाणी ने पवित्र किया था। इनकी [illegible] कबीरदास की वाणी के जोड़ की मानी जाती हैं। दादूदयाल ने प्रेमतत्व की जो व्यंजना की है वह बहुत ऊंची और बहुत गहरी है। इनके पद्य [illegible] मर्म को बेधने वाली सूक्ष्मातिसूक्ष्म दृष्टि और हृदय रस में भिगो अनुभूतियां हैं। इनकी भाषा भी [illegible] उदार और चमत्कार है।

अपने निर्गुण प्रभु से जो कि हृदय में [illegible] निवास करता है मिलन न होने के कारण दादू की कितनी 'व्याकुलता' है—

अब मनि मैन न देखिये, परगट मिलै न आई।
एक सेज संगहि रहै, यह दुख सह्या न जाई॥

ज्यूं हम तोरें त्यूं तू जोरे,
हम तोरें पै तू नांहि तोरे ॥
हम बिसरें पै तूं न बिसारें,
हम बिगरें पै तूं न बिगारें ॥
हम भूलें तूं आनि मिलावें,
हम बिछुरें तूं अंगि लगावे ॥
तुम्ह भावै सो हम पै नाहीं,
दादू दरसन देहु गुसांई ॥

दादू सर्वतोभावेन प्रभु की शरण में रहे—

तू साहिब मैं सेवक तेरा,
भावै सिरि दै सूली मेरा।
भावै करवत सिर पर सारि,
भावै लेकर गरदन मारि।

किन्तु ऐसी शरणागति में कितना आनन्द है, दादू ही इसका उत्तर देंगे :—

प्रेम लहर की पालकी आतम बैसे आइ।
दादू खेलै पीव सौं, यहु सुख कह्या न जाइ ॥

रज्जब जी

संत दादू दयाल के शिष्य रज्जब ने दो ग्रंथों की रचना की "बाणी" और "सर्वंगी"। संख्या में इनकी साखियां ५४२८ और अंग २४ हैं। इतनी बड़ी संख्या में शायद किसी भी अन्य सन्त ने साखियां नहीं कहीं। रज्जबजी ने कवित्त, सवैये, अरिल्ल आदि अनेक छन्दों में रचना की है। इनकी रचना अधिकतर राजस्थानी में है और अत्यन्त ही सरस है। इनकी कुछ साखियां और पद बहुत पुष्ट हैं। साखियां उच्च कोटि की हैं।

राम का रंग रज्जब पर गहरा चढ़ा। प्रभु के प्रेम में उनकी तड़पन और उनका सर्वस्व समर्पण बेजोड़ है—

राम रंगीले के रंग राती।
परम पुरुष संगि प्राण हमारो मगन गलित मदमाती।
लाग्यो नेह नाम निर्मल सूं गिनत न सीली ताती ॥
डगमग नहीं अडिग होई बैठी,
सिर धरि करवत काती।
सब विधि सुखी राम ज्यूं राखै यहु रस रीति सुहाती ॥
जन रज्जब धन ध्यान तिहारो,
बेर बेर बलि जाती ॥

बखनाजी

बखनाजी नराणे के निवासी तथा दादू दयाल के प्रधान शिष्यों में से थे। इनका कंठ बड़ा सुरीला था। इनकी गुरु भक्ति बड़ी गहरी थी। साहित्य की दृष्टि से पद्य रचनाएं उत्कृष्ट कोटि की नहीं हैं किन्तु भगवान के चरणों में सर्वस्वार्पण की भावना इनकी बहुत बड़ी थी। बखनाजी ने ढूंढाड़ी में सीधे-सादे शब्दों में सत्य का ऊंचा निरूपण और भक्ति के विरह का बड़ा सजीव चित्रण किया है :–

हरि आवै हो कब देखौं आंगण म्हारे।
कोई सो दिन होई रे जा दिन चरणां थारे ॥
+ + +
तारा गिणतां मोहि बिहावै रैणि निरासी।
बिरहणी बिलाप करै हरि दरसन की प्यासी ॥

प्रेम के व्यापार में सिर का सौदा करना पड़ता है। सिर देने पर भी प्रीतम मिल जावे तो भी बखनाजी की राय में यह सौदा "मुहंगा" ही है।

बखना हरि ब्यौपार में टोटा कबहूं न आणि।
सिर साटै जै हरि मिलै, तब लग सुहंगा जाणि ॥

वाजिंदजी

इस पठान के हृदय में करुणा का स्रोत तब उमड़ा जब कि वह किसी जंगल में हिरणों का शिकार करने जाते थे। और बन्दूक दाग कर उनका

[illegible] और—प्रेम की ओर मुड़ गया। बाद को [illegible] सद्गुरु प्राप्त हुआ। [illegible] पर [illegible] साथ रखता थी। इसकी भाषा में [illegible] सरल है। उसमें ओर देह की अनित्यता [illegible] मालूम है। देह की अनित्यता सम्बन्धी दो पद देखिए —

[illegible]

तो फिर सुन्दर हरि सों लगी [illegible] कैसे रहे।
यह प्रेम लक्षणा भक्ति है जिसमें मुक्ति [illegible]।

संत परम्परा में गुरु का स्थान बहुत ऊँचा है। सुन्दरदासजी के कथनानुसार गुरु के पद पर कोई महान् व्यक्ति ही आसीन हो सकता है।

बापू को न रोष तोष बापू को न राग [illegible],
बापू को न बैर भाव बापू को न चाव है।
बापू को न [illegible] बापू को नहीं विचार,
बापू को न [illegible] है।
बापू को न [illegible] बापू को न [illegible]—[illegible]।
[illegible] को विचार [illegible] है।
सुन्दर [illegible] कोई [illegible] को [illegible],
कोई [illegible] है।

'नव परिणीता से'–

तुम आई तो

तुम आई तो देहरी द्वारे गूंज गई शहनाई,
कुहुक-कुहुक कोकिल कंठो ने स्वर गागर ढुलकाई।
कन्दर्पिल इस रूप सुरा को चख कर चांदनियां बौराई,
सर्पिल घुंघराली अलको मे उलझ-उलझ सझा शरमाई।
तन्द्रिल स्वप्निल सी पलको मे मादकता ने ली अंगड़ाई,
जवा कुसुम मे चरणो को छू आंगन की माटी मुस्काई।
मुस्काई तो हरसिंगार ने झर-झर मुस्कानें बिखराई,
शरमाई तो बदली के घूंघट मे सिमटी मौन जुन्हाई।
सघन उदासी की छाया को छेड़ गई नटखट पुरवाई,
सूने मन की परती धरती फिर आशाओं मे अंकुराई।
चरणो मे भीगी-भीगी वे सूनी धरिया फिर कजराई,
मेंहदी रचे सधे हाथों फिर ठप-ठप ढोलक थपकाई।
कंगना खनके बिछुआ ठुनके पैरो पैंजनिया छनकाई,
कोने आतर तुलसी के तरु दिवला की बाती जगमाई।

कु. हेम एम. ए

तुम जहाज मैं काग तिहारो तुम तजि अनत न जाऊं।
जो तुम हरि कू मारि निकासो और ठौर नहीं पाऊं॥

चरणदास प्रभु सरण तिहारी, जानत सब संसार।
मेरी हंसी सो हंसी तुम्हारी, तुमहु देखु विचार॥

सहजो बाई व दयाबाई चरणदासजी की शिष्याएं थी। इन दोनों संत कवियत्रियो ने भी संत साहित्य की अभिवृद्धि की है। गुरु महिमा, वैराग उपशमन, सुमिरन आदि अनेक अंगो पर इनकी सुन्दर रचनाएं हैं। रामगढ़ के लालनाथ जी १८ वी शताब्दी मे एक प्रसिद्ध संत हुए हैं जिन्होंने हरिरस, कवलीविद्या, हरिचेतावनी निष्कलंक परवाणु फुटकर सबद और बीज समन्धीवाली छन्दों की रचना की थी।

अन्त में इनको परिचय करने वाली वाणी के अमर रचनाकार इन संतों के चरणों मे श्रद्धांजलि अर्पण करते हुए मैं यह लेखन प्रसंग समाप्त करता हूं।

पूर्वी अंचल का प्राचीन काव्य

लेखक—डा० मोतीलाल गुप्त, एम. ए., बी. टी., पी. एच. डी., एम. आर. ए. एस., एम. बी. [illegible]
(लंदन) [illegible] डिपार्टमेंट ऑफ हिन्दी, श्री [illegible] कॉलेज, [illegible]

साहित्य में इस प्रकार की पुस्तकें बहुत ही कम मिलती हैं।

२. बलभद्र के शिखनख पर मनीराम की टीका—हिन्दी संसार प्रायः यही जानता रहा कि बलभद्र पर सबसे प्रथम टीका गोपाल कवि द्वारा सं० १८९१ वि० में हुई। किन्तु हमारी खोज में मिली यह टीका सिद्ध करती है कि गोपाल कवि की टीका से लगभग ५० वर्ष पहले ही सं० १८४२ में मनीराम कवि द्वारा इस ग्रन्थ-रत्न की टीका की जा चुकी थी—

> अष्टादस ब्यालीस में संवत मगसिर मास।
> कृष्ण पक्ष पाचैं सुतिथि सोमवार परगास॥

कवि मनीराम की इस टीका को ही बलभद्र के शिखनख पर प्रथम टीका मानना चाहिए।

३. वचन विलास—हिन्दी संसार में यह माना जाता रहा है कि देव कवि सनाढ्य ब्राह्मण थे। हिन्दी साहित्य के प्रायः सभी इतिहासों में इसी बात का समर्थन किया गया है। किन्तु बख्तावरसिंहजी के आश्रित कवि भोगीलाल की इस पुस्तक से सिद्ध होता है कि देव कवि कान्यकुब्ज ब्राह्मण थे, सनाढ्य नहीं।

> कास्यप गोत्र द्विवेदि कुल कान्यकुब्ज कमनीय।
> देवदत्त कवि जगत में भये देव रमनीय॥

४. प्रेम रत्नागर—राजकुमार रतनपाल के आश्रित देवीदास का लिखा यह ग्रन्थ प्रेम की व्याख्या इतने सुन्दर और वैज्ञानिक ढंग से करता है कि देखकर आश्चर्य चकित होना पड़ता है। साधारणतया इस प्रकार के ग्रंथ भी हिन्दी साहित्य में नहीं मिलते। 'नवीन' का 'नेह-निदान' भी कुछ इसी प्रकार का ग्रंथ है। प्रेम के स्वरूप का सुन्दर और सोदाहरण विवेचन इस प्रकार के ऊँचे ग्रंथों में ही मिल सकता है। इसकी चाह करने के— 'प्रेम को निरूप', 'मीन हंस आदि को प्रेम' तथा अन्य अनेक उदाहरण द्रष्टव्य हैं।

५. विचित्र रामायण—बलदेव वैश्य (खंडेलवाल) कृत यह रामायण वास्तव में विचित्र है। बालकाण्ड तथा उत्तरकाण्ड के दार्शनिक प्रसंगों को निकाल कर शेष कथा का विभाजन १४ सर्गों में किया गया है। इस ग्रन्थ में काव्य और कथा दोनों की प्रतिभा मिलती है। स्थान-स्थान पर केशव का भी स्मरण हो आता है। प्रकृति वर्णन इस काव्य की एक और विशेषता है। शुद्ध काव्य की दृष्टि से यह पुस्तक एक उत्तम स्थान की अधिकारिणी है।

६. राधामंगल—पार्वती मंगल, जानकी मंगल तथा रुक्मिणी मंगल के नाम तो सुने जाते हैं किन्तु मत्स्य के कवि गुसाईं रामनारायण ने राधा मंगल उपस्थित करके राधा और कृष्ण का विवाह भी विधि विधान से करा दिया है। इस पुस्तक में कल्पना का अद्भुत प्रयोग है और ब्रज की विवाह पद्धति का सूक्ष्म तथा सजीव चित्रण फिर कुशलाती करवाई। दुल्हन की घूंघट दुल्हा सरकाई।

अथवा

> पूड़ी तरकारी पातरि मांरी और मुहारी भात धनी।
> बाधो बन प्यारी मांग तुम्हारी बेनी कारी नाग बनी।
> आदि को स्थानीय रसिक ही समझ सकेंगे।

७. गिरधर विलास—कवि उदयराम लिखित यह एक ऐसा सुन्दर ग्रन्थ है जिसमें राम के राज्य को बसाने के साथ-साथ प्रकृति का एक मनोहर चित्र भी उपस्थित किया गया है। ऐसा मालूम होने लगता है जैसे कवि ने वर्षा, सरोवर, वृक्ष, रस आदि सभी को चेतना प्रदान कर दी हो। राम प्रभाव द्वारा लो जब की सौगातों का एक समा सा बंध जाता है।

पूर्वी अंचल का प्राचीन काव्य

लेखक—डा० मोतीलाल गुप्त, एम. ए., बी. टी., पी. एच. डी., एम. आर. ए. एस., [illegible]
([illegible]) [illegible] पोस्ट ग्रेजुएट डिपार्टमेंट इन हिन्दी, श्री महाराजकुमार [illegible]

राजस्थान के पूर्वी अंचल में मैं 'मत्स्य प्रदेश' को सम्मिलित कर रहा हूँ। विशाल राजस्थान बनने से पूर्व अलवर, भरतपुर, धौलपुर और करौली चार रियासतों से निर्मित 'मत्स्य प्रदेश' नाम का एक संघ था, कुछ ही दिनों पश्चात् यह संघ राजस्थान का एक अंग बन गया। मैंने अपने शोध का विषय इसी प्रदेश के हस्तलिखित साहित्य को लिया और सन् १७५० से सन् १९०० के बीच लिखे गए काव्य पर अपना ध्यान केन्द्रित रखा। सामग्री बड़ी अधिक थी, किन्तु उसमें कुछ ही अंश का उपयोग कर सका, और उसी का एक संक्षिप्त विवरण यहाँ उपस्थित कर रहा हूँ।

शोध के लिए ग्रन्थों के आधार पर कहा जा सकता है कि इस प्रदेश के साहित्यकार प्रायः [illegible] हैं। इनमें से कुछ तो केवल भोगी थे [illegible] [illegible]

परिवार के लोग स्वयं भी कवि थे। भरतपुर के महाराज बलदेवसिंह, अलवर के [illegible] बख्तावरसिंह और विनयसिंह, अलवर के [illegible] बलीबख्श, करौली के राजकुमार [illegible] भरतपुर की महारानी अमृतकौर [illegible] साहित्यकार थे। कुछ राजाओं की रचनाओं के बारे में यह कहा जा सकता है कि इनका [illegible] राजाओं द्वारा होना बहुत कठिन है, अतः उनके आश्रित कवियों ने उन रचनाओं को [illegible] अपने आश्रयदाता के नाम पर [illegible] हमारा यह अनुमान उन रचनाओं की [illegible] कारण ही है और इसे हम अनुमान मात्र ही [illegible] मानते हैं क्योंकि राजाओं में भी एक [illegible] गुण हो सकते हैं और पुरुषों में जो [illegible] है उनकी उपेक्षा भी करने की आवश्यकता [illegible] [illegible]

[illegible]

साहित्य में इस प्रकार की पुस्तकें बहुत ही कम मिलती हैं।

२. बलभद्र के शिखनख पर मनीराम की टीका—हिन्दी संसार प्रायः यही जानता रहा कि बलभद्र पर सबसे प्रथम टीका गोपाल कवि द्वारा सं० १८९१ वि० में हुई। किन्तु हमारी खोज में मिली यह टीका सिद्ध करती है कि गोपाल कवि की टीका से लगभग ५० वर्ष पहले ही सं० १८४२ में मनीराम कवि द्वारा इस ग्रन्थ-रत्न की टीका की जा चुकी थी—

अष्टादस ब्यालीस मे संवत मगसिर मास।
कृष्ण पक्ष पाचैं सुतिथि सोमवार परगास॥

कवि मनीराम की इस टीका को ही बलभद्र के शिखनख पर प्रथम टीका मानना चाहिए।

३. षपन विलास—हिन्दी संसार में यह माना जाता रहा है कि देव कवि सनाढ्य ब्राह्मण थे। हिन्दी साहित्य के प्रायः सभी इतिहासों में इसी बात का समर्थन किया गया है। किन्तु बख्तावरसिंहजी के आश्रित कवि भोगीलाल की इस पुस्तक से सिद्ध होता है कि देव कवि कान्यकुब्ज ब्राह्मण थे, सनाढ्य नहीं।

कास्यप गोत्र द्विवेदि कुल कान्यकुब्ज कमनीय।
देवदत्त कवि जगत में भये देव रमणीय॥

४. प्रेम रत्नाकर—राजकुमार रतनराव के आश्रित देवीदास का लिखा यह ग्रन्थ प्रेम की व्याख्या इतने सुन्दर और वैज्ञानिक ढंग से करता है कि देखकर आश्चर्य चकित होना पड़ता है। साधारणतया इस प्रकार के ग्रंथ भी हिन्दी साहित्य में नहीं मिलते। 'नवीन' का 'नेह-निदान' भी कुछ इसी प्रकार का ग्रंथ है। प्रेम के स्वरूप का सुन्दर और सोदाहरण विवेचन इस प्रकार के ग्रंथों में ही मिल सकता है। इसकी एक झलकी के—'प्रेम को निरूप', 'मीन हंस आदि को प्रेम' तथा अन्य अनेक उदाहरण द्रष्टव्य हैं।

५. विचित्र रामायण—बलदेव वैश्य (खंडेलवाल) कृत यह रामायण वास्तव में विचित्र है। बालकाण्ड तथा उत्तरकाण्ड के दार्शनिक प्रसंगों को निकाल कर शेष कथा का विभाजन १४ अंकों में किया गया है। इस ग्रन्थ में काव्य और कथा दोनों की प्रतिभा मिलती है। स्थान-स्थान पर केशव का भी स्मरण हो आता है। प्रकृति वर्णन इस काव्य की एक और विशेषता है। शुद्ध काव्य की दृष्टि से यह पुस्तक एक उत्तम स्थान की अधिकारिणी है।

६. राधामंगल—पार्वती मंगल, जानकी मंगल तथा रुक्मिणी मंगल के नाम तो सुने जाते हैं किन्तु मत्स्य के कवि गुसाईं रामनारायण ने राधा मंगल उपस्थित करके राधा और कृष्ण का विवाह भी विधि विधान से करा दिया है। इस पुस्तक में कल्पना का अद्भुत प्रयोग है और ब्रज की विवाह पद्धति का सूक्ष्म तथा सजीव चित्रण फिर दूधाभाती करवाई। दुलह की झूंठन दुलन खवाई।

अथवा

घुटी तरकारी पातरि न्यारी और सुपारी भात घनी।
लाधौ सब प्यारी माल सुचारी बेनी वारी भार बनी।
आदि की स्वाभाविक रचना ही सरस सचेत।

७. गिरवर विलास—कवि उदयराम लिखित यह एक ऐसा सुन्दर ग्रन्थ है जिसमें राम के राज्य को बसाने के साथ-साथ प्रकृति का एक सजीव चित्र भी उपस्थित किया गया है। ऐसा मालूम होने लगता है जैसे कवि ने पर्वत, सरोवर, वृक्ष, वन आदि सभी को चेतना प्रदान कर दी हो। इस प्रसंग द्वारा तो कवि की मौलिकता का पूरा पता लग जाता है।

रसिक राम तुम रसिक सिरोमनि,
नागर नवधर नंद किसोर।
विरचत पटर पीत पट कंचन,
कंचन बरन बना बहु ठौर।

८ राम-चरित्र नाटक, हनुमान नाटक, हरिश्चन्द्र कथा—ये तीन जसराम द्वारा निर्मित 'नाटक' कहे गए हैं। इनको वैसे तो नाटक मानने में संकोच होता है किन्तु इनमें जो गतिमत्ता और ... पाई जाती है उसके आधार पर हम इनके नाम की सार्थकता पर ध्यान दे सकते हैं। यदि इनको पद्य-नाटक के नाते मान लें तो कोई अनुचित बात नहीं होगी। इन नाटकों पर संस्कृत के नाटकों की छाया है और हिन्दी में एक सुन्दर प्रयोग है। हिन्दी के नाटक साहित्य पर काम करने वाले विद्वानों का इस ओर भी ध्यान जाना चाहिए।

९. [illegible]

[illegible]

इतिहास प्रधान ये दोनों वीर काव्य ... की विशेषता है। 'सुजान चरित' प्रकाशित हो चुका है और 'प्रताप रासो' राजस्थान पुरातत्व मंदिर द्वारा मेरे संपादन में प्रकाशित होने को है। इन दोनों काव्यों में उच्च कोटि की वीरता के दर्शन तो होते ही हैं साथ ही इनमें वर्णित प्रायः सभी घटनाएं, व्यक्ति, तिथियाँ आदि इतिहास द्वारा प्रमाणित हैं। सेनाओं की संख्याएं भी ठीक ठीक दी हुई हैं।

११. महाभारत, रामायण आदि के अनुवाद—इतनी बड़ी पुस्तकों का अनुवाद करना कोई साधारण कार्य नहीं है और काव्यमय पुस्तक के अनुवाद करना तो और भी कठिन होता है। इस प्रान्त के कवियों और उनके आश्रयदाताओं का उत्साह देखिए कि इन बड़े-बड़े ग्रन्थों का पूरा अनुवाद सरल पद्य में उपस्थित कर दिया।

१२. भाषा-भूषण की टीका—भाषा भूषण की कई टीकाओं के नाम मिलते हैं। [illegible]

[illegible]

राजस्थानी लोकगीत

लेखिका—लक्ष्मीकुमारी चूंडावत

लोक साहित्य जन-जीवन का दर्पण है। जन मानस की आकांक्षाओं, भावनाओं तथा कल्पनाओं का स्पष्ट प्रतिबिम्ब लोक साहित्य में जगमगाता रहता है। जन समाज ने अपने हृदय के समस्त रस और पीड़ा को उंडेल कर लोक साहित्य में भर दिया है।

कोटि-कोटि मानव ने अपनी अनुभूति और अभिव्यक्ति को शब्द-शरीर दे लोक साहित्य की रचना की। जन मानस ने वही कहा जो जन-जीवन में है। अपनी कामनाओं को छिपाया नहीं, इच्छाओं को दबाया नहीं और न ही आदर्श का आडम्बर लगाया। जो चाहा, जो समझा स्पष्ट शब्दों में कह दिया। जो महसूस किया उसे बिना झिझक के सरलता से गाकर कहा। मानव की दुर्बलताओं को भी साहस के साथ स्वीकार किया। रहस्य का पर्दा कभी नहीं डाला। इसीलिये लोक साहित्य के शीशे में सदियों से मानव अपने मनोभावों के प्रतिबिम्ब देखता आ रहा है। यही लोक साहित्य की महत्ता और विशेषता है।

यों तो विश्व भर के मानव के मनोभाव इच्छायें, आकांक्षायें और कामनायें एक सी होती हैं। राग, विराग, घृणा और प्रेम सभी में है। मिलने पर सभी की आंखें स्नेहाश्रु से सजल हुई हैं तथा बिछुड़ने पर सभी के नयन रोये हैं। उत्सव पर आनन्दित होना एवं दुःख से दुखित होना भी मानव जीवन का अंग है। भिन्न २ देश एवं प्रदेश का लोक साहित्य, लोकमानस की सूक्ष्म भावनाओं के सुन्दर भीने पटों को भिन्न २ रूपों में खोलता है। जैसा कि ऊपर कहा गया है कि लोक साहित्य जन-जीवन का दर्पण है। जन-जीवन के कर्मण्य जीवन में जो परिस्थितियां आती हैं, उनसे उत्पन्न कठिनाइयां आचार-विचार प्रकृति प्रदत्त सुविधाओं तथा दुवि-धाओं की अनुभूति और अभिव्यक्ति लोक साहित्य में स्वतः समाविष्ट होती रहती है। प्रत्येक प्रदेश की भौगोलिक स्थिति, वहां की रहन-सहन, ऐतिहासिक तथा धार्मिक परम्परायें, वहां के लोक जीवन में विशिष्ट प्रकार की भावनाओं को मूर्त रूप देती रहती है।

राजस्थान की अपनी विशिष्ट ऐतिहासिक परम्परायें रही हैं। शताब्दियों तक पुरुष तलवार की धार से और स्त्रियां जौहर की ज्वाला से खेलती रहीं। यहां के जन साहित्य में ओज, वीरता और बलिदान की भावनाओं का सर्वोपरि होना उचित ही है। जन जातियों में भील अपना विशिष्ट स्थान रखते हैं। मुगलों के लगातार आक्रमणों से मेवाड़ की रक्षा करने में इनका महत्वपूर्ण योग रहा है। इन्होंने अपनी भावनाओं को लोक साहित्य में साकार का रूप दिया है। युद्ध होता है। भील तीरों की वर्षा कर रहे हैं। भीलनियां सैकड़ों की तादाद पहुंचाती है। वे छूटे हुए तीरों को चुन चुनकर, ओढ़नियों में पत्थर भर-भरकर भीलवीरों को ले जाकर देती रहती हैं। ऐसे समय उनके हृदय पटल पर अंकित हो जाते हैं। उन अवसरों की याद दिला भीलनियां भीलों को जा जाकर उत्साहित करती रहती हैं। अलावली शिखर के मरदाना बहादुर भीलों की भीलनियां जब अर्ज से गाती हैं, हृदय फड़क उठता है—

मालविदे म्हाने मांडर सारे,
डूंगरिया मे पार रंगीला मीत जी
हो रंगीला मीत जी……
मीतजी थी टूटी भानडो
सिरदारां रा टूटा सैल
हो रंगीला मीतजी — …

रंगीले मीत, यहां मालवा मे तो मच्छर काटते हैं। हमें तो मेवाड़ के पहाड़ों में ले चलो। पार्वत्य प्रदेश के साथ २ मेवाड़ के पहाड़ों से उनका वंश परम्परागत मोह, फिर उन पहाड़ों के साथ-साथ वीरता की याद कैसे न आवे?

शक्ति जमा कर ली थी। वे लूट खसोट कर मांगने लगे थे। पटेल, तुम मारे जाओगे। हां, तुम मारे जाओगे। इस समय तो तुम्हारे सिर बसंती हवा के झोंके खा रही है। तुम्हारा ऊंचा है। पर हमारे हाथ से युद्ध में मारे जाओगे देखते नहीं, यह राजाओं का देश मेवाड़ है। पर ऊंचे २ उनके झरोखे हैं और नीचे सागर भरा है। पटेल, राजा बनने की झूठी को छोड़ दो, अपना पुश्तैनी धंधा खेतीबाड़ी सम्भालो। इसी में तुम्हारा फायदा है। राजा बनने के लालच में तुम हमारे हाथ से मारे जाओगे।।

वीररसपूर्ण राजस्थान लोक साहित्य में पग पग पर उत्कट प्रेम की गाथाओं और गीतों का मिलना नितान्त स्वाभाविक है। यहां के जन साहित्य का दावा है:—

"मारू थारे देश में, नीपजे तीन रत्न,
एक ढोलो, दूजो मारवण, तीजो कसूमल रंग।"

इस देश में तो तीन रत्न पैदा होते हैं—सच्चा प्रेमी, प्रेमिका और तीसरा कसूमल रंग जो वीरत्व और प्रेम का प्रतीक है।

मूमल के मादक सौन्दर्य की सुगन्धि से समूचा राजस्थान महक उठा था। कल्पद्रुम के कुसुम सी मूमल को प्राप्त करने को अनेक हृदय विकल हो उठे।

महेन्द्र के वीरत्व और धैर्य पर मद की उस अपूर्व सुन्दरी का हृदय रीझ गया। मूमल और महेन्द्र की प्रणय गाथा को कोटि २ कंठो ने गाया। बिना थके हुए सदियों से राजस्थान आज भी उसी स्नेह और उमंग से गाता है। इस लोक गीत की ध्वनि में ही कोई चमत्कार है। सुनने वाला भावुक हृदय सिर धुनने लगता है:

काळी रे काळी काजळिया री रेखडी रे
हां जी काळोड़ी कांठळ में चमकै बीजळी
म्हारी बरसाळै री मूमल हालै नीं आलीजा रे देस
म्हायो मूमल मारवणियो रे मैट सूं
हां जी बरियां मो राल्या मूमल केसरा
म्हारो जग मीठी मूमल हालै नी आलीजा रे देस
सीसड़लो मूमल रो सरप मारेळ ज्यूं
हां जी बेसडला मादेवी रा बासक नाग ज्यूं
म्हारी जग प्यारी मूमल हालै नी अमराणे रे देस
नाकड़लो मूमल रो खाडा री धार ज्यूं
हां जी रे होठड़ला रंग चीड़ी री रतनाळिया
म्हारी अमरत भर मूमल हालै नीं रमोला रे देस
होठड़ला मूमल रा रेसमियां तार ज्यूं
हां जी रे दांतड़ला अजळदंती रा दाड़म बीज ज्यूं
म्हारी हरियाळी ए मूमल हालै नीं रसिया रे देस
पेटड़लो मूमल रो पीपळिये रो पान ज्यूं
हाजी रे हिवड़लो मूमल रो सांचे ढाळियो
म्हारी नाजुकड़ी मूमल हालै नी अमराणे रे देस
जांघड़ली मूमल की केळिया रा थंभ ज्यूं
हांजी सायळड़ी गरीठी पींडी पातळी
म्हारी मादेवी मूमल हालै नी अमराणे रे देस
जोई रे मूमलड़ी ए लोदराणे रे देस में
हाजी रे मारुणी रे मूमल ने राणे महेंद रे
म्हारी जैसाणा री मूमल हालै नीं अमराणे रे देस ॥

प्रकृति देवी इस प्रदेश में विशेष प्रसन्न नहीं रही। एक ओर बालूकामय अनन्त मरु सागर दूसरे छोर पर अरावली की पथरीली पहाड़ियां। यहां का जन जीवन कठोर श्रमसाध्य रहा है। यहां के पुरुष वर्ग को व्यवसाय के निमित्त और युद्ध की चाकरी में विशेष कर बाहर ही रहना पड़ा। पीछे से विरहणियों ने प्रवासी पति की याद में, उन्हें उलाहना देते शीघ्र घर आ जाने की विनती करते हुए न जाने कितना साहित्य रच डाला। दीर्घकाल तक वियोगाग्नि में जलते हुए अपने मानस की अनन्य मधुर स्मृति और विरह पीड़ा को लोकगीतों में भर भर अमृत और विष की बूंदें वे पीती रहीं और पिलाती रहीं। इसी प्रकार और मार्मिक भाव ने यहां के लोकगीतों को मर्मस्पर्शी बना दिया और उनमें हृदय को विमोहित करने की शक्ति भर दी। विरहिणी को स्वप्न आया है। कितना सुन्दर और स्वाभाविक चित्रण है। उदाहरण:—

रनो गो मारो मरव मुनमरो जी म्हारा राज।
[illegible]डूरी तो मोडल्यो मोरी रा पाव रो जी
[illegible] में देग्या भंवरजी ने मारता जी
[illegible] माथे दवरंग ए जी पाग
[illegible] मवय ए जी [illegible]
[illegible] में गीगी प्यारो प्रेम रो जी
[illegible] मोवरग्यो भंवर जो री मयरी जी
[illegible] पेढी टमको ए जी ए गेव
[illegible]

पीर का घनत्व

—श्रीमती रेणा वर्मा
राम्पुरो, [illegible]

यह पास की रातों पड़ी रेतें
मौन हैं
जैसे कि इनको याद हो वे [illegible]-
युग की प्रतीक्षा हो
मूक-क्रन्दन में भर आई [illegible]
घोर नीचे
मारकेट में पुँगनी-[illegible]
दो पैसे पाव
दो पाने मेर
कि जाने कौन 'हारर' ?
[illegible] भी होते हो ?
[illegible] भी किसी ही होगी ?
और [illegible] के रुपये में
[illegible], [illegible] की [illegible] ?
'पानी' का [illegible] क्या होगा ?
[illegible] है किन्तु [illegible] ?
[illegible] है मौन।
[illegible]

राजस्थानी साहित्य : परम्परा और प्रगति

श्री रावत सारस्वत, *संपादक, मरुवाणी, मीरांमार्ग, बनीपार्क, जयपुर।*

राजस्थानी साहित्य की परम्परा का आदि सूत्र लगभग एक हजार वर्ष पहिले के उस अंधकार युगीन काल में छिपा हुआ है जब अपभ्रंशों से देश भाषाओं का जन्म हो रहा था। तत्कालीन कतिपय जैन ग्रंथों में प्राचीन राजस्थानी के फुटकर दूहे प्राप्त हुए हैं। चौदहवीं शताब्दी तक प्रारम्भ के चार पांच सौ वर्षों में राजस्थान, गुजरात और मालवा के विशाल भू भागों में बोली जाने वाली इस अनामदेया लोक भाषा की विशेष उल्लेखनीय सामग्री अभी प्राप्त नहीं हो सकी है। पर पंद्रहवीं से उन्नीसवीं के मध्य तक की चार-पांच शताब्दियों में गुजरात, काठियावाड़, मारवाड़, मेवाड़, ढूंढाड़ आदि विभिन्न प्रदेशों में इस भाषा के विभिन्न रूपों में विशाल साहित्य की सृष्टि हुई। गुजरात और राजस्थान की भाषायें इस संयुक्त परिवार से सोलहवीं शताब्दी में ही पृथक् होनी प्रारम्भ हो गई थी और अनेक प्रकार के साम्य के रहते हुए भी आज गुजराती और राजस्थानी दो पृथक भाषाय हैं। राजस्थानी का यह समृद्ध परिवार अप्रत्यक्ष रूप से ब्रजमंडल, पंजाब और सिंध की भाषाओं पर भी अपना स्पष्ट प्रभाव छोड़ता आया है। राजस्थान में देशी राज्यों ने अंग्रेजों की दासता स्वीकार कर राजनैतिक दृष्टि से निश्चिन्तता प्राप्त की तभी से राजस्थानी साहित्य की अधोगति प्रारम्भ हुई, अब राजाओं को न तो वीर गीत सुनाने वाले चारणों की आवश्यकता थी और न भक्ति साहित्य को पढ़ने-सुनने के ही संस्कार उनमें रह गये थे। अंग्रेजों के सम्पर्क से उनकी [illegible] उन्हें छोड़ रही थी और पूरे पाश्चात्य सभ्यता में रंगे हुए वे साहित्य और कला को प्रश्रय देने की अपने पूर्वजों की परम्परा भी त्याग रहे थे। राजस्थानी भाषा और साहित्य का यह सुषुप्ति काल संवत् १९३० तक प्रायः डेढ़सौ वर्षों तक चलता रहा। अनजान देशों और भाषाओं की खोज करने वाले योरोपीय विद्वान् संस्कृत साहित्य के चमत्कारों से आकर्षित होकर भारत की ओर आने शुरू हुए। उसी समय कर्नल टॉड के 'राजस्थान इतिहास' से प्रेरित होकर देश-विदेश के पुरातत्व वेत्ता राजस्थान की ओर भी झुके। इसी समय से राजस्थानी के पुनर्जागरण का काल प्रारम्भ होता है, जो एक ओर राणा सांगा और प्रताप को आगे कर भारतीय राष्ट्रीयता के पुनर्संस्थापन के प्रयत्नों और दूसरी ओर अंग्रेजी के स्थान पर हिन्दी को प्रतिष्ठापित करने के आन्दोलन में सन्नद्ध होकर अपनी परिधि के विस्तार से अनेक क्षेत्रों के व्यक्तियों को सम्मिलित कर चुका था।

राजस्थानी साहित्य का समृद्धिकाल भारत में मुस्लिम शासन के समानान्तर चलता आया है। जिस समय मध्य एशिया से उठकर आती हुई इस्लामी शक्तियां एक के बाद एक भारत के अतुल स्वर्ण भण्डार से आकर्षित हो 'धर्म युद्ध' करती हुई आ रही थीं, उस समय राजस्थान के राजपूत नृपों के अतिरिक्त उनका सामना करने वाली कोई दूसरी शक्ति नहीं थी। इस शक्ति के [illegible] के रूप में चारण-भाटों का [illegible] का साहित्य था। इसी साहित्य के प्रकाश में हम [illegible]

राम के गीत सुनने की कामना रखता था और उनके लिए युद्ध और दान में वीरता दिखाने के लिये प्रयत्नशील भी रहता था। डिंगल का यह सुविस्तार साहित्य संस्कृत साहित्य की परम्परा से प्रभावित होते हुए भी अपने आप में एक अभिनव प्रयोग था। इसका अपना अलग छंद विधान और अलंकार शास्त्र भी था। डिंगल का यह साहित्य वीर और श्रृंगार की दो प्रबल धाराओं में प्रवाहित हुआ। आगे चल के युगों में वीर रस का साहित्य अपना अस्तित्व समाप्त कर चुका था।

विषय सम्मिलित थे। ग्रंथों की टीकाएँ की गई जिनमें थोड़ी गद्य तथा शेष पद्य में थी। छंद अलंकार और कोष ग्रंथों का निर्माण भी किया गया।

राजनीति के प्रभाव से प्रायः अलग ही साहित्य का सृजन कार्य राज्याश्रय और दूसरे के उपाश्रयों और ज्ञान भंडारों को समृद्ध कर रहा था। साथ ही राजस्थान के दूसरे साहित्य के संरक्षण का कार्य भी इन भण्डारों द्वारा किया जा रहा था। जैन विद्वानों ने उसी समय के राजस्थान हस्तलिखित ग्रंथ और लिपि ...

ीकानेर राज्य के जिस २ स्कूल में अध्यापक बनकर ाए वहीं उन्होंने राजस्थानी के कवियों की नई पौध त्पन्न की। उनकी शिष्य परम्परा में आज भी नेक अच्छे कवि हैं। बीकानेर से यह नई लहर ोधपुर गई जहां राजनीति के क्षेत्र में लोक भाषा ो राष्ट्रीय आन्दोलन के गीतों की वाहिनी के प मे पहिले भी सम्मान मिल चुका था। फिर भी स लहर से नई रचनाओं को प्रेरणा मिली। आधु-निक काव्य का दूसरा युग श्री मेघराज 'मुकुल' की 'सैनाणी' से प्रारम्भ हुआ जिसने राजस्थानी के प्रति नरुचि जागृत की। मुकुल से प्रेरित होकर अनेक ैलों के कवि सामने आए। मुकुल का प्रेरणा स्रोत ाजस्थान का इतिहास था तो उनके बाद आने वाले ई कवियों ने लोक जीवन, किसान आदि को अपने ाव्य का विषय बनाया।

इस आधुनिकता से पृथक् रहकर प्राचीन राज-स्थानी का प्रवाह भी मंद गति से चलता रहा। दोहे, गीत और छप्पय आदि छंद लिखे जाते रहे। इस प्राचीनता को नया बाना पहिनाने वाले राज-स्थानी के प्रथम काव्यकार बादली के कवि श्री चन्द्रसिंह थे। बादली का जो सत्कार भारतीय विद्वानों द्वारा हुआ उससे राजस्थानी कवियों का उत्साह बढ़ चला। डिंगल से प्रेरणा लेकर उधर जोधपुर में नारायणसिंह ने सुन्दर रचनाएं कीं। नारायणसिंह मे नवीन और पुरातन का अभिनव सम्मिश्रण है। उनकी 'सांझ' आधुनिक काव्य प्रणाली का उत्तम उदाहरण है। गजानन ने खेत खलिहान और घर आंगन के गीत लिखे तो रेवतदान ने पीड़ित किसान की व्यथा को खोलकर दिखाया। झालावाड़ के रघुनाथसिंह हाडा ने अपनी निराली ही छटा से अति सुन्दर रच-नाएं प्रस्तुत की। हास्य रस के भी कुछ कवि सामने आए जिनमे विमलेश की रचनाओं का व्यंग्य सरा-हनीय है। 'उस्ताद' और सुमनेस जोशी की रचनाओं मे उनके राजनैतिक जीवन का जोश मुखरित हुआ। मनोहर शर्मा की अपनी शैली उनके अनेक काव्यों मे ठेठ राजस्थानी जीवन की झांकियां प्रस्तुत करने लगी।

कहानीकारों में नृसिंहराज पुरोहित, मुरलीधर व्यास, श्रीलाल जोशी, सोभागसिंह, रानीलक्ष्मी कुमारी, दामोदर प्रसाद आदि अनेक नाम उल्लेखनीय हैं। अनुसंधान के क्षेत्र में श्री नरोत्तमदास स्वामी, सीता-राम लालस, अगरचन्द नाहटा, डा० मोतीलाल मेना-रिया, कन्हैयालाल सहल, मनोहर शर्मा प्रभृति विद्वानों ने राजस्थानी की विशेषताओं को हिन्दी जगत के सामने प्रस्तुत किया।

आज राजस्थानी का क्षेत्र पहले से कई गुना अधिक विस्तृत है। राजस्थानी का प्रलोभन इससे दूर रहने वाले विद्वानों को भी अनेक कारणों से अपनी ओर आकर्षित कर रहा है। राजस्थानी का बृहत् कोष बन रहा है तो भारत की सभी भाषाओं में एक सराहनीय वस्तु बन कर रहेगा। राजस्थानी का भविष्य स्वर्णिम दीख रहा है। जन प्रदेश भाषाओं और संस्कृति को प्रोत्साहन देने की ओर युग का ध्यान जा रहा है और यदि यही गति रही तो वह दिन दूर नहीं जब राजस्थानी को अपना खोया स्थान पुनः प्राप्त हो सकेगा।

आधुनिक राजस्थानी पद्य की प्रवृत्तियाँ

श्री भूपतिराम साकरिया, जोधपुर

तलवार और कलम का सुन्दर समन्वय राजस्थान की अपनी सांस्कृतिक विशिष्टता है। एक ओर जहाँ राजस्थान ने अगणित बलिदानों द्वारा भारतीय स्वतंत्रता का दीपक निरन्तर प्रज्वलित रखा है, वहाँ दूसरी ओर साहित्य निर्माण के क्षेत्र में भी वह अग्रणी रहा है। हिंदी साहित्य के आदिकाल (वीर गाथा काल) का अधिकांश भाग ही साहित्य

परिस्थितियों के कारण राजस्थानी को देश के संविधान में मान्य चौदह राष्ट्रीय भाषाओं में स्थान नहीं मिल सका है किन्तु भारत [illegible] के इस युग में अपनी गौरवशाली परम्परा [illegible] राष्ट्रहित के लिये अपनी भाषा का बलिदान [illegible] राजस्थान ने अपनी चिर विदित उदारता का परिचय दिया है। [illegible] युग [illegible]

प्रवृत्तियों पर ही प्रकाश डालना है इसलिये हमारा आलोच्य काल विगत ४० वर्ष अर्थात् प्रथम महायुद्ध की समाप्ति के बाद का ही है।

(१) वीर काव्य प्रवृत्तिः—

"राजस्थान की चप्पा चप्पा भूमि थर्मोपोली है।" (कर्नल टाड) ऐसी वीर प्रसूता भूमि में वीर-पूजा का विशेष महत्व है। राजस्थान में शायद ही कोई ऐसा वीर, जूझार या सती हुई है, जिनकी पुण्य स्मृति में एकाध सुन्दर गीत की रचना नहीं हुई हो, एकाध दोहा नहीं लिखा गया हो। समग्र राजस्थानी साहित्य इस प्रकार वीर साहित्य की अमूल्य खान है, जिसने आधुनिक नेता पं० मदन मोहन मालवीय और महाकवि रवीन्द्रनाथ पर अपनी अमिट छाप छोड़ दी।[1] अपनी इस शानदार परम्परा को राजस्थान का आधुनिक कवि पूर्ण उत्तरदायित्व से निभाये जा रहा है। साहित्य में 'रजवट' की प्रेरणा देने वाले महाकवि सूरजमल मिश्रण[2] के पद चिन्हों पर चलते हुये अनेकानेक चरित्र और प्रशस्ति ग्रंथों का निर्माण किया गया है। स्व० हिंगलाजदान कविया कृत 'मृगया मृगेन्द्र' एक ऐसा ही उत्कृष्ट काव्य ग्रंथ है जिसमें कवि ने अपने आश्रयदाता ठाकुर शेरसिंह द्वारा तलवार से किये गये सिंह की शिकार का सुन्दर वर्णन किया है:-

सजि सारदूळ हापळ सबळ, जौम कवल माथै जड़ी।
कड़काय गैण हूंतां किना, धन्नय पर तड़ित पड़ी॥

सोन्याणा के स्व० केसरीसिंह बारहठ ने प्रताप चरित्र, राजसिंह चरित्र, दुर्गादास चरित्र, रूठी रानी आदि अनेक चरित-काव्यों द्वारा इस प्रवृत्ति को पुष्ट बनाया है। श्री मनोहर शर्मा कृत 'अरावली की आत्मा' और श्री नारायणसिंह भाटी विरचित 'दुर्गादास' जैसे प्रशस्ति-काव्यों द्वारा लेखकद्वय ने इसी परम्परा को आगे बढ़ाया है। जाति भेद और स्वार्थ रहित परम स्वामिभक्त दुर्गादास की प्रशस्ति कवि ने आधुनिक मुक्त-छंद में इस प्रकार गायी है'—

धीरज न इतो धारे हियो
कै आसरा थारो जस दरसाऊ प्रबंध मांही,
कवियों न लिखो अंग्रेज मन-मन—
सो बंधै किम अमीणा छंद मांही ?
दोयण कुण थारा दुर्गादास ?
दोयण थां ओमरा तूझ दोयण
न हिन्दुआं हेन हय पाड़िया,
न मुसल बारका बाढ़णी आवी,

---

१. (अ) संसार के साहित्य मे उसका निराला स्थान है। वर्तमान काल में भारतीय नवयुवकों के लिये तो उसका अध्ययन अनिवार्य होना चाहिए। —मालवीयजी

(ब) मैं तो उनको (राजस्थानी वीर गीतों को) संत साहित्य से भी उत्कृष्ट समझता हूँ। ... मुझे क्षितिमोहन सेन महाशय से हिन्दी काव्य का आभास मिला था, पर आज जो मैंने पायी है वह बिलकुल नवीन वस्तु है। ......आज मुझे साहित्य का एक नवीन मार्ग मिला है।

२. महाकवि सूरजमल के प्रमुख चार ग्रन्थ ये हैं – (१) वंशभास्कर, (२) वीर सतसई (३) बलवन्त विलास और (४) छंदोमयूख।

आगोर-आसरा-दुर्गादास। हय पाड़िया-युद्ध में घोड़ों को काट गिराना। बाढ़णा-काटने। बाढ़ाळी-तलवार

...रन गेरत मार्मी मानोर—
...रां बीरन मानतां पंद हल्दी ॥

महाकवि मिश्रण विरचित 'वीर सतसई' की ...ता को श्री नाथूराम महियारिया ने वीर, ...रसों, तथा कायरो आदि के [illegible] ...यों का अपनी 'वीर सतसई' में बड़ा ही विशद वर्णन ...ता है। दोनों का तुलनात्मक अध्ययन और काव्य ... सरसता का रोचक विषय है। वीरता में घोर– ... [illegible] के वीर का इस दोहे में महाकवि ...बड़ा ही सुन्दर वर्णन किया है।—

...र्य न ... [illegible] ...
... [illegible] ॥

वीरता का आचार करने वाला यही वीर समय परिवर्तन के साथ अहिंसक वीरता का ... बन जाता है:—

रण घोड़ा पर चढ़ियो, साथ लियो न हेक।
जिन हंदा पर ऊपरो याह' [illegible] ॥

(जिस वेशभूषा में ही अधिकतर देश ... वीर के रणभूमि में प्रस्थान करने को ... समय में रस भर वीर रसी बहती है कि ... [illegible] धारण कर और हाथ में ... [illegible] मातृभूमि के हेतु युद्ध में ... उनको इस वेशभूषा पर किये ही और ... न्योछावर है।)

मीरां नै आसान, हाथां हरवल `हालणो ।
किम हालै कुळराण, हरवल साहां हांकिया ॥
नरियंद सह नजरांण, झुक करसी सरसी जिकां ।
पसरैलो किम पाण, पाण छतां थारो पता ॥
सबळ पढावै सोस, दान धरम जिणरो दियो ।
रळणो पंगत राह, फाबै किम सोनै पता ॥

और इस प्रकार एक बार पुनः हमारे नेत्रो के सम्मुख महाराणा प्रताप और पृथ्वीराज राठौड के पत्रो मे उपस्थित दृश्य को लाकर चित्रित कर दिया है।[1]

कन्हैयालाल सेठिया ने 'पातळ और पीथळ' मे इसी दृश्य को हमारे सामने नई भाषा और नई चेतना के साथ स्वाभिमान के प्रतीक स्वरूप इस प्रकार जगाया है:—

पीथळ, के छिमता बादळ री,
जो रोकै सूर उगाळी नै ।
सिंघां री हाथळ सह लेवै,
बा कूख मिली कद स्याळी नै ॥
धरती रो पाणी पिवै,
इसी चातक री चूंच बणी कोनी ।
कूकर री जूंणा जिवै,
इसी हाथी री बात सुणी कोनी ॥
आं हाथां मे तलवार थकां,
कुण रांड कवै है रजपूती ।
म्यानां रै बदलै बैरयां रै,
छात्यां में रैवैली सूती ॥

(२) राष्ट्रीय धारा—एक प्रांतीय रूप के अभाव मे जन जागरण की वेला मे राजस्थान पिछडा रहा। उसकी समूह भावना को प्रेरणा न मिल सकी और उसकी शक्ति सुप्त तथा विशृंखल रही। देशी राज्य इस मार्ग मे बाधक बने। जनता दो पाटो के बीच मे घुन की भांति पिसकर भी आह न भर सकती थी। ऐसे समय मे भिन्न २ राज्यों मे स्थापित प्रजामंडलो और प्रजापरिषदो ने संजीवनी का कार्य किया। राष्ट्रीयता की वह उन्मत्त लहर जिसमे सारा देश प्रवाहित हो रहा था, राजस्थान ने अनेक बलिदानो मे सक्रिय योग दिया। फलस्वरूप जब सारा देश स्वतन्त्र हुआ तो राजस्थान की इक्कीस रियासतो का विलीनीकरण होकर एक प्रान्त का रूप धारण करना, अखण्ड भारत की एक क्रांतिकारी घटना थी। स्वतन्त्रता-आन्दोलन के साथ एक भाषा का महत्त्व भी राष्ट्रीय नेताओं और जनता ने समझा। परिणाम स्वरूप हिन्दी का राष्ट्रीय स्वरूप विकसित हुआ। पर राजस्थान के नेताओ को यह भांपने मे तनिक भी देरी न लगी कि यहां की जनता के पास पहुंचने का माध्यम हिन्दी नहीं है। वह तो राजस्थानी है और इसीलिये यहां के अग्रगण्य नेताओ मे सर्व श्री माणिक्यलाल वर्मा, जयनारायण व्यास, हीरालाल शास्त्री प्रभृति कवि हृदय राजनैतिक नेताओं ने राजस्थानी भाषा मे गीत व गाकर जन-जीवन मे चेतना फूंकी। मेवाड के किसानो को उद्बोधित करते हुये श्री वर्मा ने गाया:—

थे कुरसी पर थू ठूंठा बै,
थे गादी पर थूं घूंघा मरथ,

---

(१) इस ऐतिहासिक मान्यता को कि पृथ्वीराज राठौड ने महाराणा प्रताप को पत्र लिखा था, कई इतिहासकारो ने इतिहास विरुद्ध ठहराया है। (क) महाराणा प्रताप पृ० ११८-१११ (ले०) डा० एस० आर० शर्मा। (ख) Mewar and Mughal Emperors—by Dr. Gopinath Sharma.

यूं धरती सुरै सलाम करै,
    जिण रै नहीं उठावै जरा हाथ,
धारा गोळां पर मौत उड़ै,
    धारा रोळां पर है रागरंग,
पटकर यूं हंसणै सो धधकै,
    लाडै ज्वालामुखी-सी आग,
धाप धीरां में राख नहीं,
    वै रोव हवारै है परवान,
घर हुण बढ़ावो हुणो होम्यो,
    बढ़ी चेत्य है जागीजात।
[illegible]
    [illegible]
[illegible] ॥

राजस्थान के [illegible] शिवदान [illegible] 'लगवाट' में [illegible] और [illegible], पर [illegible] हुये कहा :—

[illegible]

आंदोलन री आंधी आई, जागी है धरती,
भारत छोडो अंग्रेजों, थे बात हुली है।

    गोरा घबराया
    हां रे, गोरा घबराया,
    दमन करण रा मारग अपनाया,
    गोरा घबराया…………।

महात्मा गांधी की महानता और [illegible] बार्ट का बारहठ केसरीसिंह ने इस प्रकार [illegible] किया है :—

    फोजां रोवै [illegible] री, मोरे [illegible],
    गांधी ! तैं सीधो समझ, भारत रो [illegible]
तो थी उत्तरदाय उपकार ने इस प्रकार :—
    [illegible],
    जिण गांधी री देख, भयो भरोसो, [illegible]

(२) प्रगतिवादी धारा।—[illegible]

[illegible]

रे धा पा भोळी हंसी जिका के मरती बेळा आवै है ।
रे धा नागए काळी जहर जिका
डाढां मे इमरत लावै है ।
इए घुंआधार रे पाचळ [illegible]
इक जोत जगै है जगमगती,
अंधार घोर आंधी प्रचण्ड,
आ घुंआधार धब धब करती ।
आवै है उर मे आग लियां
गढ कोटां बंगलां नै दहती ॥

विद्रोह का झंडा खड़ा करते हुये श्री गणेशीलाल 'उस्ताद' भगवान और कवि से किसानों और मजदूरों की दयनीय दशा का कारण पूछते है.—

थां कमतरिया रा हाथ हेम सूं जड़िया
जद मे क्यूं भूखां मरिया ?
कविराजा ! इणरो म्यानो[1] दो,
ठाकुर जी ! थे हरजाणो दो,
मे भरी कमाई खावै
धरती रो धन उपजावै
क्यूं जग माथै रा मोड पगां मे पड़िया

प्रगतिवादी अन्य कवियो मे सर्वश्री भीम पन्ड्या, स्व० मनुज देपावत, प्रेमचन्द रावळ, बार्नसिंह भाटी, विमलेश, सूर्यशंकर पारीक आदि प्रमुख है । श्री भीम पन्ड्या 'दिवलै री जोत' मे दीपक से साम्य-प्रकाश ला देने की प्रार्थना करता है :—

[illegible] दिवलै री जोत !
क्रांति री चूंधड़िया सूं लपट उठा दे ।
धरती रैग सूं लगा अम्बेटा
महलां री चोटी पहुंचा दे ।
अरा लोक निरधण री नींदा
महलां में सुख सूं सोज्यां है

थांरी काची नींद तोड
यूं चेतो अब बरातो रइजै ।
थे दिवलै री जोत !
सबै यूं एक सरीसी जगती रइजै ॥

(४) प्रकृति काव्य धारा:—प्रकृति ने अपना अवगुंठन उलट दिया है । अपने सच्चे आराधकों को पाकर उसने अपना अंग २ खोलकर, वरदान स्वरूप उनके सामने रख दिया है । उपमानों के नये हीरक-हारों को पहिन, नई सज्जा और नये आलम्बन ले, जब वह इस धरा पर उतरी तो 'सेठिया' का 'झेज-डलो' प्रकृति देवी का स्वागत करने को प्रस्तुत हुआ:—

म्हारे धुरधर रो है साथी
सुख दुख साथी झेजडलो,[2]
तिसां[3] मरै पिए छिया करै.
है करड़ी छाती झेजडलो ।
आंधू पी नै जीएो सीख्यो
एक जगत में झेजडलो,
सै मिट जासी पिए अमर
रै अेना एक जगत में झेजडलो ॥

प्रकृति काव्य की इस परम्परा में एक से एक बढ़कर काव्य संग्रह व मुक्तक प्रकाशित हुये हैं । चंद्रसिंह की 'बादळी' और 'लू'[4] वर्षा और ग्रीष्म का स्वाभाविक चित्रण है । 'लू' में स्वीगत विशेषताओं को अंकित करने में कवि अत्यन्त सफल रहा है । यह स्वयं तो अपने पति सूर्य के साथ रागरंग में मस्त है, पर अपने ईर्ष्यालु स्वभाव की वजह से कारण अन्य स्त्रियों को मिलने नहीं देती :—

आप रमें पिय गोद में
पति रै अनी लुवा ।

१. म्यानो—अर्थ बतलाना, गुत्थी सुलझाना । २. झेजडलो—खेजड़ो, शमी वृक्ष ।
३. तिसां—प्यासा । ४. लू—गर्मियों में चलने वाली गर्म और रूखी हवा ।

जोगी मैं तोरी सखी
ढूंढ़न निकले न्यार ॥

फिर भी 'टूं' की भयंकर तप्त और उसके [illegible] प्रसार को सहन करते हुये भी कवि को 'लू' से प्यार ही है क्योंकि वे ढूंढ़े भी तो बरसात को ला रही है :—

[illegible] बादलिया, [illegible] [illegible]
[illegible] ढूंढ़ लायो [illegible], [illegible] [illegible] ॥

[illegible] की ओर [illegible] [illegible] राजस्थानी [illegible] का [illegible] करता है। उनके [illegible] [illegible] के [illegible] [illegible] जीवन है, करता है —

[illegible] [illegible] [illegible], [illegible] बादलिया।
[illegible] [illegible] [illegible] ॥

[illegible]

[illegible] द्वारा कवि ने [illegible] [illegible] है। [illegible] छंदों में संध्या–सुन्दरी [illegible] कार्यकलापों द्वारा कवि ने [illegible] बना दिया है। 'सांझ' में संध्या [illegible] जीवन को [illegible] [illegible] में [illegible] रही है :—

सुरतीय [illegible] अम्बर ओट
निरखत [illegible] भी [illegible]
[illegible] [illegible] धीमी चाल,
मुस्काता नैना [illegible] भार।

संध्या हो गई है और गांव की [illegible] पर दीपक जलने आ रही है :—

[illegible] [illegible] [illegible] ओट
[illegible] [illegible] [illegible] [illegible]
[illegible] [illegible] [illegible] [illegible],
[illegible] [illegible] [illegible] [illegible] ॥

[illegible]

और मौलिकता है। राजस्थान के कण-कण में उनकी आत्मीयता है :—

रोही रोही[1] भटकतो, सेतो मोटा भार।
चितोड़ में आज नहीं छै लीलै रो असवार॥[2]
सीसोद्यां रो देसड़लो
थानै भेजे प्रेम-सनेसड़लो[3]
धरती री रगत पियासा में
जीवन रो आज अंदेसड़लो॥

(५) भक्ति-नीति प्रवृत्ति—राजस्थानी के प्राचीन और काव्य की भांति यह प्रवृत्ति भी बड़ी समृद्ध रही है। मीरा और दादू के इस प्रदेश में भक्तों और सन्तों का मार्गदर्शन जनता को बराबर मिलता रहा है। यह उन्हीं के व्यापक प्रभाव का परिणाम है कि भक्ति और नीति के गीत और दोहे अगणित संख्या में आज भी यहां की अशिक्षित जनता के मुख से बात २ में सुने जा सकते हैं। बहुत लम्बे समय तक ये समाज में नैतिक-मौखिक शिक्षा के माध्यम रहे हैं। परन्तु बदलते हुये इस यान्त्रिक युग में नैतिक शिक्षा का महत्व और भी बढ़ रहा है। राजस्थान ने इस सम्बन्ध में पहल की। नये युग के नये भावों तथा उपमानों को लेकर ये संत कवि श्रद्धा और संयम का पाठ सिखा रहे हैं। महाराज चतुरसिंह इसमें प्रमुख हैं :—

> रे मन क्षण ही में उड़ जाणो
> ई रो नहीं है ठोड़ ठिकाणो,
> रे मन क्षण ही में उड़ जाणो।

ऐसा प्रतीत होता है मानो ज्ञान की राम-मोट-रिया में से उसांस काढ़ते हुये कबीर बोल रहे हों।

मन की चंचलता और द्विदेवन की निराशे और पोस्टकार्ड की उपमा कितनी सटीक है :—

बारह तो बहतो फिरै, हरकीनै हरनाक।
जा री ह्वै ज्हीनै कहै, हियै निपाको राख॥

इस परम्परा में सर्वश्री अमृतलाल माथुर की 'मारवाड़ी गीत रामायण', मनोहर शर्मा की 'मरा-वली की आत्मा', भोमराज के 'मूंघा मोती', मांगीलाल चतुर्वेदी की 'मरुभारती', उदयराज उज्ज्वल कृत 'धूड़सार' तथा महर्षि शान्त कृत 'गुणवंती' आदि सुन्दर ग्रन्थ हैं, जिनमें समाज सुधार, और उद्बोधन आदि पर जहां एक ओर श्रेष्ठ सूक्तियां हैं तो दूसरी भक्ति-गंगा में निमज्जित करने की प्रबल शक्ति। 'धूड़सार' में उदयराज उज्ज्वल सामयिक चेतावनी देते हैं —

धार लियो नह येक उत्तम गुण अंगरेज रो।
औगण गह्या अनेक सिरदारो सोचो समझ॥

भोमराज 'मंगल' दुर्जन और काटे की तुलना करते हुये कहते हैं —

कांटो देवे फाड़, मंगळ काटो बार रो।
दुर्जन करै बिगाड़, मायो एकूं मंगळा॥

नीति सम्बन्धी श्री मांगीलाल चतुर्वेदी की सूक्ति का रसास्वादन कीजिये —

नकटी नर ना कै करै, सबो कसा में लेय।
चालै ? गहल कै करै, लेखर कै नारेळ॥

व्यंग्य अपने आप में मारक और सुधारक दोनों शक्तियों का अधिनायक होता है। तीरों से बने घाव तो कालान्तर में भर जाते हैं, पर व्यंग्य-बाणों के घाव आजीवन नहीं भरते। दूसरी ओर व्यंग्य ठोकर मनुष्य में आमूलचूल परिवर्तन ला देता है। राजस्थानी में प्रारम्भ में ही व्यंग्य का विशिष्ट स्थान रहा है, जिसमें न केवल शब्द शक्ति का चमत्कार अथवा अर्थ गाम्भीर्य ही रहता है, पर सुन्दर चित्र

1. रोही-जंगल। 2. लीलै रो असवार-महाराणा प्रताप। 3. सनेसड़लो-संदेशा।

सघन-जैसा

ओहो मैं तोहो मनी
मूपा बिनडे न्यार ॥

फिर भी 'नूँ' की भयंकर तन्न और उसके प्रगाढ़ प्रयत्नार को मान करते हुये भी कवि को 'कु,' में प्राप्त ... दे मूर्ख ही तो बरनात

... पत्नियों द्वारा कवि ने मनुष्य को ... है। ११५ छंदों में संध्या-सुन्दरी के ... कार्यकलापों द्वारा कवि ने अपना ... बना लिया है। 'तोल' में संध्या-... जीवन को अपने मांसल के किनारे ...

र्मा की 'धरती री धुन' इस दिशा मे बडी लोकप्रिय ही है। श्री मनोहर शर्मा के 'कुर्जा' के अतिरिक्त ी सूर्यशंकर की 'जीव समझोतरी' और 'गुणमाळा' भी सफलता प्राप्त की है। कहना नही होगा कि स और कवियो का ध्यान आकर्षित करने मे भारत सिद्ध लोक नृत्यकार श्री देवीलाल सामर का बडा ाथ रहा है। लोकगीतो पर आधारित उनके गीत ाट्य रंगमंच पर बडी सफलता से प्रदर्शित किये ये हैं। श्री मनोहर प्रभाकर और चन्द्रसिंह राठौड वोदित गीतकार है। हमारे ये गीतकार हमे बरबस ाचीन गीतों[1] की ओर खींच ले जाते हैं, जो भारतीय तिहास की विस्मृत कडियों को जोडने मे बडे ही ाभप्रद रहे। १८,००८ डिंगल गीतो के विशाल संग्रह के बाद भी अनेक संस्थाए और साहित्यकार इस कार्य को पूर्ण नही कर सके है। राजस्थान की सभ्यता, संस्कृति और इतिहास को समझने के लिये इनका वैज्ञानिक अध्ययन आवश्यक है।

प्रगतिवाद को छोडकर विविध वादो के चक्कर मे यहाँ का कवि नही पडा है। छायावाद, पलायनवाद और प्रतीकवाद की एकाध रचना को छोड कर यहा विशेष प्रगति नही हुई है। नारायणसिंह की 'सांझ' मे छायावाद की कुछ झलक देखी जा सकती है। प्रो० गणपतिचंद्र भंडारी की कविता 'मिनखपणे रो काळ' प्रतीकवादी प्रवृत्ति का उदाहरण है।

(७) अनुवाद प्रवृत्तिः—

(अ) संस्कृत सेः—राजस्थानी मे अनुवाद व टीकाओं की परम्परा १४ वी शताब्दी से निरंतर चली आरही है। परन्तु आधुनिक काल मे अनुवाद प्रवृत्ति का प्रारंभ महाराज चतुर्सिंह की भगवद् गीता समश्लोकी, गंगाजली टीका और भागीरथी, टिप्पणी से होता है। फिर तो धडाधड अनुवाद होने लगे। भगवद्गीता के चार और अनुवाद सर्वश्री हीरालाल शास्त्री, रामकर्ण आसोपा, मांगीलाल चतुर्वेदी और विमलेश ने किये हैं। 'दुर्गा सप्तशती' और 'महिम्न स्तोत्र' के सुन्दर अनुवाद श्री गिरधारीलाल शास्त्री ने किये हैं। महाकवि कालिदास कृत 'मेघदूत' के अब तक प्रकाशित चार अनुवादो की भूरि-भूरि प्रशंसा सर्वत्र हुई है। अनुवादक हैं सर्व श्री नारायणसिंह भाटी, मनोहर शर्मा, मनोहर प्रभाकर व मांगीलाल चतुर्वेदी। 'रघुवंश' और 'कुमारसंभव' के अनुवाद क्रमशः श्री चन्द्रसिंह और श्री किशोर कल्पनाकांत कर रहे हैं। भर्तृहरि के 'शृंगार शतक' के अनुवाद का कार्य श्री मनोहर प्रभाकर ने पूरा किया है।

अन्य प्राचीन भाषाओं से पाली के 'धम्मपद' और प्राकृत के 'गाथा सप्तशती' के सुन्दर अनुवाद क्रमश श्री मनोहर शर्मा और चन्द्रसिंह राठौड ने किये है।

(ब) हिंदी से —विद्यापति की 'पदावली', तुलसी की 'कवितावली', रसखान के सवैये तथा सूरदास के कतिपय 'पदों' और जयशंकर प्रसाद की 'कामायनी' के अनुवाद क्रमशः सर्व श्री गोपाल कृष्ण कल्ला, सोमदत्त दवे, भंवरसिंह और रेवतदान चारण ने प्रस्तुत किये है।

(स) इतर भाषाओं से —महाकवि रवीन्द्रनाथ टैगोर की 'गीतांजली' का सुन्दर पद्यानुवाद रामनाथ व्यास ने किया है। [illegible]

---

१. राजस्थान भारती पृ० ७३ वर्ष ३ अंक २ डिंगल गीतों के विषय मे ८० बदरीप्रसाद साकरिया कहते है, "डिंगल के गीत छंद का उत्कृष्ट संस्कृत साहित्य मे भी नहीं है, भारत की अन्य भाषाओं की तो बात ही क्या ? साहित्य संसार को डिंगल की यह अनुपम देन है।"

में मुहावरों और लोकोक्तियों का प्रयोग एक ओर जहाँ भाषा की समृद्धि का द्योतक तो है ही, वहाँ दूसरी ओर व्यापक प्रभाव डालने में इनका बड़ा हाथ है। वैसे तो नीति–परक दोहों में साधारणतया ओज स्पष्ट होता ही है, पर प्रमुख कवियों की यह [illegible] विशेषता बन जाती है। महाकवि अमरदान [illegible] कवि हैं, जिन्होंने कतिपय औरों– [illegible] दार्शनिक विचारों को व्यास–कथा में और [illegible] द्वारा लिखे से बचाने का प्रयास किया है। [illegible] सन् १९४६ के भयानक [illegible] पर एक सुन्दर पद्य है। रामसनेही मंडलार [illegible] को देख कर उन्होंने कहा था—

[illegible] से [illegible], [illegible] कर प्रेम।
[illegible] फिरै, [illegible] न [illegible] नेम॥

[illegible] की [illegible] पर 'कलदार कलदार' [illegible]

वास्तविकता तो यह है कि वीरता और प्रेम [illegible] को एक ही सम्पुट में बाँधकर यहाँ साहित्य [illegible] का मनोरंजन किया गया है। वीर रस के [illegible] के लिये जहाँ एक ओर रौद्र, भयानक आदि रसों से काम लिया गया है तो शृंगार, हास्य और [illegible] रसों के द्वारा इन प्रेमाख्यानों को [illegible] कथाओं के आधार पर सुन्दर काव्य ग्रंथों का [illegible] किया गया है। आधुनिक युग में इस [illegible] के ख्याति प्राप्त कवि हैं श्री मेघराज 'मुकुल', जिनकी 'सेनाणी' कविता अमर हो गई है। [illegible] अपने ओजस्वी [illegible] से कहती है :—

बोली रजपूतानी, नाथ, आज थे मती पधारो [illegible]
तलवार बताओ थे आगूं, थे [illegible]

[illegible] हो जाने पर भी [illegible] को [illegible] देता है और वह एक [illegible] को [illegible] है [illegible] लिये भेजता है :—

वर्मा की 'धरती री धुन' इस दिशा में बड़ी लोकप्रिय रही है। श्री मनोहर शर्मा के 'कुर्जां' के अतिरिक्त श्री सूर्यशंकर की 'जीव समझोतरी' और 'गुणमाळा' ने भी सफलता प्राप्त की है। कहना नहीं होगा कि इस ओर कवियों का ध्यान आकर्षित करने में भारत प्रसिद्ध लोक नृत्यकार श्री देवीलाल सामर का बड़ा हाथ रहा है। लोकगीतों पर आधारित उनके गीत नाट्य रंगमंच पर बड़ी सफलता से प्रदर्शित किये गये हैं। श्री मनोहर प्रभाकर और चन्द्रसिंह राठौड़ नवोदित गीतकार हैं। हमारे ये गीतकार हमें बरबस प्राचीन गीतों[1] की ओर खींच ले जाते हैं, जो भारतीय इतिहास की विस्मृत कड़ियों को जोड़ने में बड़े ही लाभप्रद रहे। १८,००० डिंगल गीतों के विशाल संग्रह के बाद भी अनेक संस्थाएं और साहित्यकार इस कार्य को पूर्ण नहीं कर सके हैं। राजस्थान की सभ्यता, संस्कृति और इतिहास को समझने के लिये इनका वैज्ञानिक अध्ययन आवश्यक है।

प्रगतिवाद का स्वागत विविध वादों के पचड़े में यहाँ का कवि नहीं पड़ा है। छायावाद, पलायन-वाद और प्रतीकवाद की एकाध रचना को छोड़ कर यहां विशेष प्रगति नहीं हुई है। नारायणसिंह की 'साक्ष' में छायावाद की कुछ झलक देखी जा सकती है। प्रो० गणपतिचंद्र भंडारी की कविता 'मिनखपणे री बाळ' प्रतीकवादी प्रवृति का उदाहरण है।

(७) अनुवाद प्रवृति:—

(अ) संस्कृत से.—राजस्थानी में अनुवाद व टीकाओं की परम्परा १४ वीं शताब्दी से निरन्तर चली आ रही है। परन्तु आधुनिक काल में अनुवाद प्रवृति का प्रारंभ महाराज चतुरसिंह की भगवद् गीता समश्लोकी, गगाजली टीका और भागीरथी, टिप्पणी से होता है। फिर तो धड़ाधड़ अनुवाद होने लगे। भगवद्गीता के चार और अनुवाद सर्वश्री हीरालाल शास्त्री, रामकर्ण आसोपा, मांगीलाल चतुर्वेदी और विमलेश ने किये हैं। 'दुर्गा सप्तशती' और 'महिम्न स्तोत्र' के सुन्दर अनुवाद श्री गिरधारीलाल शास्त्री ने किये हैं। महाकवि कालिदास कृत 'मेघ-दूत' के अब तक प्रकाशित चार अनुवादों की भूरि-भूरि प्रशंसा सर्वत्र हुई है। अनुवादक हैं सर्व श्री नारायणसिंह भाटी, मनोहर शर्मा, मनोहर प्रभाकर व मांगीलाल चतुर्वेदी। 'रघुवंश' और 'कुमारसंभव' के अनुवाद क्रमशः श्री चन्द्रसिंह और श्री किशोर कल्पनाकांत कर रहे हैं। भर्तृहरि के 'शृंगार शतक' के अनुवाद का कार्य श्री मनोहर प्रभाकर ने पूरा किया है।

अन्य प्राचीन भाषाओं में पाली के 'धम्मपद' और प्राकृत के 'गाथा सप्तशती' के सुन्दर अनुवाद क्रमशः श्री मनोहर शर्मा और चन्द्रसिंह राठौड़ ने किये हैं।

(ब) हिन्दी से—विद्यापति की 'पदावली', तुलसी की 'कवितावली', रसखान के सवैये' तथा सूरदास के कतिपय 'पदों' और जयशंकर प्रसाद की 'कामायनी' के अनुवाद क्रमशः सर्व श्री गोपाल कृष्ण कल्ला, श्रीमदन दवे, सांवतसिंह और रेवतदान चारण ने प्रस्तुत किये हैं।

(स) इतर भाषाओं से—महाकवि रवीन्द्र-नाथ टैगोर की 'गीतांजली' का सुन्दर पद्यानुवाद रामनाथ व्यास ने किया है। यहीं से के 'ि[illegible]

1. राजस्थान भारती पृ० ७७ वर्ष ३ अंक २ डिंगल गीतों के विषय में ए० बदरीप्रसाद साक-रिया कहते हैं, "डिंगल के गीत छन्द का उल्लेख संस्कृत साहित्य में भी नहीं है, भारत की अन्य भाषाओं की तो बात ही क्या ? साहित्य संसार को डिंगल की यह अनन्य देन है।"

written in a country church yard का 'शोकगीत' के नाम से श्री विमलसिंह चौहान ने अनुवाद किया है। जबकि उमर खैयाम की रुबाइयों के दो सुन्दर अनुवाद श्री मनोहर शर्मा व श्री अमर-[illegible] कर चुके हैं।

तुलनात्मक अध्ययन की दृष्टि से नीचे फिट्ज़जे-राल्ड के अंग्रेजी अनुवाद के साथ उपर्युक्त दोनों कवियों की 'उमरखैयाम' की रुबाई दी जा रही है। अनुवाद की विशेषता है कि दोनों में से किसी ने भी शब्दानुवाद पर ध्यान न देकर भावानुवाद पर ही बल दिया है।

Awake! for [illegible] in the Bowl of Night
Has flung the [illegible] that
Puts the Moon to flight,
And lo! the Hunter of East has caught
The Sultan's [illegible] in a noose of light.

पड़ी चाकरी चूक धणी बर धणो [illegible]
मुरझो चामण छोड़ रामगिरि मा [illegible]
जनक-सुता रे स्नान जोग रो निरमल [illegible]
मैं'रो बिरछां छांह जाय न वर्ष [illegible]
(नारायणसिंह [illegible])

चामण की रम चूक चाकरी मान बड़ाई खो [illegible]
एक बरस को मैं देसूं'टो कोई यक्ष [illegible]
बिरछां की सीळी कुंजा मैं रामगिरि का [illegible]
सीतामाता के न्हावण सूं ओरूं अळ मैं पुन [illegible]
(मनोहर शर्मा)

एक यक्ष मनचाहो करी चाकर की सेवा [illegible]
धण प्यारी री सुध में भोरो करो भूल [illegible]
देस निकाळो मिल्यो दंड अर रामगिरि [illegible]
जठै सघन तरु छांह पुन्य जळ अमर [illegible]
([illegible])

उर्दू साहित्य

अज मोहम्मद इफ्तिखार अली शमीम *अधीक्षक, राज्य केन्द्रीय पुस्तकालय, जयपुर।*

यह बात बिल्कुल जाहिर है कि हर अदब के लिये जबान और हर जबान के लिये अदब लाजिम व मलजूम चीज़ हैं। राजस्थान नाम है कदीम खुद मुख्तियार रियासतों के रकबे और साबिका सूबे अजमेर मेरवाड़ा के रकबे के मजमुए का। इस बात का भी आप साहिबान को इल्म है कि हर खुद मुख्तियार रियासत का जो कदीम हो या जदीद किसी न किसी तरह मुगलिया खानदान के बादशाहों से ताल्लुक रहा है और अजमेर तो शाहाने वक्त का जियारत गाह भी था और बराहेरास्त शाही दरबार से मुताल्लिक भी। लिहाजा उर्दू जिसकी इब्तदा दिल्ली में हुई या दक्कन में या पंजाब में, शाही राजधानी में राइज होने के दिनों में राजस्थान में कुछ दूर नहीं रही। मुझे इसी जबान के अदब की बाबत कुछ अर्ज करना है। गालबन्ता नामुनासिब न होगा अगर पहले यह अर्ज करूं कि जबान की तहकीकात करने वालों ने अपनी कोशिशों और छानबीन का मैदान या दिल्ली को बनाकर हजरत अमीर खुसरो को उर्दू का बाबा आदम माना है या शाहजहानी लश्कर को जिसको उर्दूए मुअल्ला कहा जाता था। ख्वाजा हसननिजामी मरहूम ने मशीद तहकीक करते हुए हजरत महबूब इलाही सुल्तान निजामुद्दीन औलिया के हुक्म से अमीर खुसरो और रामदेव को इसका मूर्शीद करार देकर नाजिम कारी को इस महल [illegible] बुनियाद करार दिया है। दक्कन वालों ने हजरत ख्वाजा सैयद मोहम्मद गेसू दराज बन्दा नवाज के जमाने तक इसका सुराग निकाला है यानी ईसवी चौदहवी सदी।

मैं बिला खौफे तरदीद कह सकता हूं कि राजस्थान के रेगिस्तान और कोहिस्तान में उर्दू के लाल मोती तलाश करने की जैसी चाहिये मेहनत नहीं की गयी। वर्ना मुमकिन था और है कि उर्दू का पौदा इसी सरजमीन में फूटना साबित होता या हो जाये। इसलिये कि हजरत बाबा साहब मौसूफ के दादा पीर ख्वाजागरीब नवाज अजमेरी या इन्हीं के जमाने के बुजुर्ग हजरत सुल्तानुत्तारेकीन ख्वाजा हमीउद्दीन नागौरी की मादरी जबान फारसी थी और मुकामी लोग इससे नावाकिफ थे। लिहाजा यह बुजुर्ग जिस जबान में यहां वालों से गुफ्तगू करते होंगे और वे जिस भाषा में यह जवाब देते होंगे वह यकीनन ऐसी होगी जिसको एक दूसरा समझ सके। यही उर्दू की इब्तदा है।

इस किसी कदर लम्बी तमहीद से मेरा मकसद यह है कि राजस्थान जिस तरह जबान के बारे में पहल का मरतबा हासिल कर सकता है, उसी तरह इसका उर्दू साहित्य भी बहुत पुराना है। जिसके सबूत में सिर्फ एक वाकए की तरफ मैं आपकी तवज्जोह दिलाता हूं। आपको मैं बहुत से माहिरात वाकिफ होंगे कि अप्रैल मार्च १९५६ में अन्जुमन तरक्किए उर्दू राज्य जयपुर में एक कन्वेन्शन किया था। इस कन्वेन्शन में किताबों की नुमाइश भी की गई थी। इसी किताबों में एक मसनवी दीवान का उर्दू तरजुमा भी था जो फारसी में नहीं बल्कि लकीरें में मुसलसिल रंग के देशी कागज पर लिखा हुआ था। इस किताब के हासिल करने

और दुनिया के नाजुक रखने वाले को मकबूल है कि किसी राजपूती ने हार न दी बल्कि उनको समझा यह नहीं कि वह कैसा अनमोल रत्न है। मारफत [illegible] ने इसको [illegible] किया और [illegible] [illegible] शायरी के बाद गाईड ही लिया। इसकी निगाह कायनाती [illegible] की ओर है कि हमारी हिन्दुस्तान के उर्दू अदब का यह [illegible] हुआ है। अब यह [illegible] [illegible] की [illegible] है और [illegible] की आ रही है। इसकी [illegible] के [illegible], [illegible] [illegible] और हिन्दी के [illegible] [illegible] और यह [illegible] उर्दू [illegible] का [illegible] है।

[illegible] पढ़ने पर खुशी है, जिसमें उर्दू [illegible] नज्म और नस्र के नमूने मौजूद हैं। अगर बड़ी और छोटी [illegible] [illegible] अंदाजा किया जावे तो बहुत बड़ा [illegible] हो सकता है। [illegible] [illegible] तकरीबन तैयार है और [illegible] [illegible] भी तैयार होने वाला है और [illegible] [illegible] का काम जारी है।

जाहिर है कि [illegible] में यह उर्दू [illegible] तो आज है। आज की उर्दू [illegible] और इसका [illegible] [illegible] है। [illegible] इसमें एक करीब [illegible] [illegible] [illegible] का पता मिलता है, जो और [illegible] [illegible] [illegible] है। वह जैसे उर्दू के शायर [illegible] [illegible] [illegible] भी है। इनका [illegible] [illegible] [illegible]

इसी तरह दिल्ली, लखनऊ, यू० पी० और दीगर मुकामात के फकीर राजस्थान में पाये जाते हैं। ज्यूं ज्यूं जमाना गुजरता गया और उर्दू जबान साफ होती गयी, राजस्थान के शायरों के शेर भी आसान से आसान उर्दू मे ढलने लगे। उर्दू अदब की सब से बड़ी सिफत यह ही है और होनी चाहिये कि वह आसान जबान में आम फेहम हो और इस हालत में अपना रंग कायम रखे। चुनाचे राजस्थान के चन्द पुराने शायरों के एक–एक दो–दो शेर इस बात के सबूत मे मुलाहिजा फरमाइयेः—

(१) मीर वाजिद अली आशुफता कहते हैं :—

रंजो गम कट जायेंगे दो चार दिन की बात है
यह भी दिन कट जायेंगे दो चार दिन की बात है

(२) मौलाना तसलीम फरमाते हैं—

क्या भरोसा है जिन्दगानी का
दिन अगर है लिया तो रात नहीं
अपना अपना पड़ा है क्यो रोना
कोई दम मे यह कायनात नहीं

(३) मीर हैदर हसन अली व यक्ता—

जो उस गुल के यहां नामं का चर्चा निकल आया
चमन मे आज मुंह गुन्चो का इतना सा निकल आया
रकीबे रूसियाह ने उन पे जाहिर की मेरी चाहत
बनाने मुद्दई से मुद्दआ अपना निकल आया

(४) पंडित शिवनाथ शेष—

जिसको कोई बुरा है उनसे शेष,
काम कोई बुरा नहीं होता।
शादीओ' गम का जमाना साथ है
सिलका देता यह जमाना साथ है

(५) साहबजादा महमद अली खां तैमस—

पल में रोता है पल मे गाता है,
यार क्या है अजब तमाशा है।

(६) मिर्जा माइल—

वल्लाह दुश्मनी है बड़ी आबरू के साथ
जाना किसी के दर पे किसी आरजू के साथ
रुसवाइयां उठाई और मद्दआ न निकला
दिल के सिवा किसी को जब राजदां बनाया

(७) अख्तर मिर्जा अख्तर—

शायद के मेरदे कि हवा इनको लग गयी
दीवाना काम करने लगा होशियार का
आई बहार आए, सुनी क्या बहार की
अन्जाम जानते हैं जो होगा बहार का

(८) मन्जूर अहमद कौसर—

मुझको नहीं दिमाग गमे रोजगार का
दीवाना हूं कि काम करूं होशीयार का

(९) मन्सूर हुसैन मनहर—

और मैंने तो किया आपना परेशां होकर
तुम पशेमां न करो मुझको पशेमां होकर
दिल मे पैदा तो किये आते हैं मेहमां होकर
दिल से अरमान निकलते नहीं पैदा होकर

उर्दू साहित्य के खिलाफ आम पर एक एतराज यह किया जाता है कि इसके गुजरते जमाने की इसमें गुल बूटे पाये जाते हैं या मजाजी के मैदान मे विदेशी पहलवान नजर आते हैं। यह ऐतराज इस हद तक तो ठीक है कि ऐसा ज्यादा हुआ है मगर यह कि हिन्दुस्तानी गुल फल और हिन्दुस्तानी किस्सो रवाज मेले ठेले बल्कि हिन्दू धर्म की रस्मे और वाकियात से उर्दू साहित्य खाली हो बिलकुल गलत है। लिहाजा इसके सबूत मे हम सैयद बाकर हुसैन राना मरहूम सेवकराम, ? नर बीकानेर की सब अच्छी नज्म ? मे ? चन्द पेश करते है कि जो उन्होंने मुसलमान और हिन्दुओं पर लिखी थी। कहते है—

सृजन-चेतना

"अरसिकेषु कवित्व निवेदनम्—
शिरसि मा लिख, मा लिख, मा लिख।"

—"भवभूति"

सूरज का गान

मधुर्वन्ती

गीत

मेरा स्वप्न, मेरी माला

[illegible]

गीत

[illegible]

[illegible]

एक | मैं ऐसा दीप जलाता हूँ
दो | रूमानी गीत
दो | मेरे दुश्मन ने मुझसे कहा
तीन | यह मेरी है सारा माला
चार | गीत
पाँच | विरह गीत
छः | मेरा सावन का प्रभात
सात | [illegible]
आठ | सावन का रंग
नौ | [illegible]
दस | [illegible] का बाजार
ग्यारह | दुखी भिखारी
बारह | एक पत्र
तेरह | [illegible]
चौदह | [illegible]
पन्द्रह | [illegible]
सोलह | [illegible]
सत्रह | [illegible]

उन्नीस

मानवीय श्री हरिभाऊ उपाध्याय, वित्त मंत्री, राजस्थान, जयपुर

अनुराग कहे मधु है, रसने–
वैराग्य कहे हटजा, हटजा।
अनुराग विराग में द्वन्द छिड़ा–
भ्रम कहता है बहजा, बहजा।
अज्ञान की चाह यही जग में–
सुख साधन में लगजा, लगजा।
पर ज्ञान पुकार कहे मन में–
प्रभु के रंग में रंगजा, रंगजा।

प्रेम कहे मैं रस देता, आशीष है मिलती आदर में।
फल-फूलों में रस है झरना, जीवन मिलता है गागर में।
तन से तन मन जब मिलता है, तब प्रेम उसे सब कहते हैं।
पर जब मन से मन जुड़ता है, तब आदर, सागर, गागर में।
जब नारी नर का जोड़ा है, रस प्रेम फुहार बरसता है।
भगवान का ध्यान रहे उनमें, भगवान है सादर आदर में।

सृजन का मान

[illegible]

गीतों का इतना मान, ध्यान से सुन लेते,
भावों का इतना मान, हृदय मे गुन लेते ।
सपनों का इतना मान, मुग्ध उन पर होते,
सत्यों का इतना मान, विचारों में खोते ।

कोई गीतों को कभी याद कर गा लेता,
भावों को कोई भाव कदाचित ही देता;
सम्मोहन में सपने सपने ही रह जाते,
कब सत्य सफर मे उतर धरा तक आ पाते ।

चतुष्पदियाँ !

अब कोई गम न रहा और खुशी खुशी न रही ।
इक खुशी गम रहे कि अब कोई दर्द न रही ।
मेरी हर सांस हर नजर में बसे हो जैसे ।
तुमने जीते जी ही खुशी मेरी जिन्दगी न रही ।

[illegible] किरणों से गगन को बाँधा ।
कुसुम-[illegible] से [illegible] के आँगन को बाँधा ।
इतना मुस्काते हैं कि [illegible] से [illegible] हैं ।
[illegible]-डोरी से [illegible] किरन को बाँधा ।

[illegible]

[illegible]

"गीत"

श्री ताराप्रकाश जोशी

फूलो को सौरभ का बंदी बनकर मै बीमार हो गया।
बगिया वालो! मुझे छोड़दो काँटो का चुम्बन करने दो॥

बंद किया है मेरे तन को
शीश महल के दालानो ने।
मन पर पहरेदार बिठाए
शृंगारो ने मुस्कानो ने॥

फिर भी मै बेचैन बहुत हूँ सुख के सारे उपकरणो मे।
सब परदे हटवा दो मुझको पीड़ा के दर्शन करने दो॥

धरती ने जाया है मुझको
प्राण इसी मे रज कण के है।
कुटियाओ ने पाला मुझको
प्राण उन्ही की धड़कन के है॥

युगो युगो से मेरे मन मे मान बहुत मेरी मिट्टी का।
सोने की मूरत हटवा दो मिट्टी का पूजन करने दो॥

मेरे गीतो के मेघो को
आज क्षितिज पर हो मत टोको।
उन्हे घुमड़ने दो फिरने दो
उन्हे बरसने से मत रोको॥

मै इस सारी दुनियाँ का हूँ यह सारी दुनियाँ मेरी है।
आज मुझे जन जन के मन की चाहो का वर्णन करने दो॥

मेरा स्वप्न : तेरी माया

• श्री ज्ञान भारिल्ल

मेरे द्वार मन उस दिन था भीख माँगने आया,
मैंने अपने स्नेह-स्पर्श से उसमें प्राण जगाया,
मेरे स्वप्न-स्वप्न को सत्यं, शिवं, सुन्दरम् शोभा—
मुझको क्यों मोहेगी तेरी भुवनमोहनी माया ?

मेरी ही छाया में ज्योतित तेरे चाँद सितारे,
सूरज को मैंने ही दान दिए अनन्त उजियारे,
पावक को ज्वलनता दी है, सागर को गहराई—
मुझसे ही [illegible] सँवर गए सपन कजरारे,
मैंने ही उस दिन फूलों की सेज तुझे सौंपी थी—
अब क्या मान करेगी मुझसे तेरी [illegible] ?

मेरी [illegible] का [illegible] [illegible] भुवन में गुंजित,
तू क्या, तेरे रोम रोम में मेरा जीवन मुखरित,
[illegible] [illegible] कल्पना की रेखाएँ खींचूँ—
तू क्या, [illegible] [illegible] की [illegible] करदूँ चित्रित,
[illegible] करदूँ [illegible] के [illegible] में [illegible]—
[illegible] [illegible] हो जाता ?

[illegible]
[illegible]
[illegible]
[illegible]
[illegible]
[illegible]

एक दुर्घटना की है चाह

श्री कर्पूरचन्द्र 'कुलिश'

बहुत लम्बी जीवन की राह।
एक दुर्घटना की है चाह।
चला तो संग न कोई बाँह,
रुका तो मिली न शीतल छाँह
बहुत सोचा, पर बनी न बात
सह न पाता मस्तक आघात
लौट कर जाने का न उपाय
जिन्दगी सरिता का पर्याय
हुआ जीवन जैसे निरुपाय
न जाना जीने का अभिप्राय
कहाँ जाना है, मुझे न ज्ञान
पन्थ का ही इतना अहसान
चला आया हूँ इतनी दूर
किन्तु अब थक कर चकनाचूर
कहीं कुछ मिल जाये विश्राम
जेल, अस्पताल, पागल धाम
सभ्यता के ये आशादीप
निस्सहायों के अधिक समीप
रुग्ण मानवता के विश्राम
हरेंगे निश्चय मेरा श्राम

× × ×

अस्पतालों की सज्जा शान
पथ्य, शैय्या, परिचर्या मान
देह रक्षित, पर व्याकुल प्राण
दुःख में नहीं यहाँ भी त्राण
दुःख का घनीभूत आकार
जिधर देखो है हाहाकार
वेदना से बोझिल यह मन
कह उठा लाओ परिवर्तन

जेल का जीवन यन्त्र समान
शयन, भोजन, श्रम में अवसान
गणित ही मानव की पहिचान
निराला इसका वर्ण विधान
दृष्टि के आगे बस दीवार!
लौह सम चेतन का शृंगार
जहाँ भय, संशय का व्यापार
चला करता नित नये प्रकार
प्रेम कहलाता है षडयन्त्र,
आत्म-सुख मूल यहाँ का मन्त्र
एकरसता से कुण्ठित मन
कह उठा लाओ परिवर्तन
पागलों की दुनिया ही भिन्न
व्यष्टि से है समष्टि विच्छिन्न
न अपना और पराया ज्ञान
न सुख-दुख से कैसी पहिचान
तिरोहित यहाँ भेद का भाव
किन्तु तन या मन से अलगाव
भुलाने आया था सन्ताप
नहीं रहने देते चुपचाप
मुझे बेसुधियों से है प्यार
यहाँ करते इसका उपचार
ग्लानि से व्याकुल-विह्वल मन
कह उठा लाओ परिवर्तन
कहाँ जाऊँ क्या करूँ उपाय
चेतना है जैसे हत-प्राय
लगादूँ क्यों न आखिरी दाँव
किसलिए करूँ व्यर्थ पछताव

जहाँ चिर शान्ति, विगत अवसाद
सभी मिट जाते दुःख विषाद
बढ़ चले नन्हा [illegible] उस ओर
[illegible] मंजिल का छोर
किन्तु [illegible] स्वर [illegible]
न [illegible] [illegible] नैन
'सुनो ! [illegible] गयी, [illegible]
[illegible]
[illegible] दीप देता मुस्कान
[illegible]
[illegible]
[illegible]"
[illegible] अभिमान
[illegible] जीवन का [illegible]
[illegible] विश्राम
[illegible] विराम

[illegible]

गीत

[illegible]

पता नहीं कौनसी घड़ी थी-
मेरे गीत कि जब जनमे थे,
बचपन में सब तक बेचारे
[illegible] रोते आये

शायद उस दिन सावन हो थी-
शाम अंधेरे में मिलती है,
या फिर जलती दोपहरी थी-
आगे वैसी ही जाती है।

पता नहीं, पर बुरी घड़ी थी-
[illegible]
सावन में भी सब रो-
[illegible] भिगोये आये।

किन्तु [illegible] नहीं पाये [illegible]
[illegible] पर आ पहुँचे
[illegible]
[illegible]

[illegible]

प्रो० प्रकाश 'आतुर' महाराणा कालेज, उदयपुर

एक बूँद अमृत की मुझे पिपासा है,
प्यासा हूँ, इसलिये पुकारा करता हूँ।

जाने कब पतवार लहर में खो जाये,
मरघट बने न कब मन के विश्वासों का ?
जाने किस क्षण मुर्झा जाये प्राण कुसुम,
जाने कब लुट जाय, काफिला साँसों का ?

जाने किस क्षण नींद सपन को आ जाये ?
सपना जाने किस क्षण स्वयं बिखर जाये ?
जाने किस क्षण पथरा जाये नयन-मंदिर,
प्यासा हूँ, इसलिये निहारा करता हूँ।
एक बूँद, अमृत की मुझे पिपासा है,
प्यासा हूँ, इसलिये पुकारा करता हूँ।

चलते-चलते मिले न जाने कब मंजिल ?
किसे पता, मंजिल तक चरण न चल पायें
किसे पता, कब बौरायें मन की ममता
जाने किस क्षण मन की तृष्णा छल जाये।

जाने कब शृंगार अरथिकर हो जायें ?
मन की करुण पुकार शून्य में खो जायें।
जाने किस पतझर का झोंका रूप लूट ले,
रूपातुर जिन्दगी सँवारा करता हूँ।
एक बूँद, अमृत की मुझे पिपासा है,
प्यासा हूँ, इसलिये पुकारा करता हूँ।

ध्वनि-प्रतिध्वनियों की राहों पर स्वर का पंथी,
जाने कब थक कर स्तब्ध सा गुमसुम हो जाये ?
जाने कब सीमान्त-गगन की परिधि लाँघ कर,
मेरे मन का राजहंस, फिर कभी न आये।

जाने कब पथ पर अँधियारा छा जाये ?
किसे पता, कल सुबह किरण हम देख न पायें ?
जाने किस बदली का टुकड़ा चाँद घेर ले,
रह-रह अपना चंद्र दुलारा करता हूँ।
एक बूँद अमृत की मुझे पिपासा है,
प्यासा हूँ, इसलिये पुकारा करता हूँ।

हास तुमने वखेरा

● श्री विष्णु खन्ना

हास तुमने बखेरा तनिक सा मधुर,
चाँद ने पी लिया मुसकराने लगा।

गात छू कर तुम्हारा खिली चाँदनी,
गीत सुनकर तुम्हारे बनी रागनी,
कोकिला ने कहीं भूल में सुन लिये
स्वर, बनी कंठ की भाग्य में वह धनी,

गीत संगीत की सीत सी धार में,
रह गया तट बिचारा ठगा का ठगा।"

प्राण के कुंज की तुम अमर गन्ध हो,
प्यार के गान में हो कमल की गिनी,
गीत की कल्पना की शुभे प्रेरणा
[illegible] वह [illegible] है जिसे तुम मिली,

छन्द के भेद [illegible] झिलमिल हुए,
गूढ़ [illegible] जिनको सजाने लगा।"

[illegible] तुमको [illegible] था किसी प्यार ने,
[illegible] निर्माण का जो कि कारण बना,
[illegible] जिस [illegible] के [illegible] में हुआ,
[illegible] कौ [illegible] की [illegible] गई [illegible]।

[illegible] का [illegible] जिसे [illegible] गया,
[illegible] मुसकाने लगा।"

[illegible] को [illegible] हुआ,
[illegible]
[illegible] की [illegible]

[illegible] मुसकराने लगा।

[illegible]
[illegible]

"त्योंहार के पल"

श्री चन्द्रकुमार 'सुकुमार'

त्योहार मधन ग्रमराई का,
बजना केवल शहनाई का,
साँसों में सौरभ घोल गया—
झोंका कुछ ऐसा आया था पुरवाई का।

यह जीवन की क्षणभंगुरता मुस्कानों में—
मधुरीले सपने सजा रही है ग्रनचाहे।
नयनों में घुलता जाता है काजल दृग का—
यो गीत तुम्हारे मेरे अब तक ग्रनव्याहे।

ग्राकर कोई कोयल चुपके से कानों में—
यह बोल गई है जीवन की परिभाषा सी।
"दो चुम्बन ग्रौर मिलन की प्यासी पनघट पर—
यह गागर ग्रभी डुबोई भीगी ग्राशा-सी।"

जो तुमने भी लजवन्ती पलक उठाई है—
यह निर्निमिष गीत की गरिमा में मिल ग्राया है।
इन काली कजरारी ग्रलकों को चूम चूम—
लग रहा पवन ग्रातुर होकर बौराया है।

लाग्रो यह हाथ तुम्हारा, लिखदूं गीत नया—
यह मेंहदी रची हथेली फूल सूंघ लेगे।
केवल दो ग्रक्षर लिखे ग्रौर फिर उलझ गए—
दोनों पागल से जैसे फूल गूंथ लेगे।

हर फूल बगारो काई का,
मिलना भर था परछाईं का,
यो चिर-तृष्णा लेकर कोई—
बेवटिया ग्राया था केवल पहुनाई का।

यह याद उलझता बादल की मनुहारों में—
यह मदिरा पीकर ग्राया है बालाम कहीं?
यह ग्रांख मिचौनी बादलिया की झुरमुट में
पर तुम हो जाने क्यों ग्रब तक भी पास नहीं?

यह फिर कोई बोला है विहग दूर लेकिन—
ऐसा लगता है जैसे ग्रभी ग्रकेला है।
'पीऊ' 'पीऊ' की टेर दर्द के कण्ठों से—
लगता जीवन भर ग्रंगारों से खेला है।

घायल हिरणी के नयनों ने फिर देखा है—
ग्राजाय न कोई पारधि फिर सूनेपन में।
दे जाय न कोई ऐसी पीर बहुत मीठी—
धुल जाय न विष मीरा के फिर तन्मय तन में।

इन गीतों की सौगन्ध तुम्हारी विस्मृति ने
मेरे जीवन की स्मृतियों को देखा है।
हरलाल छन्द सब जैसे मेरा सपना है—
पर मेरे गीत, तुम्हारे स्वर में पूरा है।

या जुड़ना सदा इकाई का,
घट जाना पुनः दहाई का,
सब जीवन की लोगुनी तक—
दुखना ग्राया है सपना सदा जुन्हाई का।

"यूँ ही प्यास जीत जाती है"

• श्री मंगल सक्सेना •

कोई कितना ही बहलाए
या कोई भी ना अपनाए

यूं ही दिवस गुजर जाता है
यूं ही रात बीत जाती है।

सुधियां साथ नहीं देती है,
चिर मौनाए नहीं देती है,
साथ भरा दिन भी जाता है,
[illegible] पसारो की माया है,
[illegible]
[illegible] पर आंसू [illegible]

[illegible] मौन निमंत्रण लेके
[illegible] के [illegible]

यूं ही [illegible] जाता है
यूं ही [illegible] बीत जाती है।

[illegible]
[illegible]
[illegible]

पलकों का हर सपना पावन,
मेरे मानसरोवर से मन !
तेरे हंस चुगेंगे जब कन !!

लेकिन कितना ही मुस्काऊँ
दुख से भर सुख से बौराऊँ

यूं ही [illegible] जाता है
यूं ही [illegible] बीत जाती है।

भावुकता का मरघट गहरा
उस पर लगा हुआ है पहरा
कोई हृदय नहीं पाता है
रीति-नीति में बंध जाता है
उर [illegible]
प्यास बुझाती [illegible]

लेकिन [illegible] है यह मेरा
मिलन—[illegible] का [illegible]

यूं ही हृदय हार जाता है
यूं ही प्यास जीत जाती है।

मांग मत वरदान

• प्रो० रणजीत •

खोजता जा, हार मत हिम्मत
कभी मिल जायगा इंसान ?
कर प्रतीक्षा, सितम सह, पर
पत्थरों मे मांग मत वरदान ।

जिन्दगी को मत भ्रमो मे डाल
आवरण को छोड़, वस्तु सभाल
सत्य को मत स्वप्न मे झुठला
मत फसानो मे हकीकत टाल

कर समर्पण देकर के आराध्य,
मन बन, जान कर अजान,
खोजता जा, हार मत हिम्मत
कभी मिल जायगा इसान ।

देख इन काठ-पुतलियो को देख
धर्म जिनका मानना आदेश
काठ के तन मे दबे शायद कही
हो किसी व्यक्तित्व के अवशेष

इसलिये बेहोश रूहो को लगा
आवाज, कर आह्वान,
खोजता जा, हार मत हिम्मत
कभी मिल जायगा इसान ।

'गीत'

श्री गंगाराम 'पथिक'

चाहे जितना दर्द जमाना दे मुझको-
फिर भी जैसा था-वैसा-का-वैसा हूँ।

तन का चोला तो हर रोज बदलता है,
पर मन की तसवीर नही बदली जाती;
जीने के लालच मे, मरने के डर-से-
अरमानो की पीर नही बदली जाती,

मत दो मेरा साथ-अकेला चलने दो-
तुम क्या समझोगे-मैं क्या हूँ, कैसा हूँ ?

काली राते और कटीली राहें हैं,
लेकिन मंजिल तो जानी पहचानी है,
भूल समझती आई है दुनियां जिसको-
कदम-कदम पर बात वही दोहरानी है,

तूफानो में सहना-मेरी आदत है-
आने वाले कल का नया-संदेशा हूँ।

आसमान मे मेरा कोई मेल नहीं,
चाँद-सितारों मे फिर क्यो मन बहलाऊँ;
माटी के कण-कण मे जो सच्चाई है-
उसको अनदेखा करके क्यों मुस्काऊँ,

प्यार करो या नफरत का विष बरसाओ-
सासों का सौरभ हूँ-गुल जैसा-सा हूँ।

प्राण तुम लौटे नहीं हो

—श्रीमती शारदा गुप्ता

प्राण ! तुम लौटे नहीं हो—
ये हठीले नयन मेरे—
द्वार पर उठ झुक गये हैं।

तुम नहीं हो पास मेरे—
शून्य सा सब कुछ लगा है।
आज सोया और मन का—
[illegible] सा जगा है।

लौट आओ प्राण मेरे—
मौन को आवाज दे दो।
सुन जिसे बेसुध बनूँ मैं
आज ऐसा साज दे दो।

प्राण ! तुम लौटे नहीं हो—
स्वर [illegible] आज मेरे—
साज पर [illegible] गये हैं।
ये हठीले नयन मेरे—
द्वार पर उठ झुक गये हैं।

[illegible]
[illegible]
[illegible]
[illegible]

[illegible]
[illegible]
[illegible]
[illegible]

[illegible]
[illegible]
[illegible]
[illegible]
[illegible]

"प्राण तुम"

—श्री दयाकृष्ण 'विजय'

पलक मे छिपालूं,
हृदय मे बसालूं,
अगर प्राण तुम, स्वप्न मे भी मिलो तो।
तुम्हे खोजते जन्म हारे अनेको,
कहां तक कहो श्वांस के पग पखारूं।
चरण भी थके उम्र की सीढ़ियो पर,
कहां तक डगर को बुहारूं, निहारूं।
तुम्हें विश्व, करुणा-सुमन कह रहा है,
पड़ा क्यों चमन किन्तु वीरान मेरा?
तपन से बचालूं,
चुभन को हटालूं,
अगर बांह की डाल पर तुम खिलो तो?
अगर प्राण तुम स्वप्न मे भी मिलो तो?

(२)

थकी अंगुलियां, तार ढीले पड़े है,
चुका स्नेह भी, आरती मे बचा जो,
रुंधा कंठ है, आंसुओं की झड़ी है,
सुनाऊं तुम्हें किन स्वरों मे बताओ।
कई रूप के गांव के भी संदेशे,
लगन किन्तु तुममे लगी है हठीली।
उषा को मनालूं,
निशा को सजालूं,
अगर तुम मिलन के दुआरे चलो तो?
अगर प्राण तुम स्वप्न मे भी मिलो तो?

"मुझको मेरे सिरजन पर अभिमान है"

• श्री वीर सक्सेना •

तुम्हे गर्व है अपने छलिया रूप पर,
मुझको मेरे दरपन पर अभिमान है;
इतनी कच्ची नींद नही सोता हूं मैं,
पैरो की हल्की आहट मे जग जाऊं;
मैं वह बादल नही, इन्द्र के इंगित पर,
तज कर अपना अहम् बरसने लग जाऊं,
तुम को अपनी गुरुता पर विश्वास है,
मुझको मेरे बचपन पर अभिमान है;

तुम संध्या के घर पहुनाई करते हो,
मैं उगते सूरज को अर्ध्य चढ़ाता हूं;
तुम खंडित कर देते जिन प्रतिमाओं को,
मैं उनको सिंहासन पर बिठलाता हूं,
तुम श्रद्धा को अपमानित करके खुश हो,
मुझको मेरी अर्चन पर अभिमान है,

तुम चलते जो गुजरे उनके चिन्हों पर,
मै चलने को नई डगरें सीख रहा;
आग लगाते फिरते तुम फुलवारी में-
मैं इनको आंसू के जल मे सींच रहा,
तुम गरिमा गाते हो सदा पुरातन की-
मुझको मेरे सिरजन पर अभिमान है,

भूख सताती है सबको ही प्यार की,
उसे शमन करने जो इसे दुलारा है,
यहां वही माना जाता है सन्यासी,
जो सबके मन का विश्राम चुराता है,
तुम असभ्यता कह दो मेरी रचना को,
मुझको इस भोले पन पर अभिमान है!

प्राण तुम लौटे नहीं हो

[illegible]

—श्रीमत[illegible]

प्राण ! तुम लौटे नहीं हो—
ये हठीले नयन मेरे—
द्वार पर उठ झुक गये हैं।

तुम गये [illegible] प्राण मेरे—
[illegible] गया है।
[illegible] मन का—
[illegible] गया है।

लौट आओ प्राण मेरे—
लौट की आवाज दे दो।
सुन जिसे बेसुध बनूँ मैं
आज ऐसा गान दे दो।
प्राण ! तुम लौटे नहीं हो—
[illegible] आज मेरे—
[illegible] पर आ रुक गये हैं।
ये हठीले नयन मेरे—
द्वार पर उठ झुक गये हैं।

[illegible]

एक कहानी

लो कहता हूँ एक कहानी,
शायद तुम्हें पसन्द आ जाये,
मुझे बहुत अच्छी लगती है
तिनका-तिनका पकड़ चोंच में
अभी-अभी ही
नये नीड़ के
नए सृजन का
नया-नया संतोष मिला था।
और अचानक,
क्रूर हवा के
घातों-प्रतिघातों ने चाहा
पक्षी की
आशा-अभिलाषा
और नये निर्माणों की क्षमता को
तहस-नहस कर डालें।
किन्तु नीड़ का सजग सिपाही
एक एक तिनका ला-लाकर
नये सृजन की बलिवेदी पर
फिर जा बैठा
फिर झंझाने
उड़ा दिया
निस्सीम गगन में
एक एक तिनके को
नन्हे पंछी की
महती गुरुता का
गहरा,
बहुत बहुत गहरा
उपहास उड़ाने।
मौत!
बावला पंछी फिर तैयार हो गया।
बाँध शीश पर कफ़न
सृजन की
प्रसव पीर सहने को।
(और) नाश के झोंके
फिर आये दुहराने
कथा पुरानी।
(दुहराई भी)
किन्तु
सृजन का फूल
सदा खिलता ही आया।
और कथा चलती ही आई,
चली जा रही,
शायद तुम्हें पसन्द आ जाये
मुझे बहुत अच्छी लगती है

श्री विश्वनाथ सचदेव

सृजन-रेखा

"मैं अपनी दिल्ली का अकबर"

• थी…

कहने को अपनी आत्मा का
एक एक अक्षर पढ़ डाला
लेकिन अब तक समझ न पाया
मैं नश्वर हूँ या कि अनश्वर

कुछ दिन इसी खोज में बीते
आखिर किसने मुझे गढ़ा है
कुछ दिन भटका इसी भरम में
[illegible] का [illegible] बड़ा है

जिस पर टिकी हुई है पृथ्वी
[illegible] हाथ पर [illegible] न आई
[illegible]
[illegible]

गंगा पूजा दर्शन
कई बार सारे कर
केवल एक [illegible]
जिसे भोग पर भर [illegible]

तैर रही आवाज लहर पर
ढूँढ रहा है [illegible] किनारा
जिसमें रखी हुई है [illegible]
[illegible] हाथ लगता है [illegible]

[illegible]

एक कहानी

लो कहता हूँ एक कहानी,
शायद तुम्हें पसन्द आ जाये,
मुझे बहुत अच्छी लगती है
तिनका-तिनका पकड़ चोंच में
अभी-अभी ही
नये नीड़ के
नए सृजन का
नया-नया संतोष मिला था।
और अचानक,
क्रूर हवा के
घातों-प्रतिघातों ने चाहा
पक्षी की
आशा-अभिलाषा
और नये निर्माणों की क्षमता को
तहस-नहस कर डाले।
किन्तु नीड़ का सजग सिपाही
एक एक तिनका ला-लाकर
नये सृजन की बलिवेदी पर
फिर आ बैठा
फिर झंझाने
उड़ा दिया
निस्सीम गगन में
एक एक तिनके को
नन्हे पंछी की
महती गुरुता का
गहरा,
बहुत बहुत गहरा
उपहास उड़ाने।
मौत!
बावला पंछी फिर तैयार हो गया।
बांध शीश पर कफन
सृजन को
प्रसव पीर सहने को।
(और) नाश के झोंके
फिर आये दुहराने
कथा पुरानी।
(दुहराई भी)
किन्तु
सृजन का फल
सदा मिलता ही आया।
और कथा चलती ही आई,
चली आ रही,
शायद तुम्हें पसन्द आ जाये
मुझे बहुत अच्छी लगती है

श्री विश्वनाथ सचदेव

"मैं ऐसा दीप जलाता हूँ"

● डॉ० रामगोपाल शर्मा 'दिनेश' ●

तुम दीप जलाते रोज,
 रोज बुझ जाते हैं।
मैं ऐसा दीप जलाता हूँ,
 जो आँधी में भी जला करे।

विश्वास नहीं तुमको पथ पर,
तुमको मंज़िल का ज्ञान नहीं।
हर [illegible] में [illegible] जाते हो,
पर [illegible] [illegible] पहचान नहीं।
ऐसा पथ बनाता हूँ,
 जिस पर मंज़िल भी चला करे,
ऐसा दीप जलाता हूँ,
 जो आँधी में भी जला करे।

[illegible]

सागर की सीमा भी जिनके,
चरणों की धोवन पाई है।
जिस एक दीप की किरण ज्योति,
ओंकार [illegible] में [illegible] है।
मैं उनको नेह सुनाता हूँ,
 जो परदेशों का भला करे।
मैं ऐसा दीप जलाता हूँ,
 जो आँधी में भी जला करे।

[illegible]

रूमानी चाँद

प्रो० 'शलभ'

विचारों के नशे में चूर !
खोजे हुये नये सूत्र के उन्माद मे खोया सा,
नई ध्वनि, नये आयामों की आसक्ति का
मारा सा,
नये सृजन-शिल्प की वीथियों में,
अवसादमयी प्रमादकता मे प्रमत्त,
उस
एंग्लो केथोलिक चर्च के सँभाते फाटक मे
अपनी इस
ऊसरी जमीन की अनेकानेक यान्त्रिक
यन्त्रणाओं के
अनबूझ,
अजाने गीतों की मधुरीली,
किसी एकान्त क्लांत
युवा साध्वी के हृदय की गूँज मे भूमता हुआ
कुछ अच्छा सा देख रहा हूँ ।
आसमान की ज्यामिती की
उदास—नीली पुस्तक के गोलाकार फैले हुए
पन्ने के
सुदूर कोने पर,
एक जेट
अपनी दुम की धुँआरी पेंसिल से
एक लम्बी, किन्तु सीधी धुँए की रेखा
खींचता जा रहा है,
उसके आखरी छोर पर कुछ लटक रहा है,
दूज का चाँद है !
'हल्दिया चाँद—कैसे हो ?'
सुन कर यह—चौंका वह !
जाने क्यों हवा की हल्की परत पर
हँस-हँस इतराया वह !

हाँ, जी ! तुम
आजकल तो 'हलदिया' ही दीखते !
हालांकि देखे हैं तुम्हारे दो चित्र और—
अखबार में छपे थे :
अच्छे थे न बुरे थे ।

किन्तु,
तुम अब भी इतने बेखबर हो ?
लेनिन का युग नहीं, ल्यूनिक का युग है यह !
परतें जो उठ रहीं—उनको तुम उठने दो,
नाच रहीं भाँवरियाँ—उनको तुम नचने दो,
उभरेगा चित्र तो—होगा ही रूप स्पष्ट,
खुलेगा भेद फिर तेरे यथार्थ का,
नितान्त नग्न !
नि पट !
उन्नत विचारों की उन्नत निगाहों की
उठी आँख ऊपर तो—
कुछ नहीं
द्वितीया का चाँद नहीं, जेट नहीं,
कुछ नहीं :
धुँए की रेखा वह
काजली कल्पायण सी फैल पड़ी
दिक्-दिक् के दर्पण छोरों तक,
अन्धकार !
सोचता हूँ—सचमुच अब भी चाँद सुन्दर है !
प्रीत और रीत युग के सपनों में सोता है !
अतीत और आगत को
अलसानी लोरियों ने उसे यूँ डुबोया है !
ऐसा एडवेन्चरस वह,
अब भी रूमानी है !

मेरे हृदय ने मुझ से कहा—

श्री जनार्दन राय नागर

ब्राह्म मुहूर्त में ही मैं जाग उठा और मेरे हृदय ने मुझ से कहा—"सोये हुए जागें और जागे हुए उठें [illegible] हुए चलें और चलते हुए कभी न रुकें।" मेरे हृदय ने मुझ से कहा—"जागे हुए अधिक जाग्रत [illegible] और अधिक जाग्रत महिमावान हों। सूर्य किरणों के समान जागें, पृथ्वी और आकाश में बिखरें और [illegible] हुए घने मेघों के समान बरस उठें।

तेजस्विनी उषा के [illegible] सुगन्ध [illegible] में मैं जाग-जाग उठा और किरणों के [illegible] साथ गाता हुआ मेरा हृदय मुझसे कह उठा—"जागे हुए अधिक जागें और अधिक जाग्रत से अधिक [illegible]। बाहर के अन्धकार को नष्ट कर के अन्तर के अन्धकार को नष्ट करने चलें।" उषा की [illegible] मेरे हृदय ने मुझ से कहा—अधिकाधिक जाग्रत होते जाओ [illegible] के समान [illegible]। [illegible] अन्धकार पर [illegible] [illegible] करें [illegible]।"

मेरे हृदय ने मुझ से कहा—"जागे हुए, [illegible] [illegible]।"

[illegible]

[illegible]

[illegible]

वह मेरी है भारत-माता

—श्री मेघराज 'मुकुल'

मधु से भरा जहाँ युग-यौवन, ज्योति किरण में न्हाया जीवन,
दिशा-दिशा में उजला-उजला, जिसका शतदल सा खिलता मन,
पुलकित सस्मित चकित विश्व यह, जिसकी गरिमा को है गाता,
जिसकी गोदी में दिशि-दिशि की, संस्कृतियों का मन लहराता,
वह मेरी है भारत-माता !

जहाँ सृजन आकार ले रहा, जहाँ मनुजता मनुज पा रहा,
जहाँ ग्राम्य सुकुमार प्राण-धन, नई फसल के गीत गा रहा,
जो धरती जल-प्लावन पूरित, जो धरती नित शस्य श्यामला,
जो धरती उन्मुक्त विजयिनी, अभिव्यक्ता युग-युग की गाथा,
वह मेरी है भारत-माता !

दीपशिखा सी सदा प्रज्वलित, स्वर-अक्षर में जो नित अंकित,
आकर्षण के मध्यबिन्दु सी, अपवादों से कभी न वंचित,
जहाँ संतुलन कभी न डिगता, जहाँ लोक मन कभी न थिरता,
जहाँ सलोना हृदय लहरता, जहाँ मुक्ति विश्वास विकसता,
वह मेरी है भारत माता !

जहाँ ओस के कंपन में भी, रम जाती सदियों की थिरकन,
जहाँ प्यास के शुष्क होठ पर, खुशियाँ सदा झूमकर आती,
होठों पर ले ज्वार-सिन्धु का, जो अभि-व्यक्ति मुक्ति-पथ-दाता,
प्राणोच्छ्वास जहाँ रस-दाता, सह-अस्तित्व जहाँ मुस्काता,
वह मेरी है भारत-माता !

जहाँ सदा उन्मेष सजग है, युवा उमंगें राह दिखाती,
जहाँ चेतना करे साधना, सृजन-क्रान्तियाँ मुखकर पाती,
जहाँ नया साहित्य कृषक मजदूरों का दर्शन सरसाता,
जहाँ नया मानव प्रहरी बन, युग-रक्षा का स्वर उठाता,
वह मेरी है भारत-माता !

उज्जैन

गीत

श्री बुद्धिप्रकाश पारीक

मोपे मेन्दो पाग को मरोड़ी नामिल आवे रे,
धमा-धमा-धम ढोला बाजे, पनरपो मो बल गावे रे। मोपे।

दो फाटको पेनो ऊवा-सो ऊपर पोसे मोड-जुवार,
मोल-नन्ना बा-सा दमेव वा मोलो मे करने सिणगार
सुरज-किरण-सा हाय हंस बना, जिद थाने पुग जावे रे,
गव्वा हुवा गुवरण-सो पल को मन मारो निरखावे रे। मोपे।

प्यागा मोर-नोवो बा-सा उठे जिद टावरिया पूर,
तो बिजली-सो गरम बनावो मिलवावा मे करे न पूर।
मैंग-वाली बगार झुगाधार पूर बरसावे रे,
मर मनावन-नेह मेवना-गुंजवा मिल-मिल जावे रे। मोपे।

[illegible]

[illegible]

विरह गीत

• श्री चन्द्रकुमार 'सुकुमार'

टणमण बाजे टोकराजी, गण मण गाडी जाय,
कामणगारो सो सिणगारो, बैठी झोला खाय ।

बैल्या भागे झालर झूमे नोगर बाग्यां जाय,
पाछे उडतो मांटो, हाळी ! सन्देसो पठवाय ।
को'जे बादळ सा बादोला घरा सांवता आय,
सासरिये री नीब निबोळी पीपळ ने पुजवाय ॥

थायर बाजे, काजळ लाजे, रुत पाछी मुड जाय,
थयां ने देर करो परदेसी, आसूडा पुछवाय ।

नैणा मा सावणियो बसग्यो, पलकां बमग्यो नीर,
हिवड़े बसगी अगन हठीला, अधरां बसगी पीर ।
गजब कर्‌यो थो रूप उधारो, ले बैठो तगदीर,
ब्याज बढे मुळके पाछोगी, छाती लागे तीर ॥

मैंदी राचे, कागद बाचे, सुपनों दिन ढळ जाय,
रात्यूं जागे हियो बावळो बैरो, थोळ्‌यूं थाय ।

तपता बीते तावडो जो, गळनां बीतै रात,
सांझ संवारे पलक बिछाऊं, निरपट निरपट बात ।
हिचक्या सूं भर आवे छानो मैं दिन मारो रात,
मोत्यांरो जागीर लुटावे नैणा री बरसात ॥

थाथा कांपे हिवडो हांपे, हिचकोळा लुळ जाय,
जोगण बणगी सेज मखमल, आन्दा नीद न आय ।

महा मानव का प्रयाण !!

श्री निरंजननाथ आचार्य

अब भी बेहोशी में हूँ, महा निद्रा में हूँ किन्तु जीवन के श्वासों के उतार-चढ़ाव में उलझा पड़ा हूँ। अन्धकार की जड़ता में हूँ किन्तु मृत्यु की आशंकाओं से दूर। मैं सांस ले रहा हूँ, मृत्यु की काली निशा में लिपटा हुआ। मैं जीवन में हूँ किन्तु अनन्त शून्यता में आवृत्त। मैं जीवन और मृत्यु के संयोग में हूँ। जड़ता और चेतना के संगम पर हूँ। मैं मृत्यु की परछाई में हूँ और जीवन की अन्तिम आभा में भी। मैं जीवन की श्वासों में भी हूँ और प्रयाण की अन्तिम उड़ानों में भी।

कहाँ हूँ और किस ओर नहीं? ज्ञान में अथवा अज्ञान में! प्रकाश में या अंधकार में। शान्ति में या विश्रान्ति में!! चेतना में हूँ अथवा जड़ता में। सजीव हूँ या निर्जीव। लेकिन, फिर भी मैं अपनी श्वासों में समाया हुआ अवश्य हूँ। मैंने अपने [illegible] को आशा के कोमल धागों में अवश्य बांध रखा है। केवल विश्राम की [illegible] स्थिति पर मैंने जीवन को थाम सा रखा है!! मृत्यु को जीवन में जोड़ने वाले उस [illegible] पर मैं टंगा हूँ। प्रकाश और अन्धकार के संगम की सीमा में समाया हुआ हूँ, मैं चेतना और [illegible] के संयोग को धरा पर पाता हूँ। मैं स्वप्न और [illegible] की रेखाओं के मिलन से वंचित हूँ, मैं प्रयाण में हूँ और विराम में भी। मैं गति में हूँ और स्थिरता में भी।

मैं किस ओर हूँ और किस ओर नहीं? किसी की पुकार में हूँ या दुत्कार में। किसी के मोह में हूँ या [illegible] में। प्रतीक्षा में हूँ अथवा निराशा में। किसी के राग में हूँ या वैराग्य में। मैं किस दिशा में हूँ—मैं स्वयं नहीं जानता। मैं इस ओर हूँ या उस ओर। किसी के प्रेम में हूँ अथवा स्वयं के वैराग्य में। किसी के विश्वास पर हूँ अथवा [illegible] में। मैं किस ओर हूँ और किस ओर नहीं। किस दिशा के प्रयाण में हूँ—मैं स्वयं भी नहीं जानता।

[illegible]

[illegible]

[illegible]

[illegible]

एक चित्र—

"रूप छवि"

● श्री पुरुषोत्तम 'उत्तम'

वैसे आप का परम लक्ष्य अशोकचक्र वाले तिरंगे की छत्र छाया प्राप्त करना ही है, और उसके लिए आप जन हित, समाज हित तथा राष्ट्र हित की दुहाई देते नहीं थकते । ज्योंही आपको बिना पैसे की ब्यूक और बिना किराए का बङ्गला मिला कि आप का अपना हित ही सर्वोपरि रह जाता है । चुनावों के समय इन्हें आप अपने दरवाजे पर हाथ पसारे कई बार देख सकते हैं पर क्या मजाल कि बाद में इनके दर पर अनेक धक्के खाने के उपरान्त भी आप इनके दर्शन कर सकें ।

आप जन नेता, किसान नेता, मजदूर नेता, लोक नायक तथा जन नायक आदि उपाधियों के जनक हैं । आप को जातिवाद से सख्त नफरत है लेकिन चुनाव के समय वोट और बेटी जाति वाले को ही देने के आप पूरे हिमायती बन जाते हैं । वैसे भी आप हर लाभ वाले काम के लिए अपनी ही जाति वालों को प्राथमिकता देते हैं ।

पुरातनता अथवा रूढ़ीवाद को आप कतई पसन्द नहीं करते, इस ही लिए आपने सामन्तवाद की प्रतीक जागीरदारी और जमींदारी को समाप्त कर दिया है । अब देश में कोई भूमिहीन रहने वाला नहीं है । यहां तक कि आपने अपने नाबालिग लड़के को भी सैकड़ों बीघा जमीन दिलवादी है चाहे वह गांव की गोचर या पोखर की ही क्यों न हो । वैसे किसान से पर्चे के पैसे लेने का कानून आपने बना दिया है परन्तु आप तो उससे उपज का आधा हिस्सा ही वसूल करते हैं और तो और जागीरदार तो भूसा और कड़ब ही किसान को छोड़ते थे पर आप वह भी नहीं छोड़ पाते । क्योंकि आप को गोवंश की रक्षा जो करनी है और जनता जनार्दन की विशुद्ध दुग्ध सेवा के लिए गो रस भण्डार तथा गो सेवा केन्द्र जो चलाना है । आपको "अधिक अन्न उपजाओ" आन्दोलन की अत्यधिक चिन्ता है, इसके लिए आप तरह तरह की बड़ी-बड़ी योजनाएं बनाते रहते हैं । परन्तु वह भी गङ्गा के समान आपके स्वार्थ-सागर की तरङ्गों में समा जाती है और जन-सागर बेचारा बुभुक्षा-दावानल में तड़पता ही रहता है ।

आप बिल्कुल निस्पृह, मोह रहित एवं निर्लिप्त हैं । लेकिन पार्टी के पद, नगर-निगम की अध्यक्षता, जिला परिषद् की प्रमुखता, पंचायत समिति की प्रधानता और विधान सभा अथवा लोक सभा की सदस्यता से सदा चिपके रहना ही पसन्द करते हैं । आपने देखते-देखते ही [illegible] में दो मंजिला बङ्गला बनवा लिया है । पद के प्रभाव से आप अपने भाइयों के व्यापार पर चार चांद लगा देते हैं । इनका व्यापार बिना पूंजी या कारखाने के ही चल जाता है । सरकारी कार्यालयों में बिना टेण्डर के ही सप्लाई और बिना सप्लाई के ही एडवान्स पेमेन्ट होता रहता है ।

यदि आप जनता द्वारा चुनावों में ठुकरा दिए जाते हैं, तो समाज कल्याण बोर्ड, भारत सेवक समाज, नगर विकास मण्डल, आर० टी० ओ० की ऑनरेरी सदस्यता अथवा अन्य किसी पद के लिए तैयार ही रहते हैं । ऐसे ही कठिनाई के समय हेतु आप [illegible], कुर्बानी का केवल सर्टिफिकेट रखते हैं और आड़े समय में इसे धारण कर अपनी जीवन नौका [illegible]

कस्बे के बस स्टैण्ड पर

– भागीरथ भार्गव –

पों पों
कोई उतरा
कोई चढ़ चला गया।
किसी के उतरने पर
कोई चेहरा खिल उठा
मुन्नियों की भीं भिनट
एकदम गुलजार हो उठा
पास में खड़ा ताँगे वाला
जम्हाई ले उठ बैठा
चहल पहल फिर जाग उठी।
किसी के जाने पर
सड़क पर बेतहाशा
धूल दौड़ती हुई
दूर भाग जाती है बस
और कभी—कभी
दो आँखें धूल से
देखती रह जाती हैं।

साँझ का रंग

– विशम्भर गुप्त –

आज की साँझ का रंग लौटते
प्रकृति का चितेरा उदास था—
भूल गया वह मनभाऊ समय की
रंगीन शामों का माहौल।
आज उसकी तूलिका के
[illegible]
[illegible] है,
[illegible] है।
आज [illegible]
[illegible] रहे हैं।
आज [illegible]
[illegible] रहे हैं।
आज [illegible]
[illegible] रहे हैं।

[illegible]

[illegible]

[illegible]

रतना का रूमाल

श्री मनोहर वर्मा

रतना मेरी नौकरानी है।

रतना ने बताया कि उसका पति क्लर्क है।

रतना और मेरी पत्नी युवा हैं। हम उमर हैं, पर मेरी पत्नी के मुकाबले वह काफी दुबली, शुष्क और उदासीन है।

रतना आकर्षक जरूर है, पर सुन्दर नहीं। सौन्दर्य जिसे कहा जाये ऐसी कोई चीज उसमें नहीं है।

रतना सीधी है, नेक है, गरीब है। मेरे अलावा एक और घर का काम भी उसने झेल रखा है।

मेरी पत्नी और रतना

"बहूजी कुछ पैसों की जरूरत है।"

आज तो पांच तारीख ही है रतना··· ···तेरे पति को भी तो तनखा मिली होगी ······?

मिलनेको तो तनखा मिलती है बहूजी·······

अरे! क्यों? तेरा पति कहीं नशा तो नहीं करता, जुआ तो नहीं खेलता ······?

नहीं बहूजी। चाय बीड़ी का शौक है बस ··या फिर अच्छे कपड़े पहनने का ······।

तो भी क्या हो रतना, सवा सौ रुपया भला चार ही दिन में कैसे खप गया? और मेरी तो यह भी समझ में नहीं आता रतना, कि तुम कुल दो जने हो, सवा सौ रुपये महीने की आमद है फिर भी तू दूसरों के भांडे-बरतन मांजती है, रोटियां सेकती है। मेरे उनको भी तो सवा सौ के करीब ही मिलते हैं।

पर बहूजी, मेरे वो तो कुल सत्तर और पांच ही लाते हैं। उसमें भी दस-पन्द्रह रुपया महीना दफ्तर में चाय-पानी का खर्च हो जाता है यार दोस्तों में। दस-पांच की बीड़ी-सिगरेट जल जाती है। बीस-पच्चीस का हर महीने खुद के लिये कपड़ा ले आते हैं। मैं दो घरों का काम नहीं करूं बहूजी, तो फिर महीने भर खायें क्या?

भई, तू कुछ भी कह रतना, मुझे तो कुछ दाल में काला नजर आता है। या तो तेरा पति जरूर कोई नशा करता है या फिर रुपया बचाकर जमा करता होगा? ···कर्जा है क्या?

बात तो मेरी भी समझ में नहीं आती बहूजी, पर हां, इतना जरूर है कि वे नशा तो नहीं करते और न ही कहीं जमा करते हैं। पर यह जरूर कहते हैं कि एक दोस्त को उसके ब्याह के लिये पांच सात सौ रुपये दिलाये थे, उसकी किश्त और ब्याज देते हैं। और वह दोस्त मर भी गया बताते हैं बहूजी ···।

बड़ी अजीब बात है ··· ···। किस दफ्तर में है तेरा आदमी?

दफ्तर का नाम तो मैं क्या जानूं बहूजी, पर हां, वे कहा करते थे कि बहुत बड़ा दफ्तर है—ऐसा बड़ा, राजा के महल-सा। हजार से ऊपर आदमी काम करते हैं।··· ··· और सरदियों की बात करतो है बहूजी। दिन भर पंखे चलते हैं, गरमी में कम २ लगती है। सरदी में अंगीठियां। कई २ चपरासी हैं जो 'इनको' कुर्सी पर बैठे को ही चाय-पानी ला देते हैं, पर कहते थे कभी छुट्टी के दिन तुझे दफ्तर दिखाकर लाऊंगा······।

[illegible]…… किसने दूं ?

बस, पांच रुपये।

रेना ने ब्लाउज से नोट बाहर निकाल [illegible] एक छोटा रूमाल निकाला और उसके उसमें बांधने लगी—

[illegible] यह रूमाल जिसका मेरी है क्या, रूमाल [illegible] हो—

[illegible] तो दो ही नोट रही हूं रुपये, सोचती [illegible] और मांग लूं तो थोड़ा और का काम …

[illegible] है उनिता ? [illegible] कमरे में प्रवेश करते ही [illegible]।

[illegible] नहीं [illegible] तो रुमाल, रेना का रूमाल है। [illegible] [illegible] मांग रही है। …

[illegible] और [illegible]—

[illegible]

[illegible]

मेरे होठ-[illegible] [illegible] पर दो-चार बार [illegible] हो। बस……इसी में इस घड़ी तक जैसे-जैसे जो [illegible] हूं……

तू तो सचमुच पगली है री रेना।

[illegible], सुनो। एक बात पूछूं ? तुम्हें मेरी सौगन्ध है, सही-सही बताना …… ।

पूछ न, एक क्या दस बात पूछ।

तुम्हें तो और पच्चीस [illegible] मिलते हैं न। फिर तुम पूरा [illegible] और पांच ही क्यों [illegible] हो ? [illegible] तो मैं [illegible] क्यों [illegible], [illegible] न [illegible] ? [illegible] है कि तुम [illegible] [illegible] ……।

[illegible]

[illegible]

दोस्त है, बरसों बाद मिला है, साथ साथ, सिनेमा देखेंगे री……… ।

कभी मुझे भी …… !

हां ……हां……… अबके जरूर……… ।

क्लर्क और क्लर्क—

यह सामने जो आ रहा है न…… ……।

कौन जगन ?

हां, इसका सलाम करने का स्टाइल देखना ।

जगन ने दो उंगली ललाट के सामने लाकर जूनियर अकाउन्टेंट को सलाम किया और कुछ कहा।

अब यह 'अपलम-चपलम सिस्टर्स्' की तरफ देखेगा……… ।

जगन ने देखा और दोनों सिस्टर्स में से एक ने उसे इशारे से बुलाया ।

अब देखना, यह हम लोगों की ओर कैसा गर्व से देखेगा ।

जगन ने कुछ से बैठे नीरस क्लर्कों की ओर उड़ती हुई गर्व भरी दृष्टि फेंकी । लड़की ने एक फाइल जगन को पकड़ा दी ।

अब यह कोई पत्रिका या किताब इनसे लेगा ।

जगन ने एक फिल्मी पत्रिका उन लड़कियों से ली और उड़ती हुई दृष्टि सब ओर डालता हुआ चल दिया । अपलम-चपलम सिस्टर्स् अपने साथ एक-दो किताब या कोई पत्रिका आदि जरूर लाती हैं और उनमें घंटे दो घंटे को यह जगन ले जाता है, देख पढ़कर थोड़ी देर में लौटा देता है । कई बार तो किताब को बगल में दबाये २ ही घूमता रहेगा और थोड़ी देर बाद ज्यों की त्यों लौटा जायेगा ।

यह है तो हैंडसम !

हां, हैंडसम तो है ही पर 'एक्टर' भी बहुत ऊंचा है यह । सुबह जब ऑफिस आता है, तब देखो इसकी शान । सिल्कन शर्ट, वूलन पेंट, काला चश्मा और चमचमाती साइकिल । बस यहां दफ्तर आकर अपने वे कपड़े खोलकर रख देगा और अपने सही रूप में आ जायेगा ।

अच्छा, मैंने तो कभी ध्यान ही नहीं दिया, यार ! बड़ा ऊंचा एक्टर है ।

तुम इसकी ड्रेसेज देखो कमाल है । एक से एक शानदार । हमारी तुम्हारी इतनी हिम्मत नहीं जो वैसी एक भी ड्रेस बनवालें । मारवाड़ी अमीरों की जूतियों से लेकर पेशावरी, लोफर, पम्प, सिंगापुरी चप्पल वगैरह कई जोड़े तो जूते हैं इसके पास ।

वन्डर ! तुमने खूब स्टेडी किया इसे ।

स्टेडी करने की बात ही है यार, आश्चर्य होता है कि इतने कम रुपयों में यह सब 'नवाबी ठाट' कैसे 'मेन्टेन' करता होगा ?

कुछ पार्ट टाइम ?

नहीं करता है, मैंने पूछा था । और मजा यह है कि बाइक भी है इसके ।

या ……हूं …… ।

और तारीफ यह कि रिश्वत एक नहीं 'मिग' करता । उसमें भी एक और मजा……… ?

वो क्या ?

जिस रो में, जिस क्लास में अपलम-चपलम सिस्टर्स् जायेंगी उसी रो में, उसी क्लास में, उन्हीं के आस-पास हजरत मौजूद होंगे ।

मगर यह सब बातें तुम्हें कैसे मालूम ?

पैसों से खरीदी हैं मैंने !

क्या मतलब ?

जब कभी इसे एक्स्ट्रा, सिनेमा के लिए जरूरत

[illegible] है तो एक–दो रुपया मुझसे ले जाता है और [illegible] मैं सारी बात [illegible]

[illegible]

[illegible] पर लिये 'सहर', [illegible]

[illegible]

[illegible] और [illegible]—

[illegible]

'[illegible]'

[illegible]

बुझती चिनगारी

● श्री भगीरथ भार्गव ●

नगर के एक कोने में
निर्जन सड़क पर
टिमटिमाते मद्धिम
लैम्प पोस्ट के प्रकाश में
मौन बैठे व्यक्ति
सन्नाटे को भगाते हैं
अन्धकार को उदास
बना न पाते हैं।

बहुत दूर पर भी [illegible]
सुलगती है एक ही आग
जिसका हर पल गत है
पर शायद
यूं ही सुलगती रहेगी
बाहर आने से पहले ही
[illegible] बन जायेगी
जैसे कोई राग से बनी चिनगारी
राख से बाहर आना चाहती है
पर फिर बार–बार
बुझ–बुझ जाती है।

[illegible]

एक सफर

— श्री जुगमन्दिर तायल —

जिन्दगी !

बहुत बार सोचा कि आखिर यह जिन्दगी है क्या ? जब सांझ ढल चली होती है और बाजारो मे चहल-पहल बढ़ जाती है और शो केसो मे बिजली की रोशनी मे साड़ी, ब्लाउज, पेन्ट, बुशर्ट, जूते पहने निर्जीव मूर्तियां मुस्करा उठती हैं, जब रेडियो और लाउडस्पीकरो द्वारा कितने ही स्वरो से कान भर उठते हैं और राह तांगा-रिक्शा, मोटर, टैक्सी से भर उठती हैं, जब क्रीम स्नो, लैवण्डर की कितनी ही तरह की गन्धो से नाक भर उठती है और कितने ही चमकीले सिल्कन या पारदर्शी नाइलोन के कपड़ो से आंखें भर उठती हैं, तब······ तब अनायास ही मन मे न जाने क्यो विषाद घुस जाता है, उस शोर-शराटे में, उस चहल-पहल मे न जाने कैसा अकेलापन मन को काटने लगता है। न जाने मन मे क्यों यह सवाल उठ जाता है कि आखिर यह जिन्दगी है क्या ?

बहुत सी तस्वीरे दिमाग मे उभरती है।··· ·· · ऊँची-ऊँची छः तल्ले वाली बिल्डिगें, लाल, पीली, हरी रोशनी मे कितने ही विज्ञापन ······ऐस्प्रो, बुखार और दर्द की दवा·········वैद्यनाथ की विश्वसनीय आयुर्वेदिक दवाइयां ·· ·····सनसनी खेज कहानी, दिल हिला देने वाले संगीत से भरा चलचित्र · ···सुरक्षित भविष्य के लिये जीवन बीमा ·········सिनेमा तारिकाओ का प्रिय साबुन लक्स ·· ··· ·· शक्तिदायक और पुष्टिकारक हारलिक्स, आदि और नीचे लगातार बहता-चीखता शोर, ट्राम बस, कार, टैक्सी, रिक्शा और पैदल,·········· दुकानो से चिल्लाते रेडियो और लाउडस्पीकर····
सेल्स मैनों की यान्त्रिक मुस्कानें, "आइये सा
क्या सेवा करें आपकी ? और जाने के बा
चले आते हैं साले परेशान करने।··········
जिन्दगी है ?

एक और चित्र। होटल और रेस्तरां
दुनिया। क्लब। डांस-डिनर। हल्लो मिस परिन
······ हाउ डू यू डू ? ······ कहां से खरीदी आ
यह टाई·· ····वैरी प्लीज्ड टु मीट यू·· ····थैं
फार योर कम्पलीमेन्ट्स्····· कांग्रेचुलेशनस् आ
योर सक्सेस।···· गुथे गले और पीठ के ब्लाउ
घोड़े की पूंछनुमा जूड़े, ऊंची साड़ियां·······पाउ
और लिपस्टिक से पुते चेहरे······कॉकटेल
पश्चिमी धुन और कमर में हाथ लिये नाचने जो
ही·· ही··· ही·· खोखली हंसी·······पेन्ट की को
······· बूट पालिश·······यान्त्रिक मुस्कानें और मु
स्पर्श··· ·· यह जिन्दगी है ?

या, 'गुड मोर्निंग सर।·······सर, आज क
छुट्टी दे दीजिये, मुझे काम है·····सर आर यू मो
टेनिस आवर क्लास टुडे······निरन्तर कलाम क
··· ···सर का वाल वर्णन। तुलसी का प्रकृ
कौशल, केशव की शब्द योजना बिहारी क
भाषा सौष्ठव। रस नौ होते हैं श्रृंगार, हास्य,
करुणा, अद्भुत।··नायक-नायिका भेद·····वासक
सज्जा, विप्रलब्धा, खण्डिता······ ··और फिर क्लास
रूम··· ···दुष्यन्त साहब जरा देर से आ रहे हो क्यों
है ? ·· ···पण्डित जी उन्हें दर घंटे का कतरा

नहा दरिया है ··· माथुर साहब बन्द का दरवाजा क्या जानें ? किशनसिंह ने ऐलियन रिमार्क पास किया है फिर ··· ड्रम्ट पर का रिफ्ट क्या रहा ? बहादुर सेव की [illegible] सुर्ती घोपरी ? जगु पटेल ने बयान कर दिया ··· यार विनय ! 'सुजाता' फिल्म है जोरदार ··· [illegible] से बड़ा मजा आता रहा। मैंने पी० एस० को भी सुनाई वो सुनाई कि मजा आ गया ··· जिन्दगी भाई भी एक का नाम है ··· या जिन्दगी है ? सामने सुखवासनाएं, अभिलाषा और [illegible] कल्पना।

एक और दिन। [illegible] [illegible]। [illegible] की [illegible] जिन्दगी की रफ्तार से चल रही है। [illegible] [illegible] [illegible] [illegible] [illegible] [illegible] [illegible] [illegible] [illegible]

[illegible]

मैं फिर पलंग पर बैठ जाता हूं। कमरे के सब दरवाजे बन्द कर लेता हूं। मार्टेन भी काम नहीं करता। आंखें बन्द कर लेता हूं कि यह सब मुझसे नहीं दीखे। केवल अंधेरा ·········· केवल अंधेरा हो बस·············।

पर सवाल मेरा पीछा नहीं छोड़ता। जिन्दगी! जिन्दगी क्या है ? यह अतिरंजन और अंधेरे की दुनिया। ये कम चोटी [illegible]। ये [illegible] [illegible], केवल [illegible]। दिल और दिमाग को [illegible] [illegible] की [illegible]। [illegible] [illegible] [illegible] [illegible]। जिन्दगी जैसे लगी हुई [illegible] हो जो किसी [illegible] प्रभाव से धीरे-धीरे [illegible] [illegible] होकर [illegible] [illegible] [illegible] [illegible] का भार ढो रही हई।

[illegible]

जनवरी का एक दिन। विशेष दिन नहीं था। सीधा-सा सामान्य दिन। शिशिर की दोपहर और मन-भाती गुनी धूप। जयपुर की चहल-पहल बरकरार थी। गुस्से से भरा हुआ एक मित्र के साथ बस-स्टैण्ड की ओर चुपचाप चला आ रहा था। गुस्से का कारण थे एक मित्र जो रात साथ चलने का वादा कर सुबह अकेले ही चले गये थे। स्टैण्ड पर पहुंच कर मित्र को विदा कर दिया तुम जाओ भले ही। नवल इन्तजार करता होगा 'चला जाऊंगा थोड़ी देर में'।

'नहीं। मैं फार्मेलिटी में यकीन नहीं करता। जानते हो' 'अच्छा' मित्र चल दिये थे। फिर मुड़कर बोले 'अब कब आ रहे हो बिनु ? जल्दी लौटकर यह किस्सा भी अंतिम रूप से तय कर लो डाक्टरेट का।'

"चाहता तो मैं भी हूं पर सवाल छुट्टी का है न। कोशिश करूंगा इसी महिने आने की………"

बस जाने में देर थी। टिकट लेकर सामान रख, बाहर धूप में आ खड़ा हुआ। बस अभी खाली थी पर धीरे-धीरे भरती रही। टाइम हुआ। हार्न सुना तो सीट पर जाकर बैठ गया। देखा, पास ही एक लड़की आकर बैठ गयी है, ऊंट के घूमट रंग के स्वेटर में ढंकी हुई साधारण लड़की।

बस चली और आदत के मुताबिक चुप बैठा रहा। घर्र-घर्र-घर्र। बस चलती रही। कुछ गुनगुनाने को मन कर उठा। नोट बुक निकाल कुछ पंक्तियां लिखता रहा। स्टैण्ड आया। पांच मिनिट रुक कर बस फिर चल दी। मैं फिर अपने में डूब गया। धीमे से गुनगुनाता रहा ऐसे कि घर्र-घर्र-घर्र में ही यह गुनगुनाहट डूबी रहे किसी को सुने नहीं। बस ने एक घुमाव लिया तो मैं हल्के से उससे टकरा कर संभल गया।

फिर स्टेशन आ गया था। बस रुकी। सहसा उसने पूछा "आप क्या अलवर जा रहे हैं ?"

"हां। और आप भी"

"मैं भी, हां"

बस फिर चल दी और मैं फिर अपनी गुनगुनाहट में डूबा रहा। उसने पूछा "आपको लिखने का शौक है ?"

"हां। यों ही कुछ, थोड़ा सा"

वह फिर चुप हो गयी। मैंने कॉपी जेब में रखली। ध्यान उचट गया था। पूछा "आप क्या अलवर ही रहती हैं ?"

"हां। आप ?"

"दिल्ली" कुछ रुक कर बतलाया "जयपुर दोस्तों से मिलने आया था। आया ट्रेन से था और जा रहा बस से। सोचा कुछ वेराइटी रहेगी।"

बाहर वृक्ष और रेत के टीले उल्टी दिशा में भागे जा रहे थे और सूरज धीरे २ पहाड़ के पीछे उतरता जा रहा था। बस भागे और घुमाव पार करती बढ़ी जा रही थी। हवाइयां मन से निकल गई थी और मन बीती बातों की दुनिया में खो गया था। एक के बाद एक……बिखरी बातें मन के पटल पर उभरी आ रही थी। जीवन! एक सूखा पीपल का पत्ता, तीव्र हवा ने जिसे तोड़कर शून्य आकाश में निराधार भटकने को छोड़ दिया हो। अकेला! अकेलापन!! बच्चन की पंक्तियां याद आईं 'कितना अकेला आज मैं!' मन बार-बार दोहराता रहा—'कितना अकेला आज मैं! कितना अकेला आज मैं?' कहने को नाते-रिश्ते सब है, दोस्त हैं, परिवार भी बहुत है पर कहने को ही तो हैं, मन की रागिनी के स्वर उनके स्वर से कुछ अलग हैं। बाहर के उन सम्बन्धों का प्रभाव मन तक नहीं जाता। मन उतने निस्संग है।………उसकी ओर देखा। वह बाहर देख रही थी, पर केवल दृष्टि ही बाहर है ऐसा लगा।

लगा कि मन यहीं और है क्योंकि इनमें कुछ अजीब ढंग से कोई भी लगती है, होंठों पर कुछ अजीब-सी थकान और मुस्कान है। थोड़ी देर उनकी ओर देखता रहा फिर बस की अन्य सवारियों का ध्यान कर निगाह दूसरी ओर करली।…… एक निगाह बस की सवारियों की ओर डाली…… थोड़ी और अन्दर की सिर्फ़ पहने एक बूढ़ा ग्रामीण, सफेद दाढ़ी मुँह पर झुर्रियां छाया हुआ। कोट और पेन्ट धारी [illegible] का कोई बाबू या कालेज का छात्र। एक गंवार स्त्री। लम्बा घूंघट निकाले [illegible] [illegible] कोई नयी बहू। अन्तिम कोने में सटा, [illegible] [illegible] [illegible] हुआ [illegible]।

बस [illegible] की सड़क पार कर रही थी। [illegible] [illegible] [illegible] और [illegible] [illegible] धीरे २ [illegible] [illegible] था। [illegible] [illegible] है कि [illegible] का [illegible] [illegible] के [illegible] से [illegible] कर उठता है [illegible] [illegible] था और [illegible] के [illegible] पर [illegible] [illegible] [illegible] [illegible]। [illegible] का [illegible] [illegible] [illegible] बैठा रहा ………

[illegible]

'[illegible]'

[illegible]

कहकर ही वह चुप हो रही।

'हाँ, कहिये'

'कुछ सुनाइये न। वही सही जो [illegible] [illegible] देर पहले लिख रहे थे। मन होता है कि [illegible] [illegible] सुनने………' वह फिर [illegible] [illegible] [illegible] कर चुप हो गई।

उत्तर नहीं दिया। धीरे २ [illegible] का [illegible] दिया। दो ही पंक्तियां थोड़ी [illegible] था कि [illegible] [illegible] [illegible] सुनाकर दिया। [illegible] कर कहा [illegible] [illegible] सुनाती है।'

फिर [illegible]-[illegible]-[illegible] से [illegible] [illegible]। [illegible] नहीं मन का [illegible] [illegible] [illegible] था। [illegible] [illegible] [illegible] दूर देश की [illegible] नहीं [illegible] [illegible] थी। [illegible] [illegible] भी मन अनुभव कर रहा था। [illegible] [illegible] [illegible] [illegible] था और बस की [illegible] [illegible] [illegible] [illegible] थी। बस में भी ड्राइवर के [illegible] [illegible] के [illegible] [illegible] [illegible] कर रखी थी। [illegible] और [illegible]। ……………[illegible] [illegible] रही, [illegible] रही।

[illegible]

[illegible]

[illegible]

[illegible]

नर अपने काम में मग्न थे। किसी ने फिर पूछा "कितनी देर लगेगी भई ?"

'आधेक घंटा', उत्तर मिला।

कुछ समय बाद कहा "थोड़ा घूम आयें"

कुछ न बोलकर उसने पैर आगे बढ़ा दिये। बढ़ते रहे। बस पीछे रह गयी थी। पास ही रोड़ियों का एक ऊंचा सा ढेर पड़ा था। अजान ही वहां ऊपर बैठ गया। वह भी पास आ बैठी। थोड़ी देर चुप रह बोली "आपने वह अधूरी छोड़ दी थी"

कहा, 'खामोशी में आवाज़ गूंजेगी तो अच्छा नहीं लगेगा'

'धीरे से ही। नहीं तो रहने दें, आप न चाहें तो'।

धीरे–धीरे गुनगुनाना शुरू किया। फिर धीरे से सुनाया "जब तुमने दर्द दिया है तो मैं ही पीर सहूंगा और जब तुमने धनुष ताना है तो तीर भी मैं ही सहूंगा क्योंकि मैंने ही तो तुम्हारा हास लिया है अतः मैं ही आखों के प्याले में नीर भरकर प्रतिदान दूंगा। जीवन चलता ही जाता है और राह कभी रुकती नहीं, और दूर रहने पर भी चाह रुकती नहीं। एक बार जब तीर मन को भेद देता है तो खून बहा ही करता है और आह रुकती नहीं।"

सुनकर चुप हो रही। दूर से हल्की आवाजें आ रहीं थी बस की सवारियों की। हम चुप–चाप बैठे रहे। मन की पर्तें खुलती जा रही थी— जैसे कमल के दल। मन में कुछ भरता सा लगता था जो शून्यता को, खालीपन को समाप्त कर रहा था। बस और सवारियों को भूलकर न जाने मन कहां घूमने लगा, बिना बढ़ाये ही रोड़ियों पर हाथ आगे बढ़ गया था और दूसरा भी। दो हाथ पास–पास थे। अंगुलियां मिल गयी थी। हाथ एक हल्का दबाव महसूस करता था। बैठे रहे। कोई नहीं बोला।...... कोई नहीं बोला ......। धीरे से कहा 'आपका नाम नहीं पूछूंगा पर सम्बोधन ....'

'रहने दें' धीमे स्वर में उत्तर मिला।

"हां, जरूरत नहीं है उसकी, क्योंकि सम्बोधन तो दूर रहने पर ही काम आता है।"

जाना कि उसने कंधे पर सिर टिका दिया है।

कहा, "तबियत होती है कि आपका कुछ परिचय जानूं, पर नहीं, पूछूंगा नहीं। अपना भी नहीं दूंगा और शायद आप जानना भी नहीं चाहेंगी। इस क्षण का सम्बन्ध पूर्व से नहीं जोड़ूंगा, यह भी कोशिश नहीं करूंगा कि पर से इसका जुड़े। यह अपने में पूर्ण है। यह विश्वास का क्षण–जब मेरा विश्वास किया है तुमने, यह अपनत्व का क्षण–जब हमने अजान ही एक दूसरे का नैकट्य अनुभव किया है किसी बाहरी कारण से नहीं, मन के आवेग से। यह विश्वास का क्षण अपने में पूर्ण है। पूर्व और पर की इसे आवश्यकता नहीं"

कितनी ही देर खामोश रहे।

कहा, "जिन्दगी में अकेलापन ही सदा पाया है। केवल निराधार जैसे सूखा पत्ता शून्य में भटकता। शहर की चहल–पहल में होटल और क्लब की चमक–दमक में, कालेज के सम्मान और अधिकार में मन ने कुछ अजीब सी निस्सहायता और भटकाव ही अनुभव किया है। जैसे कि समन्दर का एक तख्ता हो जो लहरों की दया पर बिना दिशा जाने बह रहा हो डूबता–उतराता टक्करें खाता। यह आगे नहीं जाता कभी, मन का डर ऐसे साथ पर विश्वास को सन्देह में घेरे हो, कुछ डर कुछ से दूर हो नहीं जाता। मैं ढूंढ़ता हूं ... .

तुम मदिर प्रवीण होते हो । तुम्हें विश्राम की आवश्यकता है ।

। दृश्य परिवर्तन ।

यशोधरा—पधारिये आर्य । आपकी प्रतीक्षा थी……

(बालक के रुदन का स्वर)

सिद्धार्थ—यशोधरे, यही शिशु है मृत्यु का दूसरा छोर जीवन । एक की मृत्यु दूसरे का प्राण धारण करती है । जीवन ! मृत्यु ! मृत्यु… जीवन ! [illegible] शृंखला । तुम्हारे अनुराग ने मेरा मार्ग प्रशस्त कर दिया है, यशोधरा !

यशोधरा—[illegible] क्या कह रहे हैं । मैं तो [illegible] हूँ । मेरा जीवन तो आपसे इंगित [illegible] है ।

सिद्धार्थ—यशोधरे ! मेरे मन में जो [illegible] था वह [illegible] हुआ है, मुझे [illegible] मार्ग [illegible] करने के लिये जाना होगा, आशीर्वाद दो प्रिये, [illegible] मृत्यु से मुक्ति मिले ।

यशोधरा—[illegible] ।

सिद्धार्थ—[illegible] मेरा मार्ग [illegible] है । [illegible] तुम्हारी है, तुम्हीं [illegible] ।

यशोधरा—(अश्रुपूर्ण) [illegible]

[illegible]

करती थी, तुम मेरे और मुझे दूसरा [illegible] मार्ग की खोज करती है । जीवन [illegible] बवंडर से दूर रहना है ।

यशोधरा—देव, मैं एक प्रसव वेदना [illegible] मनोहर आगार उस प्रसव में मग्न होकर [illegible] रहे हैं, आर्य । बालक अभी सोता है इसके [illegible] कामना करें ।

सिद्धार्थ—[illegible] हो यशोधरा… यशोधरा [illegible] संदेह से दूर जाना चाहता हूँ मैं, जीवन [illegible] मरण की धुरी से दूर सत्य मार्ग पर । [illegible] का मेरा निश्चय [illegible] हो उठा है । [illegible] विगलित होने वाले जीवन से [illegible] निर्लिप्त [illegible] का अनुसरण करना चाहूँगा और तुम [illegible] करोगी ।

(सिद्धार्थ प्रस्थान करते हैं, उनका स्वर मंद होता है ।) अंधकार के पीछे ज्योति अवश्य होगी । [illegible] के पश्चात् एक शान्ति मिलेगी, [illegible] शान्ति, यशोधरे……

(दृश्य परिवर्तन)

[illegible]—अब केवल जीवन का लिया है तुम्हारे सहयोग के सुख से । परन्तु [illegible] के [illegible] यह मार्ग [illegible] है जो इससे [illegible] का [illegible] कर नहीं सकता ।

[illegible]—[illegible]

[illegible]

देवदत्त—तो मेरा मंत्र है युवराज, तुम सम्राट पद ग्रहण करलो।

अजातशत्रु—परन्तु यह विश्वासघात होगा। पितृश्री से विमुख होकर किस नरक में स्थान बनाऊंगा, नहीं जानता राजकुमार।

देवदत्त—तब छोड़ दो इस धरती के सुख-सौन्दर्य की आशा। महाराज बिम्बसार गौतम सिद्धार्थ के प्रति आकर्षित होते जाते हैं। हमें सिद्धार्थ को राजगृह प्रवेश से रोकना होगा। उसने मेरे आखेट का अपहरण कर कपिलवस्तु के संघाराम में मुझे अपमानित किया था। मैं उसे शांति से न रहने दूंगा। मेरी प्रतिज्ञा कठोर है।

अजातशत्रु—यथेष्ट, राजकुमार, इस कंटक को पथभ्रष्ट करना ही अभीष्ट है। मेनका ने विश्वामित्र का तप नष्ट किया था और मगध की सर्वश्रेष्ठ सुन्दरी अप्सरानी रम्भा का रूप धारण कर सिद्धार्थ को। देवदत्त की आत्मा को जिससे तृप्ति मिले वही कर्म मुझे भी प्रिय है।

रम्भा—निस्सन्देह राजकुमार, मेरा सौन्दर्य, मेरा नृत्य तपस्या भंग कर सकता है।

देवदत्त—मित्र, उपकृत हुआ हूं

देवदत्त—वह देखो, युवराज अजातशत्रु, वृक्ष के नीचे सिद्धार्थ समाधि लगाकर बैठा है। हमें यहीं से अवस्था का अवलोकन करना उचित है। आस पास शिष्य-समूह है वहीं। किसी की दृष्टि न पड़ जाय हम पर।

(कुछ स्त्रियों का स्वर सुनाई देता है)

अजातशत्रु—देवदत्त, यह अप्सरा-झुंड कैसा। कैसो ढोंग है। सिद्धार्थ का भंडा-फोड़ अभी हुआ जाता है। तपस्वी और नारी! अच्छा पाखण्ड है।

राधा—सुजाता, तुम्हारा दाम्पत्य जीवन फल-दायी हुआ है। पुत्र-लाभ मिला है, तुम्हें। अर्चना कर लें!

सुजाता—(सिद्धार्थ के निकट जाकर) मुझे सुकृतों का फल मिले।

सिद्धार्थ—कौन है, भन्ते! तुम्हारे आगमन का हेतु।

राधा—देवता, मेरी स्वामिनी को पुत्र-लाभ हुआ है। कर्त्तव्य प्रेरणा से आकर्षित होकर चली आई है।

सुजाता—देव, आपका प्रताप सुफलदायक हुआ है। यह है मेरी चिर वांछित साधना। बालक को आशीर्वाद प्रदान करें।

राधा—और ग्रहण करें, देवता यह सुस्वादिष्ट खीर।

सिद्धार्थ—देवी। यह बालक कैसा और यह खीर। हा, निराहार रहकर भी आनन्द की प्राप्ति न हुई। इस प्रकार इस देह को ही विगलित कर दूंगा तो मार्ग अधूरा रह जायेगा, शरीर की रक्षा करनी होगी। तभी वह समर्थ होगा और आगे बढ़ेगा अपने मार्ग पर, देवी। मंगलमय जीवन हो तुम्हारा, पुत्र र तब कीर्ति हो बालक की।

सुजाता—देव-वाणी ने उपकृत किया है। राधा ला ...... पायस।

सिद्धार्थ—देवी, उदर में विश्राम से कुछ पहुंचा नहीं है।

राधा—ग्रहण कीजिए, देवता। अहोभाग्य हमारे।

सिद्धार्थ—भन्ते, मैं देवता नहीं हूं एक साधारण मनुष्य से भिन्न कुछ नहीं—(खीर-पान करके) कितना सुस्वादु है यह पायस।

युग मर्दित प्रतीत होते हो । तुम्हें विश्राम की आवश्यकता है ।

(दृश्य परिवर्तन)

यशोधरा—स्वामी! भाई! आपकी प्रतिच्छाया····

(बालक के रुदन का स्वर)

सिद्धार्थ—यशोधरे, यही शिशु है मृत्यु का दूसरा छोर जीवन । एक की मृत्यु दूसरे का प्राण धारण करती है । जीवन ! मृत्यु ! मृत्यु···जीवन ! विरक्ति की शृंखला । तुम्हारे अनुराग ने मेरा मार्ग प्रशस्त कर दिया है, यशोधरा ।

यशोधरा—[illegible] क्या कह रहे हैं । मैं तो देव के आश्रय में हूँ । मेरा जीवन तो आपके इंगित पर [illegible] है ।

सिद्धार्थ—यशोधरे ! मेरे मन पर जो आवरण पड़ा हुआ था वह नष्ट हुआ है, मुझे [illegible] मार्ग [illegible] करने के लिये जाना होगा, [illegible] को [illegible] और मृत्यु से मुक्ति दिये ।

यशोधरा—और यह बालक ।

सिद्धार्थ—शिशु की रक्षा के लिए [illegible] बालक [illegible] है, तुम्हीं [illegible] ।

यशोधरा—[illegible]

[illegible]

करती थी, युग में और मुझे दूसरा मार्ग ढूंढ़ना [illegible] सत्य की खोज करनी है । जीवन और मृत्यु के बवंडर से दूर रहना है ।

यशोधरा—देव, मैं एक स्वप्न देख रही हूँ । मनोहर प्रासाद उस स्वप्न में [illegible] होकर [illegible] रहे हैं, भाई । बालक अभी छोटा है इसके जीवन की कामना करें ।

सिद्धार्थ—स्वप्न ही यशोधरा—यशोधरा इसी संदेह से दूर जाना चाहता हूँ मैं, जीवन और मरण की धुरी से दूर सत्य मार्ग पर । सत्य जिज्ञासा का मेरा विश्वास प्रबल हो उठा है । क्षण-क्षण विनष्ट होने वाले जीवन से हटकर निर्वाण मार्ग का अनुसरण करता जाऊँगा और तुम [illegible] करोगी ।

(सिद्धार्थ प्रस्थान करते हैं, उनका स्वर गूंज रहा है ।)

अन्धकार के पीछे ज्योति जगमगा उठेगी । [illegible] के पश्चात् एक शान्ति मिलेगी, शाश्वत शान्ति, यशोधरे····

(दृश्य परिवर्तन)

अजातशत्रु—अब देवदत्त [illegible] दिया है तुम्हारी [illegible] से युद्ध में । [illegible]

देवदत्त—अजातशत्रु [illegible]

अजातशत्रु—देवदत्त, [illegible]

देवदत्त—तो मेरा मंत्र है युवराज, तुम सम्राट पद ग्रहण करलो।

अजातशत्रु—परन्तु यह विश्वासघात होगा। पितृश्री से विमुख होकर किस नरक मे स्थान बनाऊंगा, नही जानता राजकुमार।

देवदत्त—तब छोड दो इस धरती के सुख-सौन्दर्य की आशा। महाराज बिम्बसार गौतम सिद्धार्थ के प्रति आकर्षित होते जाते हैं। हमे सिद्धार्थ को राजगृह प्रवेश से रोकना होगा। उसने मेरे आखेट का अपहरण कर कपिलवस्तु के संघाराम मे मुझे अपमानित किया था। मैं उसे शान्ति से न रहने दूंगा। मेरी प्रतिज्ञा कठोर है।

अजातशत्रु—यथेष्ट, राजकुमार, इस कंटक को पथभ्रष्ट करना ही अभीष्ट है। मेनका ने विश्वामित्र का तप नष्ट किया था और मगध की सर्वश्रेष्ठ सुन्दरी जनपदी रम्भा का रूप धारण कर सिद्धार्थ को। देवदत्त की आत्मा को जिससे तृप्ति मिले वही कर्म मुझे भी प्रिय है।

रम्भा—निस्सन्देह राजकुमार, मेरा सौन्दर्य, मेरा नृत्य तपस्या भंग कर सकता है।

देवदत्त—मित्र, उपकृत हुआ हूं

देवदत्त—वह देखो, युवराज अजातशत्रु, वृक्ष के नीचे सिद्धार्थ समाधि लगाकर बैठा है। हमें यहीं से अवसर का अवलोकन करना उचित है। आस पास शिष्य-समूह है नहीं। किसी की दृष्टि न पड़ जाय हम पर।

(कुछ स्त्रियों ■ स्वर सुनाई देता है)

अजातशत्रु—देवदत्त, यह अप्सरा-झुंड कैसा। अभी ठीक है। सिद्धार्थ का भंडा-फोड अभी हुआ जाता है। तपस्वी और नारी! अच्छा पाखण्ड है।

राधा—सुजाता, तुम्हारा दाम्पत्य जीवन फल-दायी हुआ है। पुत्र-लाभ मिला है, तुम्हें। अर्चना कर लें!

सुजाता—(सिद्धार्थ के निकट जाकर) मुझे सुकृतो का फल मिले।

सिद्धार्थ—कौन है, भद्रे। तुम्हारे आगमन का हेतु।

राधा—देवता, मेरी स्वामिनी को पुत्र-लाभ हुआ है। कर्त्तव्य प्रेरणा से आकर्षित होकर चली आई है।

सुजाता—देव, आपका प्रताप सुफलदायक हुआ है। यह है मेरी चिर वाञ्छित साधना। बालक को आशीर्वाद प्रदान करें।

राधा—खीर ग्रहण करें, देवता यह सुस्वादिष्ट खीर।

सिद्धार्थ—देवी। यह बालक कैसा और यह खीर। हा, निरन्न रहकर भी आनन्द की प्राप्ति न हुई। इस प्रकार इस देह को ही विगलित कर दूंगा तो मार्ग अधूरा रह जायेगा, शरीर की रक्षा करनी होगी। तभी वह समर्थ होगा और आगे बढ़ेगा अपने मार्ग पर, देवी। मंगलमय जीवन हो तुम्हारा, युग २ तक कीर्ति हो बालक की।

सुजाता—देव-वाणी ने उपकृत किया है। राधा ला ··· पायस।

सिद्धार्थ—देवी, उदर मे चिरकाल से कुछ पहुंचा नहीं है।

राधा—ग्रहण कीजिए, देवता। अहोभाग्य हमारे।

सिद्धार्थ—भद्रे, ■ देवता नही हूं एक साधारण मनुष्य से भिन्न कुछ नही—(खीर-पान करते) कितना सुस्वादु है यह पायस।

(कुछ दूरी पर सुनाई देता है)

सिद्धार्थ का एक शिष्य। (भड़क)—भ्रष्ट हो गया। गुरुदेव का पतन। कामदेव के कमनीय बाणों से बिद्ध हो गये।

२ शिष्य कौण्डिन्य—ऐसे गुरु और तपस्वी के साथ रहने पर हम भी कलंकित हो जायेंगे।

३ शिष्य—चलो, चलें बांधव। हमें यहाँ नहीं रहना।

सुजाता—जाता हूँ देवता, स्वामी प्रतीक्षा कर रहे होंगे।

सिद्धार्थ—प्रभु तुम्हारा मार्ग मंगलमय करें....

(स्वगत) अब मैं सत्य का साक्षात्कार करूंगा — सत्य की खोज में देह का दाह बना दूंगा.... कठिन तपस्या, कठोर साधना में उलझा करूंगा; सत्य, यही मेरा दृढ़ संकल्प है।

(कुछ दूरी पर)

देवता—रम्भा राजकुमार [illegible] समाधि में लीन हुआ चाहता है।

रम्भा—[illegible] राजकुमार, तब देखिये मेरा जादू।

देवता—रम्भा [illegible]

[illegible]

[illegible]

राशि पर तुम्हारा नर्तन आधारित है [illegible] विमोह नहीं है तुम्हें।

रम्भा—राजकुमार! मैं थक गयी हूँ.... इस से मनुष्य की वृत्ति परिवर्तित हो जा सकती है.... किन्तु यह प्रकृति.....कोप.......।

देवता—एक समय युवराज सिद्धार्थ को यशोधरा नारी के सौन्दर्य ने विमोहित कर लिया था और अब रूपसी तुम्हारा यह अलौकिक सौन्दर्य तपस्वी सिद्धार्थ का आसन हिला देगा.......

(संगीत ध्वनि के साथ धीरे: धीरे, रम्भा का नृत्य प्रारम्भ होता है)

सिद्धार्थ का स्वर—

सावधान! कामदेव, मैं तुम्हारी सेना को पहचानता हूँ तुम्हें [illegible] मनोरथ होना होगा। [illegible] तपस्या कठोर है।

(संगीत और नृत्य ध्वनि तीव्र होती है)

एक अट्टहास ध्वनि—

युवराज! योग की यह कठोर साधना! तुम्हारा [illegible] बाण है।

(संगीत ध्वनि)

सिद्धार्थ—[illegible] मुझे [illegible] रही है।....

[illegible]

[illegible]

[illegible]

सिद्धार्थ—रूप, यौवन, श्री, सम्पत्ति पुरुष, नारी सब चंचल हैं········ स्थिर कुछ भी नहीं, केवल एक मैं अडिग हूं·· केवल मैं स्थिर हूं।

अट्टहास स्वर—और बाल राहुल का विमोह भी नहीं है तुम्हें ?

सिद्धार्थ—नहीं है, यह सब पार्थिव रूप है····· आध्यात्मिक रूप मुझे ज्ञात हो चुका है।

(सहसा वीणा ध्वनि सुनाई देती है।)

अट्टहास स्वर—मैं राग झंकृत करूंगा।

(वीणा झंकृत होती है··· पर उसका अन्तिम मोड़ पर तार टूट जाता है। ध्वनि मन्द से मन्दतर होती हुई लुप्त हो जाती है।)

सिद्धार्थ—धन्य है, मैं समझ गया इस रहस्य को, न अति शिथिल, न अति कठोर, मध्यम। केवल मध्यम, मध्यम मार्ग का आश्रय लेना होगा मुझे। यही प्रवृत्ति और निवृत्ति के मध्यम एक समवृत्ति है। योग और भोग के बीच का साम्य मिला है मुझे·· ···

देवदत्त—उठो, रम्भा! चलें। सिद्धार्थ पर कोई अधिकार नहीं कर सकता वह अविजित है, अजेय है··· ···(ध्वनि दूर जाते हुये) चलो, लौट चलें।····

देवदत्त—मित्र अजातशत्रु, सिद्धार्थ एक असाधारण तपस्वी है। उन्होंने काम, क्रोध, मद, लोभ, मोह, रसना, तृष्णा, रति-रुचि, प्रवृत्ति पर विजय-लाभ किया है········वे जगत का कल्याण करेंगे। चलें··· हम भी चलकर उनका आशीर्वाद प्राप्त करें।

सिद्धार्थ—बोधिसत्व उठ, जन ······ ····जन का मार्ग प्रदर्शन कर········

(संगीत)

देवदत्त—अमिताभ की जय हो।

सिद्धार्थ—देवदत्त, आओ बन्धु।

देवदत्त—मुझे क्षमा कर दें भगवन्। प्रतिहिंसा की भावना ने मुझे उन्नत पथ से गिराकर पतित कर दिया था। मैंने ही आपके नगर-भ्रमण के समय वृद्ध, रोगी, मृतक और संन्यासी को भेजकर बाधा उपस्थित की थी अब मैं आपकी शरण हूं ···

सिद्धार्थ—उठो देवदत्त, तुम्हारी धर्म गति हो ·······वे निमित्त ही तो साधक हुए मेरी साधना में।

रम्भा—मेरा अपराध क्षमा हो देव!

सिद्धार्थ—तुम कौन! मैं नहीं पहचानता भन्ते!

अजातशत्रु—यह अम्बपाली है—वैशाली की नगरवधु·······आपके तप में बाधा डालने भेजा था मैंने देव! मुझ अधम, नीच, पापी अजातशत्रु को क्षमादान दें।

रम्भा—देव, मुझे इस जीवन से घृणा हो चली है······ बुद्ध की शरण आई हूं। धर्म की दीक्षा मिले मुझे।

सिद्धार्थ—निस्सन्देह समुचित पश्चाताप ने हृदय मन्थन कर लिया है तुमने·······तुम अधिकारिणी हो ·······तुम्हें मिलेगा तुम्हारा भाग।

रम्भा—उपकृत किया है देव ने।

(अपार जन समूह की ध्वनि सुनाई देती है जो निरन्तर बढ़ती ही जाती है)

जन समूह—अमिताभ की जय हो·······गौतम बुद्ध की जय·······

बुद्धं शरणं गच्छामि।
धम्मं शरणं गच्छामि॥
संघं शरणं गच्छामि॥॥

(धीरे-धीरे स्वर मन्द होता है)

(दृश्य परिवर्तन)

प्रतिहारी—आयुष्मान्! युवराज पधार रहे हैं। उनके साथ कुमार [illegible] भी हैं।

सुद्धोदन—युवराज सिद्धार्थ आ रहे हैं, प्रजावती! प्रजावती! सुना तुमने, सिद्धार्थ आ रहे हैं, कहाँ है बालक राहुल, जाओ कुमार तुम्हें पितृ-दर्शन का लाभ करावें। जाओ अपनी माहेश्वरी से कहो उनका बड़ा पुत्र लौट आया है।

(वाद्यों का स्वर धीरे-धीरे निकट आकर स्पष्ट होता है)

स्वर—बुद्धं शरणं गच्छामि
धम्मं शरणं गच्छामि
संघं शरणं गच्छामि

सुद्धोदन—आओ मेरे युवराज! [illegible]

[illegible]

है। हाँ, महाराज! भिक्षा मिले। माँ भी क्या आज भी भिक्षा न देंगी?

प्रजावती—मेरे लाल, माँ ने कभी बालक को कभी निराश किया है?

प्रतिहारी—पथ आदि सुसज्जित, सुस्वादु भोजन शीघ्र लाओ।

सुद्धोदन—राहुल, यह रहे तुम्हारे पिता सिद्धार्थ।

राहुल—पितृश्री प्रणाम।

सिद्धार्थ—राहुल, तुम भी बुद्ध होंगे।

राहुल—मैं तो आपका पुत्र हूँ। पितृश्री मुझे आशीर्वाद दीजिये।

सिद्धार्थ—वत्स राहुल......तुम्हारी माता कहाँ है? [illegible]

[illegible]

शुद्धोधन—सिद्धार्थ, यह क्या अनर्थ ...... राहुल बालक है......उसके अभिभावक तुम नहीं रहे।

सिद्धार्थ—यथेष्ट महाराज। भविष्य में बिना अभिभावक की इच्छा के, दीक्षा न दूंगा।

यशोधरा—मुझे दीक्षा मिले।

शुद्धोधन—यह क्या देख रहा हूं! सर्वनाश का पथ।

सिद्धार्थ—ममता मोह का त्याग करें राजन्। सत्य, धर्म का पालन ही जीवन का निर्वाह पद प्रदान करता है।

ध्वनि—तथागत की जय। बुद्धं शरणं गच्छामि..............

शुद्धोधन—अब पुत्र, मुझे भी अपने संग में लें।

नन्द-छन्दक—जय हो देव।

सिद्धार्थ—यथेष्ट राजन्। अरे कौन बान्धव नन्द.......छंदक, तुम कहां छिपे थे?

नन्द—क्या कहूं देव! यह दृश्य, यह व्यथा देखी नहीं जाती—....

छन्दक—युवराज अब तो हमें छोड़कर न जायें।

सिद्धार्थ—तुम दोनों आना मेरे पास, तुम्हें सन्मार्ग का, अपनी अमूल्य निधि का दान दूंगा। तथागत के मध्यम मार्ग पर आरूढ़ होकर जीवन का आनन्द प्राप्त करना है तुम्हें।

जनसमूह—तथागत की जय। भगवान बुद्धदेव की जय।

समवेत स्वर में—बुद्धं शरणं गच्छामि।
धम्मं शरणं गच्छामि॥
संघं शरणं गच्छामि॥।

ग्रामोद्योग देश में व्याप्त बेकारी, अर्द्ध बेकारी दूर करने में समर्थ है

ग्रामोद्योगी वस्तुएँ अपनाकर ग्रामीण भारत को

सुदृढ़ बनाइये

राजस्थान में तेल घाणी उद्योग व ऐसे ही अन्य हजारों परिवारों को रोजी देकर शुद्ध वस्तुएँ उपलब्ध कराते हैं।

प्रत्येक खादी एवं ग्रामोद्योग भण्डार पर उपलब्ध हैं

राजस्थान खादी तथा ग्रामोद्योग बोर्ड द्वारा प्रमाणित

पिंजड़े का पंछी

श्री दुर्गादत्त शर्मा

[illegible]

[illegible]

एक दिन मे चार बार खाता है तो ५० रुपये पाने वाला एक दिन मे कितना। किन्तु उससे हिसाब न बैठता वह पुनः अपने दिमागी विटेमिनो मे जोर लगाता, मैनेजर साहब के परिवार मे भी तो वही ६ प्राणी हैं उनकी आमद के अन्यजरिये भी हैं फिर ? किन्तु फिर भी हिसाब न होता। एक बार उसने कहीं अखबार मे पढा था "नई देहली के राजमहलो और गरीब मजदूरो की झोपडियो मे जो विषमता है वह स्वतंत्र भारत में एक दिन भी नही टिक सकती, राष्ट्रपिता गाधी।" वह बार-बार इन शब्दों को दोहराता, सोचता, उसका मन मस्तिष्क पर सवार हो जाता घोडे की तरह खुले मैदान मे सरपट दौड लगाता, एक भाव आता दूसरा जाता। अगणित लहरें उसके गंभीर हृदय सागर में उठती, आपस मे टकराती, चकनाचूर होती, उन्नति का लाभ का कोई रास्ता नहीं, बच्चो की शिक्षा के लिये कोई सहारा नहीं, वह अपने उन मासूम बच्चो का जीवन कैसे बनाये। क्या करे ? अर्थाभाव के कारण उसकी स्वयं की ही नही उसके बच्चो का भविष्य भी गहन अंधकार में परिपूर्ण था अपनी संतान के प्रति उसका मोह ममता, स्नेह साकार खडे दिखाई देते। कभी सोचता उसने इन बच्चो को जन्म ही क्यों दिया। किन्तु वह तो परिवार नियोजन के साधनो से अनभिज्ञ था अतः अब कर्मा वह उन्हे अपने पर बोझ मानता तो कभी समाज पर, तो कभी देश पर। कभी इन्हे वरदान समझता, तो कभी अभिशाप। उसने अनाभाव की पूर्ति के लिये भिन्न २ उपाय सोचे परन्तु सफलता नही मिली। सट्टेबाजी की, भाग्य ने धोखा दिया, जन्तेर किये उसके मन मे भक्ति की मदाकिनी प्रबल लहरें भकोरे लेनी, नयनो के निर्झर असीम वेग से उसके ईष्ट देवता के चरणों पर बहने लगने किन्तु फिर भी दिमागी आसमान पर छाये रहने वाले भगवान ने उस गरीब रामू की एक नही सुनी। शायद उसका भगवान भी पूँजीपति हो गया था। दिल दिमाग साथ साथ काम नही कर पा रहे थे। क्या करे, परेशान था।

रामू की बीबी जब-तब भूख की समस्या के उग्र रूप धारण करने पर किसी सभ्य पड़ोसी के यहां मजदूरी कर लेती, कभी आटा पीस देती, तो कभी उनके यहां चौका-बर्तन कर आती कभी उधार ही लाकर काम चला लेती। कभी ऐसा भी अवसर आ जाता कि जब अपने मकान मे रहने वाले भाइयो को दिखाने के लिये चूल्हे मे आग सुलगा कर ही अपनी फकीरी हालत छुपाने की और अपनी आबरू को बचाने की कोशिश करती। रामू जब कभी कारखाने से लौटता, उसकी गोमती सदैव हंसते हुए उसका स्वागत करती, कभी कोई माग पेश करने का विचार नहीं, सोचने का कोई प्रश्न नही, वह अपने पति की मजबूरियों से भली-भांति परिचित थी। वह भी सोचती इस समाज मे उसके परिवार का क्या मूल्य है ? समाज के लिये इसका परिवार अभिशाप है अथवा उसके जैसे अनेक निर्धन परिवारो के लिये समाज स्वयं ही एक अभिशाप बना हुआ है। समाज की रीति और प्रथाओं के नाम पर गरीबो का बलिदान हो तब वरदान तो वह मान नही सकती। गरीब की सुख, चैन और आनन्द कहा ? आनन्द के लिए संतान, संतान के लिए विवाह, विवाह के लिये समाज और समाज के लिये पैसा, लोग कहते हैं, विवाह एक सामाजिक रोग की मनोवैज्ञानिक औषधि है। किन्तु विवाह के लिये पैसा। पैसे के लिये समाज। जिनके पास पैसा नही उनकी कोई सामाजिक स्थिति नहीं उनके लिये समाज मे कोई स्थान नहीं। जीवन की

प्रत्येक समस्या का समाधान पैसे में है। यही सब राजू और कोमली दोनों सोच रहे थे। बेचारों ने एक एक पैसे को दांतों से पकड़ने की कोशिश की थी किन्तु पता पैसा और रहे, सस्ती [illegible] चढ़ती जो है। आखिर कुछ न कुछ तो करना ही था। राजू के पास [illegible] और कोई जरिया न था, रिक्शा की आमदनी भरी. इस युग में सवारी को रिक्शा तो क्या इनाम इकराम के बाद पर भी कुछ नहीं मिल पाता। आज रिक्शा की जरूरी नीचे से नहीं, ऊपर ही ऊपर बिजली के तारों से चलती है। [illegible] राजू की जान पर आ बनी थी। कोई अतिरिक्त कार्य करने के लिये समय नहीं। [illegible] रात के [illegible] रिक्शा चलाता। [illegible] राजू की समझ में [illegible] बैठ गई। परन्तु रिक्शा चलाना भी तो कोई हंसी खेल नहीं। [illegible]

[illegible]

जमीन की सतह से ऊंचा उड़ने के कारण [illegible] में ही लीन रहते हैं, [illegible] परन्तु रिक्शा चलाना भी तो एक कला है [illegible] अभ्यास और परिश्रम के पश्चात् राजू को रिक्शा चलाने में सफलता मिली। [illegible] का रिक्शा लेकर [illegible] पर खड़ा हो [illegible] मजदूरों को बुलाने की कोशिश करता किन्तु इस क्षेत्र में भी तो [illegible] कोई कम न थी। एक [illegible] हो गया, दिन भर काम करता [illegible] रात [illegible] करता [illegible] सवारी का। पैसे की [illegible] और पैसा पेट की [illegible]। [illegible] ईमानदारी से [illegible] में काम करता। एक दिन तो उसके [illegible] ओवरसीयर ने उसे बड़े [illegible] दिया थी और कह दिया यदि काम ठीक नहीं करेगा, तो नौकरी से निकाल दिया जायगा। [illegible] राजू के [illegible] हो गए। [illegible] को रिक्शा लेकर चल दिया। [illegible]

[illegible]

वजन के इन्सान को तीन मील तक ले जाने की मजदूरी सिर्फ तीन आने।

रामू ने उस पुकारने वाले व्यक्ति के मुख को देखा, जो बिजली के खम्भे के नीचे तक आ चुका था, यह तो उसका वही कारखाने वाला मैनेजर था। वह बिना कुछ कहे सुने एक भय की सी आशंका से अपना रिक्शा लेकर दौड़ पड़ा। मैनेजर साहब आवाज लगाते ही रह गये। तभी एक दूसरा रिक्शेवाला आ गया। वह रिक्शा यूनियन का मन्त्री था, नाम था, मोहन। मोहन ने इस सबको आश्चर्य-चकित होकर देखा। उसने रामू को रोककर इसका कारण जानना चाहा। रामू ने मोहन को एक ओर ले जाकर अपनी राम–कहानी सुना दी।

मोहन भी एक मध्यमवर्गीय माता पिता की सन्तान एवं उनकी समस्त आशा, अभिलाषाओं का केन्द्र बिन्दु था। बड़ा ही कठोर परिश्रमी युवक था। उसने बी. ए. पास किया और फिर अपने पिता के कंधों से कुछ बोझ भार हल्का करने हेतु नौकरी की तलाश की। बड़ी २ मनौतियां बोलीं, संकल्प किये। प्रार्थना पत्र देते २ थक गया किन्तु सारे दफ्तरों की खाक छानने के पश्चात भी उसे कहीं जगह न मिल सकी। वह विचार किया, करता वह इस विकास के युग में भी अविकसित एवं बेकार था। उसके पास यूनिवर्सिटी का प्रमाण पत्र तो था किन्तु इस युग में यही तो पर्याप्त नहीं, इससे भी ऊपर चाहिये किसी श्रीमकाय का वरद हस्त, सिफारिश जो उसके पास भी नहीं। इसके अभाव में भूखे मरो समाज चुप रहेगा, सरकार के कानों पर जूं नहीं रेंगने की। हां, यदि आत्म हत्या करने के प्रयास में विफल हुए तो सरकार का मोटा कानून उसके कोमल करों का शृंगार करने में देर नहीं करेगा। कितनी सुन्दर व्यवस्था है। यहां खाने और मरने का अधिकार नहीं, अधिकार केवल तड़पने का है, छटपटाने का है।

कभी सोचता काश! वह युवक से युवती होता, कभी सोचता किसी विशाल भवन में उसकी यदि कहीं सुसराल होती, कभी सोचता यदि उसका पिता एक नेता होता। इसी प्रकार सड़कों का चक्कर लगाते दिन, महीने और वर्ष निकल गये। उसके पिता परलोक सिधार गये, माता विधवा हो गई और वह स्वयं अनाथ। आखिर कुछ न कुछ तो करना ही था। अतः उसने अपने भावी कार्यक्रम पर विचार किया। और जैसे तैसे कई धंधे अपनाने के बाद अन्त में उसने रिक्शा चलाना ही प्रारम्भ कर दिया। पढ़ा लिखा था ही, होशियार था। अतः रिक्शा यूनियन का मन्त्री बन गया।

कुछ ही दिनों में रामू और मोहन अच्छे मित्र बन गये। मोहन रामू को अपने रिक्शे की सवारियां दिलवा देता और इसी प्रकार उसकी अन्य सहायता भी करता रहता। किन्तु अधिक परिश्रम करने से रामू और अधिक अस्वस्थ हो गया, वह पहले ही खांसी और ज्वर से पीड़ित था। कुछ दिनों में ही खांसी के साथ खून भी आने लगा। पहिले तो उसने इस सबकी परवाह न की। वह परवाह भी क्या और कैसे करता। इतने पैसे कहां थे जो अपना उचित इलाज करा सकता, बाहर जलवायु परिवर्तन के हेतु जा सकता। फलस्वरूप उसकी दशा खराब हुई और अपनी नौकरी एवं मजदूरी दोनों से ही अवकाश लेना पड़ा। मोहन ने उसकी यथेष्ट सेवा सुश्रूषा भी की, औषधि भी दिलाई किन्तु बहुत देर हो चुकी थी, उसे टी. बी. का अन्तिम दौर चल रहा था। रामू ने अपनी पुत्री के विवाह की तिथि आर्थिक कारणों से पहिले ही टाल दी थी। अब तो इन नवीन परिस्थितियों ने लड़के वालों को भी इस सम्बन्ध में पुनर्विचार करने पर मजबूर कर दिया और उन्होंने एक दिन सम्बन्ध विच्छेद की सूचना दे ही दी।

● शेष पृष्ठ एक सौ तीस पर

उसे देखा

हिमकर 'मैमी'

वह कौन थी कहाँ रहती थी मैं नहीं जानता। [मैं]ने उसे देखा है और मेरा हृदय गवाही देता है कि [मैं] उससे बहुत अधिक परिचित हूँ। किस सम्बन्ध से, [कह]ाँ और क्यों! इन प्रश्नों का उत्तर मैं नहीं दे [स]कता। देखा भी कहाँ से, मैंने केवल मात्र उसे देखा [भर] था।

उस सुन्दर शाम को, मैं [illegible] के किसी [illegible] नहीं कुछ [illegible]। मुझे मित्र के साथ उस मंदिर [द]र्शन कर आने को मजबूर किया गया। मैं न मालूम [कि]स [illegible] से उस ओर निकल पड़ा। [illegible] [illegible] ? [illegible] के [illegible] जीवन के [illegible] है? [क]िन्तु [illegible] उस ओर बढ़े जा रहे थे।

[illegible] हुआ, हर किनारे का मन्दिर का, [illegible]

[illegible]

लड़कियाँ ऐसी भी [illegible] थी [illegible] और सम्भ्यता के आवरण में [illegible] भी इसी [illegible] के मन्दिर में आ-जा रही थी, इन्हीं में वह भी थी। अचानक बरबस मेरी दृष्टि उस ओर आकर्षित हो गयी। वह !!!

किशोरी [illegible] ढंग से [illegible] को पूर्णतया संभाल कर चलते हुए, सीढ़ियाँ चढ़ रही थी। [illegible] ......

[illegible]

फिर यह पहरा किस पर ? यह पहरा है हमारी नैतिकता पर, मुझे वे नौजवान दीख पड़े जो नीचे खड़े चुहल कर रहे थे, और वे लड़कियाँ जो अपने दुपट्टे को हटा और बार-बार ढँक कर अपने यौवन का उभार दिखा रही थीं। यह पहरा था उन पर। कैसी विडम्बना है हमारी संस्कृति का पुनीत स्थान, जहाँ हमारे पूर्वज सारे दुःख भूल जाते थे जो शान्ति का केन्द्र था वहाँ इतना भ्रष्टाचार क्यों ? क्या हम इतने गिर चुके हैं ?

वह मंदिर में प्रवेश पा गई दूसरे द्वार से जो स्त्रियों के लिए था। मैं बिना दर्शन ही लौट पड़ा। बाहर लोग मेरी ओर देख रहे थे। किन्तु मेरी कल्पना थी, किसे फुरसत थी कि वह यह देखे कि मैं बिना दर्शन क्यों लौट रहा हूँ। दया है यह भारतीय पर्दा प्रथा की व पुरुष प्रधान समाज की कि मैं किसी सहलिंगि का दृष्टि बिन्दु न बना। मेरे जैसे और भी बहुत थे। हाँ, यदि मैं लड़की होता तो अवश्य लोगों की निगाहें मुझ पर पड़ती। थोड़ी देर बाद वह दर्शन कर लौट रही थी। दुर्भाग्य था मेरा ध्यान उसकी ओर आकर्षित न होता किन्तु मैंने देखा कि वह सीढ़ी पर बैठे भिखारियों को प्रसाद बाँट रही थी स्वयं उनके पास जाकर। लोग, जब भिखारी माँगता है तब भी प्रसाद नहीं देते किन्तु इनमें वही एक ऐसी थी। जो इन सबमें विचित्र थी।

सीढ़ी समाप्त हो गयी। मंदिर की पाँच सौ सीढ़ी और मैं फिर नीचे था; उसके भाई ने प्रसाद माँगा किन्तु अब प्रसाद कहाँ था बोली "न तुमने प्रसाद खाया न मैंने ··· प्रसाद तो खतम हो गया।" कितना छोटा– उत्तर था। किन्तु कितनी सरलता से भरा भोला उत्तर। वह चल दी और मैं देखता रहा, सोचता रहा। क्या अन्तर है इसमें और उनमें। क्या कारण है इस भेद का। अन्तर ने उत्तर दिया केवल वातावरण का असर। इनके घर में जैसी बातें होती हैं, जैसा वातावरण इनके पड़ोस का है, जो बात मित्रों व सहेलियों में होती है, वही तो सीखती हैं ये। इन्हीं बोझिल विचारों में चारों ओर दृष्टि उठाई। सारा वातावरण फिर ज्यों का त्यों था। उसके होने में या न होने से कोई अन्तर नहीं। केवल मैंने उसे देखा, बस ·······

पिंजड़े का पंछी

● शेष पैंतालीस का

रामू पर विपत्ति का दूसरा पहाड़ टूटा। वह क्या करे। उसकी हालत और भी गिर गई। उसके मरने के बाद उसकी गृहस्थी का क्या बनेगा ? वह चाहता था, अपनी लड़की का हाथ मोहन के हाथों में सौंप दे। उसे मोहन पर भरोसा था, उसकी मृत्यु के बाद मोहन उसकी गृहस्थी को भी संभाल लेगा। इस प्रकार लड़की देकर यदि ऐसा लड़का मिल सके तो वह शान्ति से मर सकेगा। किन्तु इतना कहने का साहस नहीं था। एक दिन जब उसकी दशा अत्यन्त ही गम्भीर हो गई, अकुलाहट, घबराहट, उसके मुख पर झलक रही थी, मोहन भी वहाँ औषधि दे रहा था, रामू के बीबी बच्चे सभी वहाँ थे, रामू ने मोहन के कानों में अपने मन का बोझ उड़ेल दिया। मोहन भी न नहीं कर सका। रामू के मुँह पर एक पल के लिये अत्यधिक शान्ति और संतोष की आभा चमकी और विलीन हो गई। जीवन में पायी थी उसने असफलता, अशान्ति, तड़पन, पर कदाचित आकस्मिक सफलता ने उसकी चिर इच्छित साधा को पूर्ण कर उसके सदैव २ के अशांत मन को चिर शांति के अनन्त में सुला दिया था।

जिन्दगी जीप है

[illegible]

अर्वाचीन-साहित्य

● एक समीक्षा

"तंत्री नाद कवित्त रस, सरस राग, रति-रंग।
अनबूड़े बूड़े, तिरे, जे बूड़े सब अंग"

—"बिहारी"

कथा-साहित्य (१)
डा० देवराज उपाध्याय
भारती की भारती (कविता) (४)
श्री [illegible] 'द्विरेफ'
कहानी-साहित्य (५)
श्री [illegible] गोस्वामी '[illegible]'
एकांकी-साहित्य (१०)
डा० रामचरण 'महेन्द्र'
[illegible] की दुनिया की (कविता) (१३)
श्री [illegible] सिंह [illegible]
गीति-साहित्य (१३)
श्री [illegible] '[illegible]'
समीक्षा-साहित्य (१८)
डा० [illegible] विनोद शर्मा
[illegible] (कविता) (२१)
डा० [illegible]
[illegible] (२५)
डा० [illegible]
[illegible] (कविता) (३०)
श्री [illegible]
[illegible] (३३)
श्री [illegible]
[illegible] (३६)
श्री [illegible]
[illegible] (३९)
श्री [illegible]

कथा साहित्य

डा० देवराज उपाध्याय, अध्यक्ष, हिन्दी विभाग, महाराजा कालेज, जयपुर

साहित्य शब्द में सहस्य अथवा सहितस्य भाव वाले अर्थ का भाव अवश्य वर्तमान है और इसके द्वारा जगत के जीवों को रागात्मक सूत्र में बांधने में सहायता मिलती भी है, पर वास्तव में सृजन व्यक्ति की स्वतंत्रता की घोषणा है। व्यक्ति सृजन में प्रवृत्त ही इसलिये होता है कि कहीं न कहीं उसमें खटक है, वह जीवन के प्रवाह में अपनी संगति बैठा नहीं पाता, अतः वह प्रवाह को ही अपनी ओर मोड़ना चाहता है, उस पर अपनी छाप बैठाना चाहता है। वास्तव में देखा जाय तो मनुष्य की प्रत्येक क्रिया के मूल में यही प्रवृत्ति सक्रिय रहती है। उसका हंसना, रोना, खाना, पीना, उठना, बैठना सब इसी आत्म-स्थापन के द्योतक हैं। कबीर ने जब कहा कि जो करूं वही पूजा—तो शायद इसी स्वर में स्वर मिला कर बोल रहे थे।

परन्तु यह आत्म-प्रकाशन या आत्माभिव्यक्ति की क्रिया दैनिक प्रवाह पर बहते हुए मानव के द्वारा, श्वसन-प्रश्वसन जैसी जैविक तथा सहजजात क्रियाओं के द्वारा, बाहरी आघातों से उत्पन्न Reflexes के द्वारा उतने सम्यक् रूप से सम्पन्न नहीं होती जितनी कला के द्वारा, कला के द्वारा भी नहीं होती जितनी साहित्य के द्वारा, साहित्य के द्वारा भी उतनी नहीं, जितनी साहित्य के एक अंग उपन्यास के द्वारा। अलंकार-शास्त्रियों ने सार अलंकार की परिभाषा के लिए 'वस्तुन उत्तरोत्तरमुत्कर्षः सारः' अर्थात् जहाँ पर वर्ण्य वस्तु के उत्तरोत्तर उत्कर्ष का वर्णन हो वहां सार अलंकार होता है। उदाहरण—

"राज्ये सारं वसुधा वसुधायामपि पुरं पुरे सौधम्।
सौधे तल्पं तल्पे वराङ्गनानङ्गसर्वस्वम्॥"

अर्थात् राज्य में सार तत्त्व पृथ्वी है, पृथ्वी में नगर, नगर में भी महल, महल में भी पलंग और पलंग में भी एक अति सर्वस्व सुन्दरी। उसी तरह कहा जा सकता है कि जगत में सार पदार्थ जीवन, जीवन में अभिव्यक्ति, अभिव्यक्ति में आत्माभिव्यक्ति, आत्माभिव्यक्ति में भी कला-साहित्य, साहित्य में भी उपन्यास।

यहां पर उपन्यास के संदर्भ में सार अलंकार का रूपक बांधा गया। इसका उद्देश्य इतना ही कहना है कि उपन्यास आज कहानी मात्र नहीं रह गया है, कुछ मनोरंजक घटनाओं का तारतम्य उपस्थित कर देना ही नहीं रह गया परन्तु वह लेखक के व्यक्तित्व, उसकी आन्तरिक वेदना, स्पंदन, मंथन तथा आन्दोलन का सर्वश्रेष्ठ साधन है। बहुत दिनों तक कला के क्षेत्र में अनुकृति art as an imitation वाले सिद्धान्त की तूती बोलती रही, लोग कला में बाह्य वस्तु की प्रधानता मानते रहे, किसी दृश्य तथा विशाल प्राकृतिक दृश्य-जगत के सफल चित्रण में ही कला का साफल्य माना जाता रहा। परन्तु आज कला में अभिव्यक्ति की प्रधानता स्वीकृत हो चुकी है। कला अनुकृति नहीं, अभिव्यक्ति है, expression है। इसमें बाह्य वस्तु प्रधान नहीं, प्रधानता है अभिव्यक्ति की। यदि यह कोई प्रश्न करे कि किसकी अभिव्यक्ति तो स्पष्ट उत्तर है कवि के हृदयस्थ भावों की, अर्थात् कवि के आत्म-स्वरूप की, जो किसी भी चीज को अपने प्रकाश के

[illegible] है। इसीलिये कहा गया है 'साहित्यकार साहित्य में बसा है।' यदि यह बात ठीक है कि साहित्यकार साहित्य में बसा है तो इसका [illegible] साहित्य है। [illegible] है। [illegible] "न [illegible]" [illegible] implication [illegible]।

[illegible]

[illegible] Flaubert ने कहा कि मैं [illegible] about nothing पर एक पुस्तक लिखना चाहता हूँ [illegible] music [illegible] है। [illegible] fusion [illegible] high tempera-ture पर [illegible] है। [illegible] high temperature fusion [illegible]

[illegible]

पर हम राजस्थान के आधुनिक कथा साहित्य को देखें।

इधर दस पन्द्रह वर्षों के अन्दर राजस्थान में जो कथाकार हमारे सामने आये हैं उनमें दो तरह से उल्लेखनीय हैं—परिमाण की दृष्टि से तथा गुण की दृष्टि से। वे हैं डा० रांगेय राघव तथा श्री यादवेन्द्र शर्मा चन्द्र। इधर के नवोदित कथाकारों में यह ने अपूर्व लगन, साहस, पर्यवसाय तथा प्रतिभा का परिचय दिया है तथा हर तरह के प्रयोग में काम लिया है। उदाहरण के लिये एक उपन्यास में उन्होंने आत्म-कथानक शैली में काम लिया है। दूसरे उपन्यास को डायरीनुमा शैली में लिखा गया है। सर्व समर्थ शैली की प्रधानता तो विश्व के सारे कथा-साहित्य में आज भी है। चन्द्रजी में भी उसकी बहुतायत हो और वे आमन्न-लेखक हो तो इसमें आश्चर्य ही क्या? राजस्थान के निवासी होने के कारण यहां के लोगों के रहन-सहन के ढंग में, विचार-पद्धति में तथा भावनाओं में इनका प्रगाढ़ परिचय है। विशेषतः गत युग के राजा-महाराजाओं के विलास तथा वैभवपूर्ण जीवन को इन्होंने बहुत समीप से देखा है और उन्हें अपनी रचनाओं का आधार बनाया है।

यही इस लेखक का गुण है, साथ ही दोष भी है। मैं तो कहूँ दोष ही है गुण नहीं। मेरा सदा से ही यह विश्वास रहा है कि लेखक को वर्ण्य-विषय में अधिक अपने ऊपर विश्वास करना चाहिये। यदि लेखक ऐसे विषय को लेता है जो बहु परिचित है, जिसमें जनता का राग-विराग लगा हुआ है तो शायद उसकी सृजन शीलता को खुलकर काम करने का अवसर नहीं मिलता। एक ओर तो लेखक की आन्तरिक शक्ति को, उसके सामञ्जस्य के क्रिया-व्यापार में बाधा पड़ती है तो दूसरी ओर पाठक में रसग्राहिता की शक्ति अवरुद्ध होती है। दोनों में सस्ती भावुकता से मोह उत्पन्न होता है।

डा० रांगेय राघव में इस प्रवृत्ति से सर्वथा मुक्ति ही हो गई हो यह बात नहीं। परन्तु इतना अवश्य है कि उनके कथा-साहित्य में विकास के तत्व मौजूद है। वे दुनिया को आंखें खोल कर देखना चाहते हैं। यों तो आंखें मूंद कर देखने में कम दिखलाई नहीं पड़ता, बल्कि ज्यादा ही दीख पड़ता है। परन्तु आंख मूंद कर देखा जाय या खोल कर इसमें देखने की क्रिया की ही प्रधानता है। प्रश्न यह है कि लेखक ने कहां तक देखा है, कहां तक subject ने object को आत्मसात् किया है। डा० रांगेय राघव की इधर की पुस्तकों में 'कब तक पुकारू'' उल्लेखनीय है। इसमें नट-नटिनियों के जीवन को आधार के रूप में ग्रहण किया गया है और उन पर सहानुभूति की दृष्टि दी गई है। आज तक के उपेक्षित व्यक्ति भी साहित्य में स्थान पाने लगे है। यह प्रमाण हिन्दी कथा-साहित्य में बीसवीं सदी के तृतीय दशक से स्पष्टतया प्रारम्भ हो गया है। उस प्रयोग में यह उपन्यास एक नया कदम है। चूंकि यहां पर एक अछूते विषय को लिया गया है अतः लेखक की आत्मीयता, उसके आत्मतत्त्व की मात्रा भी उभरने लगी है। इसीलिये पुस्तक का महत्व मेरी दृष्टि में अधिक है।

श्री विजयदान देथा की कहानियों का मैं प्रशंसक पाठक हूं। इनकी कहानियों में गजब की आग है, ऐसी फुफकार है मानो समाज की विडम्बनाओं को जला कर खाक कर देंगी। वे अपनी आत्मानुभूति को काव्यानुभूति तक भी ला दें तो बड़ी दिव्य कहानियों की सृष्टि कर सकते है। आत्मान्वेषणा को क्रमशः कर से क्यों नहीं देते?

[illegible] के गीत, बापूजी–भारतजी गोस्वामी, दुर्गेश शर्मा व विजय शर्मा के अभिनंदित प्रयत्नों से [illegible] एक उत्साह–[illegible] किरण–सी [illegible] मुझे पढ़ने को मिली थी। आधुनिक मनोवैज्ञानिक तथा चेतना–प्रवाह पद्धति का इसमें [illegible] परिपुष्टित हुआ है। [illegible] जिस क्रम से प्रारम्भ हुआ [illegible] हो [illegible] ? पर ऐसा हो नहीं सका है। [illegible] इत्यादि की [illegible] का उत्साह भी [illegible] हुआ है। [illegible] की [illegible] है।

[illegible]

[illegible]

भारती की आरती

श्री [illegible] "[illegible]"

तेरे प्रकाश के मंडन में,
[illegible] भोर भरे।
[illegible] के सुभग उरोजों में,
निशीथ [illegible] भरे,
[illegible] पर,
[illegible] भरे।
तेरे भोले [illegible] पर,
[illegible]।
तेरे नयनों के [illegible]
[illegible]
[illegible]
[illegible]।
[illegible]
[illegible]।
तेरी वीणा के तारों में,
जीवन–संगीत [illegible]
[illegible]
[illegible]।
[illegible]
[illegible]।
[illegible]
[illegible]
[illegible]
[illegible]।
[illegible]
[illegible]।

कहानी साहित्य

श्री भालचन्द्र गोस्वामी अग्गर, *राजस्थान विधान सभा, जयपुर*

कहानी का नाम आते ही मुझमें एक अजीब सूनापन भर जाता है। ऐसा लगता है मानो दूर किसी विजन प्रदेश में लौटती हुई गायों के गले में बंधी घंटियों के स्वर रिरा-रिराते हुए वायुमंडल पर तैरते चले जा रहे हैं। उस कुटिया के द्वार तक जहां कोई एक हल्के दीपक की टिमटिमाहट में अपने कभी न आने वाले प्रेमी की प्रतीक्षा कर रहा है, उसे मालूम है कि वह नहीं आएगा। फिर भी उसके अतृप्त मन का कोई कोना रह-रह कर कराह उठता है और इस असम्भव कल्पना में ही सुख प्राप्त करता है कि शायद आ जाए। उस दर्द का प्रतिनिधित्व करने वाली पात्राएं हैं, सोनाली जो अपने चार बच्चों को छोड़ कर उस इनायती शारेदार के साथ भाग गई, वह मिनविया जिसके कारण आज उसका यशस्वी पति जेल के सींकचों में है, इन्द्र बल्लभ शर्मा की वह ईसरी जिसकी जवानी ही उसका अभिशाप हो गई थी, और ऐसे कितने ही अकिंचन, अगण्य व्यक्तित्व जो काल के गाल में समा जाते हैं और रह जाती है उनकी कहानी। किन्तु इस दर्द का अपनी प्रतिनिधित्व करती है एक सम्पूर्ण साहित्य विधा जिसे हम कहानी कहते हैं। कहानी जिसे हम बार-बार शब्दों के घरौंदे में बांध कर रखना चाहते हैं, किन्तु जिसकी सीमा को मर्यादित नहीं किया जा सकता, कहानी जिसे कहानी दर्शन के कितने ही लेखक तरह, प्रकार आदि के घेरे में परिमापित करने की कोशिश करते हैं, वो उसके मर्म को हृदयंगम नहीं कर सकते, या कहानी जो केवल कही जाने के लिए है। इस वेदनामयी की अभिव्यक्ति प्रसाद की कल्पना ने की जिसके मर जाने पर किसी ने भी उसका नाम लेने की आवश्यकता नहीं समझी। गुलेरी की स्नेह-जन्य होरां ने की। जिसने कभी कुछ कहा था किन्तु बाद में वह भी चुप हो गई। प्रेमचन्द की आनन्दी ने की जो आज भी यही सोचती रहती होगी कि जाने कब आकाश उस पर बरस पड़े और उसकी कही-अनकही बड़प्पन की घोषणा धूल में मिल जाये। शरचन्द्र की दीदियां, जैनेन्द्र की सुनीतायों, भवभूति की माधवियों और शेक्सपियर की आफिलियाओं का अनवरत क्रम जो आता है और चला जाता है, और द्रौपदी के कठिन व्रत और संयम के ऊपर जब भागवत की धूल जम जाती है और उसके एक पृष्ठ पर रखी हुई बांसुरी के रन्ध्र जब भर जाते हैं और उसके स्वर निकलने बन्द हो जाते हैं। संसार की सर्वश्रेष्ठ कहानियों में १०० कहानियों में से कम से कम ६० कहानियों में इसी प्रकार का दर्द मिलेगा, पीड़ा मिलेगी जो सालती नहीं है, मधुर है जो, गुनगुनाती है, जो मर्म रानी है और कहती है, ओ मेरे स्वामियो, मुझे एक कोने में ही सही डाल देना किन्तु निर्वासित मत करना। कोई सोन-चिड़ी जब बड़े लाड़ से अपने नए बच्चे को घोंसले की गरमाई में छोड़ कर रोटी-पानी के लिए निकल जाती है, उस समय उसके छोटे बच्चे के मन में क्षण भर के लिए अपनी मां से बिछुड़ने का दर्द होता है, वही दर्द, हमारी कहानी का शाश्वत दर्द है। स्वामी मानने से पूर्व अभियुक्त की आंखों समस्या पर जब अधिकार का ताला लगा दिया

जाता है और वह जिस हद तक पुरुष से अलग कर छोड़ देती है उस पुरुष का नाम ही कहानी है।

और जब इस कहानी की खोज में मैं निकलता हूँ तब मुझे जगह-जगह जीवन के इस विधुर की स्थिति का सामना करना पड़ता है, जिसे काम और कर कुछ नहीं मिलता और जिनके पास है वे भी [illegible]

[illegible]

सुनाता, गुनगुनाता, हंसीन, और बीतती ऐसी ही कहानियां जो हमसे कही जाती हैं।

कहानी यह नहीं है जिसे पढ़ कर [illegible] [illegible]

[illegible]

[illegible]

आज भी हिन्दी के प्रत्येक पाठक के मन-पटल पर अव्याहत भाव से विद्यमान है और सदा सदा के लिए रहेंगी। यह सही है कि उस समय की परिस्थितियों में अमर होना, आज की अपेक्षा अधिक सरल था क्योंकि उन दिनों निकलने वाले देशी वाली शासन थी जहां ऐरेन्ड भी प्रभावित होना है। किन्तु उन्हीं दिनों या कुछ वर्षों बाद के लेखकों में, जिनमें अजमेर के जगदीशप्रसाद दीपक, बीकानेर के शम्भूदयाल सक्सेना और मुरलीधर व्यास, उदयपुर के जनार्दनराय नागर और गिरजानाथ आचार्य और जोधपुर के जयनारायण व्यास और इसी प्रकार अजमेर के विष्णु अम्बालाल जोशी है, कितने लेखक अमर हुए। ये सभी महानुभाव आज भी हमारे बीच में हैं और इनमें से कुछ आज भी कुछ न कुछ लिख ही लेते हैं। इनमें से नागरजी की करीब तीन दर्जन कहानियां बताई जाती हैं जिनमें से बहुत सी सरस्वती में निकली हैं। शम्भूदयाल सक्सेना के मनाइयां, चित्रपट, बन्दनवार, दुलहिया के फूल, किरन-रेखा आदि कहानी संग्रह और विष्णु अम्बालाल जोशी का भी 'वह' नाम से एक कहानी संग्रह निकला है।

यदि गुलेरी जी के बाद राजस्थान के अंचल में किसी ने हिन्दी को गौरवान्वित किया है तो वह है डा० रांगेय राघव और यह भी कोई विशुद्ध संयोग की बात नहीं कि इनकी मातृभूमि या पितृभूमि (?) भी राजस्थान से बाहर है यद्यपि पुरखों के जन्म स्थान को कई लोग महत्व नहीं देते। इस युवक कथाकार के कितने ही कहानी संग्रह निकल चुके हैं, जिनमें अधूरी मूरत, प्राचीन यूनानी कहानियां, नारी, पंच परमेश्वर, प्रवासी, मृगतृष्णा, मेरी प्रिय कहानियां, प्राचीन ब्राह्मण कहानियां आदि इस बार के नाम तो मुझे भी मालूम हैं। इनकी कहानी कहानी ने कुछ ही वर्ष हुए अखिल भारतीय ख्याति प्राप्त की है। डा० रांगेय राघव मुख्य रूप से एन्थ्रोपोलोजिस्ट है यद्यपि इन्हें प्रगतिवादी अधिक माना जाता है।

प्रकाशित संग्रहों की आगे चर्चा की जाय तो अन्य लेखकों में हमें यादवेन्द्र शर्मा चन्द्र, सुमेरसिंह दइया, वंशीलाल यादव, सरनामसिंह अरुण आदि आदि का नाम लेना होगा। बीकानेर वासी चन्द्र का जिन्हें हम लोग प्रेमपूर्वक चन्दर कहते हैं, नेत्रदान नामक एक कहानी संग्रह निकल ही चुका है, और बरफ की समाधि नामक एक कहानी संग्रह के बारे में राजस्थान के एक प्रमुख मासिक ने जुलाई १९५७ में प्रकाशित हो चुकने की घोषणा की थी किन्तु साढ़े तीन साल बाद दिसम्बर १९६० की सरिता के अनुसार वह अब पुनः अप्रकाशित हो गया है।

नेत्रदान में राजस्थान के लोकगीतों और लोककथाओं पर आधारित कुछ कहानियां हैं अतः कथानक के गीत के रूप में चन्दर को अधिक परिश्रम करने की आवश्यकता नहीं पड़ी है, हां, नेत्रदान कहानी में लेखक इतिहास के एक प्रसंग को प्रकाश में लाया है जिसमें राणा कुम्भा के सरदार राव नरबद ने रखा को अपने नेत्र दिए थे। परिमाण और अथक परिश्रम चन्दर की साहित्य साधना की विशेषता है, जो कम लेखकों में देखने को मिलती है, किन्तु उन पर वास्तविक वातावरण के विवरणों को बिना जाने केवल कल्पना के आधार पर चित्रण करने का जो आरोप लगाया जाता है वह सही है। और यह भी सही है कि परिमाण और गुण बहुत कम लेखकों में एक साथ देखने को मिलते हैं। किन्तु यह भी झूठ नहीं है कि जिस पर चमक है जो रगड़ से पैदा होती ही है, जैसा कि चन्दर की नवीनतम प्रकाशित कहानी 'मनसा मार गई' में देखने को मिलती है। वे दर्द इसकी कथा

दृष्टि से विचार कर सकें तो उनके व हमारे लिए शुभ दिन है।

[illegible] लिए [illegible], जो भारत के वासी हैं, का एक बंगाली [illegible] दो बार्ड नाम से लिखा था जिसमें इनकी [illegible] रचनाएं रही हैं। [illegible] लोकप्रिय सिद्ध है और कला के ईमानदारी की है। [illegible] के लिए [illegible] किन्तु [illegible] के साथ-साथ [illegible] को भी [illegible] देश हमारी एक समस्या रही है।

[illegible] भी कुछ लिखते हैं। [illegible] बंगाली [illegible] १९६० में [illegible] एक [illegible] है। [illegible]

[illegible]

[illegible] की [illegible] करते हैं। [illegible] के नाम पर [illegible] का [illegible], और [illegible] कुमार [illegible] भी एक बंगाली [illegible] है [illegible] के [illegible] भी [illegible] है। [illegible] के [illegible] से [illegible] है तथा [illegible] के [illegible] बंगाली [illegible] के [illegible] को [illegible] है। [illegible] का भी एक बंगाली [illegible] है [illegible] जिसमें [illegible] को [illegible] किया है। [illegible] हमारी ही [illegible] है।

[illegible]

[illegible]

[illegible]

किन्तु पत्र-पत्रिकाओं में भरपूर लिखते हैं ऐसे लेखक सौभाग्यवश राजस्थान में दो दर्जन से अधिक हैं। इनमें मुख्य रूप से उल्लेखनीय हैं जयसिंह एम. राठौड़, कृष्ण बल्लभ शर्मा, जगदीश माथुर कमल, आचार्य सर्वे, गंगाधर शुक्ल आदि। राजस्थान के कहानीकारों में ये सभी कथाकार आगे की पंक्ति में बैठते हैं। जयसिंह एम. राठौड़ अपनी हास्य रस की कहानियों के कारण इतने बदनाम हैं कि इनकी गम्भीर कहानियों को लोग भुला देते हैं। समय है कि इनका संग्रह कहीं से निकले। गंगाधर शुक्ल की कहानियों पर एक ओर रेडियो टैकनिक का प्रभाव है दूसरी ओर ओ हेनरी की आकस्मिक और अप्रत्याशित अन्त वाली पद्धति का जो आजकल इतना प्रभावोत्पादक नहीं रहा है। जगदीश माथुर कमल के अन्दर एक भावुक हृदय है और उस भावुकता का स्वाद पाठकों को चखाने को ये आतुर रहते हैं। पाठक को यह वहम होने लगता है कि इनकी कहानियों का चिर स्पन्दन में इनके व्यक्तिगत जीवन की पुरुषोचित स्नेह संवलता से भिन्न किया जाय। इन्होंने राजस्थान की बात परम्परा को नवीन रूप में प्रस्तुत किया है और इसी शैली में लिखी गई 'घर अभागा घर ढूँढा' इनकी अच्छी रचना मानी जाती है। आचार्य सर्वे मुख्य रूप से एक कामना वाली लघु कथाओं के पंडित हैं और थोड़े ही में अपनी उदात्त और अधिकार हीन आर्य वाणी में प्रेम और ज्ञान की बहुत सी बातें कह जाते हैं। इनकी कई पुस्तकें छप रही हैं किन्तु लघु कथाओं व गद्य का एक संग्रह निकले तो स्वागत है। आप एक उद्बुद्ध लेखक हैं और अपनी कृतियों और अफ़साने की भिन्न-भिन्न कथानकों के द्वारा साहित्य का स्थायी मूल्य बनाना चाहते हैं। इनकी रचनाओं में एक बड़ी उलझन सा खोया सा रहता है जो स्वयं स्थिर न रह कर दूसरों को अपने में स्थिर रखने का आग्रही है। कई स्थलों पर पाठकों में आस्था की कमी के कारण ये आवश्यकता से अधिक खुल जाते हैं जब कि उन्हीं स्थलों पर ये स्वयं बन्द रहना चाहते हैं। आवश्यकता इस बात की है कि ये सहजता के कुछ अधिक निकट आयें। इनकी रचना शैली में गंगाधर शुक्ल की ही तरह कुतूहल को आवश्यकता से अधिक महत्व दिया जाता है। वैसे इनका शिल्प तो स्पृहणीय है।

राजस्थान के अन्य कहानीकारों में पुराने लेवे के देवनारायण आमेरा, विजयदान देथा, राजेन्द्र सिंह सोनड्डी, मोहनराय जिज्ञासु, श्री गोपाल आचार्य, गणपतिचन्द्र पुरोहित आदि हैं। नई पीढ़ी के बहुत से लेखक अपनी छाप तेजी से राजस्थान के साहित्यिक जीवन पर स्थापित करते जा रहे हैं और उन सब की चर्चा करना न सम्भव है न आवश्यक। किन्तु राम चरण महेन्द्र, रामकुमार ओझा, मनोहर वर्मा, प्रकाशचन्द्र पाटनी, रणजीत, कुसमन्दिर तायल, परमेश्वर महमिया परेश, सुधीन्द्र सेमाकन, भगवानदत्त गोस्वामी, सुश्री विमल वैद, जगदीश कनक, डा० राजकुमारी कौर, प्रेम बहादुर सक्सेना, प्रकाश जैन, मनमोहिनी, गंगा प्रसाद माथुर, हिमकर सेठी, रामनिवास शाह, ज्ञान भारिल्ल, मंगल सक्सेना, शान्ति वर्मा, शारदा वार्ष्णेय, राजानन्द, एम. खान, लक्ष्मण 'सौमित्र' आदि अपेक्षाकृत नए कहानीकारों के नाम अवश्य लिये जा सकते हैं।

राजस्थान के कुछ अच्छे कथाकार जैसे यश, परदेसी, कन्हैयालाल ओझा आदि राजस्थान के लिए परदेसी हो गये हैं, अन्यथा इनका कहानि-शिल्प उत्कृष्ट कोटि का है।

एकांकी साहित्य

डा० रामचरण महेन्द्र एम० ए०, पी. एच. डी., गवर्नमेंट कालेज, कोटा

राजस्थान का एकांकी-साहित्य भाषा की दृष्टि से दो भागों में विभक्त किया जा सकता है। १—वह एकांकी साहित्य जो राजस्थान के नाटककारों ने राजस्थानी भाषा में निर्मित किया है। इस वर्ग में सर्वश्री [illegible] व्यास, प्रो० गोविन्द लाल माथुर, [illegible], [illegible], नारायण दत्त श्रीमाली आदि नाटककार गिने जा सकते हैं। इस वर्ग ने राजस्थान प्रान्त की नाना सामाजिक, पारिवारिक, राजनैतिक और आर्थिक समस्याओं को चित्रित किया है। इनके साहित्य में राजस्थान की वर्तमान स्थिति, उसकी नाना समस्याएँ, उनके [illegible] और सुधार की चेतना स्पष्ट हुई है। आधुनिक राजस्थानी जन-जीवन तथा समाज की [illegible] है। राजस्थानी भाषा में लिखे होने के कारण इस वर्ग [illegible] की दृष्टि से [illegible] को [illegible] करता है। [illegible] तथा आधुनिक राजस्थान [illegible] किया है।

[illegible]

राठौर, प्रेमचन्द्र विजयवर्गीय, नरेन्द्र कुमार भार्गव, [illegible] शर्मा, मनोहर प्रभाकर, [illegible], और डा० [illegible] सिंह शर्मा '[illegible]' इत्यादि नाटककार विशेष उल्लेखनीय हैं। कुछ नाटककार आकाशवाणी रेडियो प्रसारण के लिए विशेष रूप से रेडियो एकांकियों की रचना कर रहे हैं और [illegible] है। रेडियो एकांकीकारों में सर्वश्री [illegible], [illegible] माथुर, हमीद [illegible], [illegible] सिंह, [illegible], [illegible] और [illegible] योगदान दे रहे हैं। [illegible] के क्षेत्र में भी [illegible] प्रभाकर, [illegible] और [illegible] [illegible] है। [illegible] [illegible] समय समय पर प्रकाशित [illegible] हैं। इस वर्ग ने राजस्थान प्रान्त [illegible] समग्र भारत की समस्याओं को [illegible] है और देश की समग्र [illegible] देखा है। [illegible] [illegible]

[illegible]

विशेष प्रिय रहे हैं। यहां संक्षेप मे हम उनका उल्लेख मात्र कर रहे हैं।

सामाजिक क्रांति, आलोचना, व्यंग्य के क्षेत्र मे सर्वश्री शम्भूदयाल सक्सेना तथा गोविन्दलाल माथुर को प्रतिनिधि एकांकिकार माना जा सकता है। प्रो० गोविन्दलाल माथुर ने विषय तथा भाषा दोनों ही राजस्थानी चुने हैं। उनके साहित्य में राजस्थान अपने यथार्थ रूप मे बसा हुआ है। राजस्थान के जन-जीवन, मारवाड़ी समाज की समस्याएं रूढ़िवादिता, प्रचलित जीर्ण-शीर्ण परम्पराएं, राजस्थानी ठाकुरों का जीवन, गांव वालों के साथ अनाचारपूर्ण व्यवहार, निरर्थक शौक, दारूखोरी, शोषण इत्यादि नितान्त वास्तविक सत्यता में प्रकट किए हैं। जन जीवन मे आने वाली अड़चनों की सच्ची झांकी ही है। उनके "हरिजन" नाटक में ग्रामीणों की रूढ़िवादिता है, तो "बालविधवा" में नगर निवासियों और जातीय पंचायतों के सड़े-गले न्याय का दमनरूप उपस्थित किया गया है। शैली हास्य और व्यंग्यपूर्ण है। इनके द्वारा हम राजस्थान की दुर्बलताएं और विसमताएं स्पष्ट देख सकते है। श्री शम्भूदयाल सक्सेना ने सबसे अधिक सामाजिक एकांकी लिखे हैं। इनके "विजया और वारुणी" के प्रयाए एकांकियों में समाज के ऐसे शिष्ट पर बोखवाज व्यक्तियों का व्यंग्यात्मक चित्रण है, जो इस सभ्य और समुन्नत समाज में सब की आंखों में धूल डालकर उच्च और मान्य स्थान पाये हुए हैं। पर जो वस्तुतः समाज के लिए अभिशाप है।

धार्मिक और सांस्कृतिक क्षेत्र मे पुराने आदर्शों और भारतीय संस्कृति का चित्रण पर्याप्त रूप मे हो गया है। इस क्षेत्र मे सक्सेना जी ने प्रचुरता मे लिखा है। उनके ५–६ संग्रह भारत की पौराणिक और ऐतिहासिक संस्कृति के विशुद्ध चित्र है।

ऐतिहासिक क्षेत्र मे श्री ओंकारनाथ दिनकर की सेवाएं चिरस्मरणीय रहेगी। उन्होंने इतिहास को जीते जागते रूप मे प्रस्तुत किया है। यत्र तत्र आधुनिक राजनैतिक विचार धाराओं और आज की समस्याओं का भी समावेश किया गया है। ऐतिहासिक तथ्यों की पूर्णरूप से रक्षा करते हुए लेखक ने भारतीय संस्कृति को अपने सब से आकर्षक रूप मे रखा है। प्रो० रामप्रसाद त्रिपाठी ने अपने एकांकियों के विषय राजस्थान के इतिहास के लिए हैं और ऐसे चरित्रों को उभारा है जिन पर अभी तक किसी एकांकीकार ने कुछ नही लिखा है। श्री नारायण दत्त श्रीमाली ने राजस्थानी भाषाओं कालीदास, भ्रमर, अशोक इत्यादि एकांकी लिखे है जो अतीत के उज्ज्वल क्षणों की झंकार है, और साथ ही इस समाज के कार्य कलापों की जीति जागती तसवीरें भी हैं।

राजनैतिक क्षेत्र में कुछ कम कार्य हुआ है। इसमें सक्सेना जी का कार्य उल्लेखनीय है। श्रीमाली जी के दो एकांकी "हांड" और "धरती का देवता" भी उल्लेखनीय है। "धरती के देवता" उन मिनिस्टरों पर छींटा कशी है, जो वोट लेते समय जनता मे बड़े–बड़े वायदे करते है, पर ठोस सेवा कुछ भी नही करते। इस एकांकी में स्वार्थी पत्थर हृदय नेताओं पर व्यंग चित्र खींचकर उनकी दुर्बलताओं की ओर संकेत किया गया है। सक्सेना जी का एकांकी संग्रह "नेहरू के बाद" राजनीति के वाह्याडम्बर का पर्दाफाश करता है।

ग्रामीण विषयों को लेकर कई एकांकीकारों (जैसे श्री देवीचरण, बैजनाथ पंवार) ने अच्छे एकांकी लिखे है। देवीचरण जी का "अप मन्थन", बेकारी का इलाज, "किसान के आंसू", "पचायत मे सहयोग" इत्यादि एकांकी राजस्थान के ग्रामीण जगत् मे हमारा परिचय कराते है। श्रीमन कुमार तथा बैजनाथ पवार ने राजस्थान के ग्रामीणों को वाणी दी है। पंवार जी का "ग्रामीण

आयो तो हुवैलो री

श्री कल्याणसिंह राज

आई तो हुवैलो हिवड़ो
दीन्ही तो हुवैलो मनड़ो
हिवड़ा रे घेड़े घेड़े,
आयो तो हुवैलो री–कोई न कोई।

[illegible] पर [illegible] गाता
[illegible] सूं [illegible]
[illegible] री [illegible] रचाता
[illegible] [illegible] [illegible]

[illegible] तो हुवैलो [illegible]
[illegible] तो हुवैलो [illegible]
[illegible] री [illegible],
[illegible] तो हुवैलो री–कोई न कोई।

[illegible] सूं [illegible] [illegible]
[illegible] री [illegible] [illegible]
[illegible] सूं [illegible] [illegible]
[illegible] रे [illegible] [illegible]

[illegible] तो हुवैलो [illegible]
[illegible] तो हुवैलो [illegible]
क [illegible] रे [illegible].
आयो तो हुवैलो री–कोई न कोई।

[illegible] री [illegible] [illegible]
[illegible] री [illegible] [illegible]
[illegible] री [illegible] [illegible]
[illegible] री [illegible] [illegible]

[illegible] तो हुवैलो [illegible]
[illegible] तो हुवैलो [illegible]
'क [illegible] [illegible] [illegible] [illegible]
आयो तो हुवैलो री–कोई न कोई।

[illegible] सूं [illegible] [illegible]
[illegible] मे [illegible] [illegible]
हिवड़ा री [illegible] [illegible]
[illegible] [illegible] [illegible] [illegible]

[illegible] तो हुवैलो [illegible]
[illegible] तो हुवैलो [illegible]
[illegible] [illegible] [illegible]
[illegible] तो हुवैलो री–कोई न कोई।

[illegible]

गीति साहित्य

श्री राधेश्याम कौशिक 'अधीर'

हिन्दी साहित्य के इतिहास में राजस्थान के गीति काव्य का स्थान सुरक्षित है। आदिकाल में चारण कवियों ने तात्कालीन स्थिति से प्रेरित होकर शृंगार, भक्ति और वीरतापूर्ण तथा मीरां प्रभृति, भक्त कवियों ने भक्ति विषयक गीत लिखकर हिन्दी के गीति भण्डार को समृद्ध किया है। मीरां की उच्चता तो हिन्दी के कतिपय कवियों को ही प्राप्त हो सकी यह असंदिग्ध है।

राजस्थानी (डिंगल) और पिंगल (ब्रजभाषा) दोनों भाषाओं में राजस्थान के कवि काव्य–सृजन करते रहे। इसी संदर्भ में हम इस तथ्य का उल्लेख करना भी असंगत नहीं समझते कि वर्तमान प्रचलित साहित्यिक हिन्दी राजस्थान में अपरिचित न रह कर भी प्रचलित नहीं रही। राजस्थान में सम्पूर्ण गीति काव्य का पर्यवेक्षण तथा मूल्यांकन इस निबन्ध के परिमित पृष्ठों में सम्भव नहीं, केवल खड़ी बोली (वर्तमान प्रचलित साहित्यिक हिन्दी) के गीत ही हमारी चर्चा के विषय है।

गीत संकलन, पत्र पत्रिकायें तथा आकाश वाणी, ऐसे ही स्रोत है जिनसे हमें गीतकारों की रचनायें उपलब्ध हो सकीं। इन्हीं के आधार पर उपरोक्त स्रोतों को दृष्टिगत रखते हुए पर्यवेक्षण के साथ ही विवेचन का प्रयास किया है।

अत्र–तत्र बिखरी हुई सामग्री का चयन शोध की अपेक्षा रखता है। फिर भी हमने भरसक चेष्टा की है कि उल्लेख्य कवि विस्मृत नहीं किये जायें। प्रत्येक कवि की सम्पूर्ण कृतियां उपलब्ध न होने के कारण उनका सर्वांगीण विश्लेषण प्रस्तुत करना सामर्थ्य के बाहर है। तथाकथित पर्यवेक्षण ही अपेक्षित है इससे अधिक का दावा हम करते भी नहीं।

कालक्रम की दृष्टि से प्रताप नारायण पुरोहित राजस्थान की गीति परम्परा में प्रथम स्थान के अधिकारी है। द्विवेदी कालीन इतिवृत्तात्मक शैली में लिखे आपके गीत ऐतिहासिक दृष्टि से महत्वपूर्ण हैं। 'रसमयी' नामक संग्रह के अतिरिक्त आपकी अन्य रचनायें भी प्रकाशित हुई हैं। व्यक्तिगत अनुभूतियों की अभिव्यक्ति में अध्यात्म का गहरा रंग है। कहीं–कहीं राष्ट्रीयता और समाज–सुधार का स्वर भी लक्षित होता है।

जैसे–जैसे हिन्दी मान्य काव्य भाषा के रूप में प्रचलित होती गई राजस्थानी के कवि भी हिन्दी गीतकारों की पंक्ति में आ बैठे। यह आकस्मिक प्रभाव के कारण नहीं अपितु युग चेतना से प्रेरित होकर ही सम्भव हो सका। कन्हैयालाल सेठिया और मेघराज 'मुकुल' इनमें अग्रणीय है। स्वर्गीय डा० सुधीन्द्र, स्वर्गीय प्रो० चन्द्रदेव, सुमनेश जोशी तथा गणेशीलाल 'उन्माद' राजस्थान के पहले पहले के हिन्दी गीतकार हैं। सेठिया की परिष्कृत भाषा, प्रवाह और प्रभाव राजस्थान के कतिपय कवियों को प्राप्य है। अतिशयोक्ति नहीं वस्तुतः शिल्प और वर्ण्यविषय दोनों दृष्टिकोणों से सेठिया के समानान्तर राजस्थान में अन्य नहीं।

स्वर्गीय डा० सुधीन्द्र के गीत परिमार्जित भाषा

...नों के राष्ट्रीय आन्दोलन का संदेश संजोये हुए हैं। ...साम्राज्यवाद और तानाशाही विचार के पहलू नहीं ...कर सके। [illegible] और [illegible] 'ज्वार' राष्ट्रीय आन्दोलन के दौरान के माध्यम से [illegible] ...गये हैं। [illegible] भाव के भी इस जन आन्दोलन का प्रतिनिधित्व करते हैं। [illegible] ...[illegible] के [illegible] कवि हैं जिन्होंने ...गीतों के माध्यम से [illegible] को [illegible] बनाया। [illegible] और [illegible] सभी दोनों के ...[illegible] के [illegible] गीतों का काम करते ...रहे। [illegible] कवि [illegible] ...[illegible] रचनाएँ हैं।

[illegible] 'कुरुक्षेत्र' 'उर्वशी', के प्रकाशन के [illegible] हिन्दी [illegible] के लिये आ गये हैं। [illegible]

[illegible]

...रही है। [illegible] के रूप में 'कुरुक्षेत्र' [illegible] है। 'लोगों का प्यार' जैसी रचनाओं में सामाजिक विषमताओं के प्रति [illegible] दृष्टिकोण का भी प्रसार रही।

[illegible] 'मैं [illegible] का कवि हूँ', [illegible] और [illegible]' जैसे गीतों के रचेता हैं। [illegible] का उद्घोष उनकी विशेषता है। [illegible] [illegible] के लिए [illegible] किये जायेंगे। उनकी [illegible] के [illegible] और भी [illegible] हैं।

[illegible] [illegible], डा० [illegible] [illegible], डा० [illegible] [illegible] और [illegible] के और भी [illegible]

[illegible]

बाह्य लिये रहस्योद्घाटन करते हैं। आध्यात्म की ओर मुके हैं।

हिन्दी गीतिकाव्य के प्रयास राजस्थान के गीतकारों को भी प्रभावित करते रहे हैं। छायावादी कवियों के पश्चात् बच्चन की महत्ता, मंच की सफलता तथा १६३६ के प्रगतिवादी अभियान ने राजस्थान के कवियो को भी अपने रंग मे रंग ही लिया। यत्र-तत्र इनका प्रभाव लक्षित होता है।

नई पीढ़ी मे ज्ञान भारिल्ल, रामनाथ 'कमलाकर', मनोहर प्रभाकर, जगदीश चतुर्वेदी, कन्हैयालाल भारद्वाज 'राकेश', तारा प्रकाश जोशी, प्रकाश आतुर, जयसिंह 'नीरज' और मूलचन्द पाठक हैं। ज्ञान भारिल्ल के दो गीत संग्रह 'ज्वार' और 'आकाश कुसुम' प्रकाशित हुए हैं। 'आकाश कुसुम' के गीत व्यक्तिपरक हैं। 'जिंदगी से प्यार', शृंगार का शृंगार' आदि आशा-निराशा के गीतों में 'साध्य तारा' जैसे नैसर्गिक सौन्दर्य के स्वर भी मुखरित हैं। वैसे 'मधुशाला में' के गीत सुन्दर हैं 'पी कल हो कमर' जैसे। किन्तु कथ्य की पुनरावृत्ति खटकती है। लगता है बच्चन की 'मधुशाला' इनकी प्रेरणा रही। फलतः यह तो कहा ही जा सकता है कि ज्ञान के गीत गीत (Lyrio) हैं अपने अर्थ में। उनमें मंजी हुई भाषा, बोधगम्यता, गेयात्मकता और प्रवाह है। कमलाकर के गीत शिल्प और कथ्य दोनों दृष्टिकोणों मे प्रशंसनीय हैं। परन्तु कहीं-कहीं सूफियाना अन्दाज खटकने लगता है। भाषा भी कभी उर्दू की ओर मुकी हुई और कभी संस्कृत बहुला। राकेश और जोशी ने भी अच्छे गीत लिखे हैं। जोशी के गीतों मे मौलिकता के दर्शन स्पष्ट दिखाई देता है। मूलचन्द पाठक संस्कृत काव्य मे उपमा चुनने मे माहिर हैं।

विजय निर्बोध अपने हास्यगीतों के कारण स्मरणीय हैं। वैसे वजन तो है नहीं गीतो मे। प्रथम कवि और फिर पत्रकार कुनिगजी यथार्थ की ओर मुके हैं 'वासना से दूर जाऊँ तो जिऊं कैसे ?" इनके गीत राजस्थान में ही नहीं भारत वर्ष मे गूंजे हैं। जीवन के प्रति इनका एक विशिष्ट दृष्टिकोण है। अपने मान और मूल्य हैं। "सुदामा चरित" तथा अन्य मुक्तक रचनाओं के द्वारा इन्होंने अपने आप को सिद्धहस्त "पैरोडी कार" प्रमाणित किया है।

डा० रांगेय राघव सर्वतोमुखी प्रतिभा के धनी हैं। उनके गीतों के पर्यवेक्षण और मूल्यांकन के लिए तो पृथक् निबन्ध अपेक्षित हैं। डा० रामानन्द तिवारी ने प्रबन्ध-प्रणेता होते हुए भी गीत लिखे हैं जिन्हें सामान्यतः उच्चकोटि का कहा जा सकता है, किन्तु गेयता और प्रभावान्विति की कमी अखरती है। श्री फूलचन्द पाण्डेय छायावादी शिल्प विधान से प्रभावित होकर ही अपने गीतों मे नयापन दे सके हैं। व्यक्तिगत अनुभूतियां के स्वर उभर कर बोलते हैं। भाषा का निखार प्रशंसनीय है।

डा० हरीश, परमेश्वर द्विरेफ, चिरंजीव जोशी 'सरोज' और हरिराम आचार्य भी हिन्दी में गीत लिखते हैं। हरीश जी के गीत सुन्दर हैं परन्तु नईपीढ़ी के स्वर दब गये हैं। द्विरेफ के गीत 'किताबी' हैं, 'किताबी' से यही तात्पर्य है कि जीवन की अनुभूतियो से प्रेरित न होकर वह पुस्तकों से प्रेरित होकर लिखे गये हैं। अनुभूतियां के प्रति ईमानदारी का तो प्रश्न ही नहीं उठता। प्रयास मात्र है इनके गीत। आचार्य के गीत मधुर हैं, किन्तु स्पष्टता में और तीक्ष्ण नहीं, पुरानी पीढ़ी की बात दुहराई जा रही है, ऐसा कुछ लगता है।

इधर नई पीढ़ी के शायरों में [illegible] 'फ़िराक़' [illegible], [illegible] साहब, [illegible] 'सिद्दीक़ी', [illegible] कुमार 'सुकुमार' और 'फ़ैज़' आते हैं। [illegible] के शेरों के लिए ऐसे [illegible] हैं। [illegible] 'मैं तो आने वाला [illegible]' [illegible] 'मैं [illegible]' और [illegible] [illegible] 'ऐ [illegible] वालो [illegible]' जैसी [illegible] है। [illegible] के [illegible] भी [illegible] है।

'[illegible]' के शेरों में [illegible] और [illegible] का [illegible] है। [illegible]

[illegible]

[illegible]

[illegible] 'आसी' [illegible] और 'ये [illegible]' और [illegible] हैं। [illegible] 'निरंजन' के नाम लिखा जाता है। और के दौर [illegible] भी [illegible] नहीं जा सके। [illegible] 'भारती,' [illegible] और [illegible] भी है। [illegible] भी लिया है।

[illegible] (अब [illegible] [illegible]) और [illegible] हैं।

[illegible]—[illegible]

[illegible]

[illegible]

[illegible]

समीक्षा-साहित्य

श्री नवलकिशोर शर्मा, हिन्दी व्याख्याता, महाराजा संस्कृत कालेज, जयपुर

राजस्थान की मरुभूमि से मानवीय शौर्य और त्याग-प्रेम से नि:सृत गंगा-जमुनी धाराओं के प्रवाह ने भारत की सांस्कृतिक निधि को समृद्ध करने में अपूर्व योग दिया है। भारतीय साहित्य को इसका अनुदान अप्रतिम है। आधुनिक-साहित्य के विकास में उसका योगदान कम रहा है तो इसका कारण उसकी अक्षमता कदापि नहीं, कारण है तो इतिहास का अभिशाप और सुविधाओं का अभाव है। किन्तु फिर भी अपनी महान् परम्परा की रक्षा इसने की है और आधुनिक साहित्य को भी कतिपय क्षेत्रों में महत्वपूर्ण देन दी है।

हिन्दी-समीक्षा में राजस्थान का योगदान आदिकाल से ही प्रारम्भ हो जाता है। रीति-काल के महाराजा जसवन्तसिंह से साहित्य के विद्यार्थी भली-भांति परिचित हैं। आधुनिक हिन्दी-समीक्षा का इतिहास कुछ दशाब्दियों तक ही सीमित है, किन्तु इस बीच भी राजस्थान में ऐसे समीक्षक हुए हैं जिनका व्यक्तित्व हिमालय-सा ऊँचा और हिन्द-सागर-सा गहरा भले ही न हो, पर जिन्होंने अपनी साधना से नयी दिशाओं का उद्घाटन या संकेत अवश्य किया है। उनके प्रयास महान् चाहे न हों, पर साहित्य की प्रगति के लिए महत्वपूर्ण अवश्य सिद्ध हुए हैं। प्रस्तुत लेख में प्रकाशित उपलब्ध सामग्री के आधार पर राजस्थान के समीक्षा कार्य की संक्षिप्त रूपरेखा प्रस्तुत करने का प्रयास है, लेखक यदि प्रमाद या अपरिचय से किसी लब्ध प्रतिष्ठ विद्वान् अथवा उदीयमान प्रतिभा के महत्व-पूर्ण या साधारण भी कार्य का उल्लेख करना भूल जाए तो क्षन्तव्य है, क्योंकि वह सदा अपने को सुधारने को तत्पर और नयी जानकारी को उत्सुक है। लेख में वस्तुपरक निरपेक्ष दृष्टिकोण को अपनाया गया है, अत: यह केवल सूचनात्मक है, समीक्षात्मक नहीं। मैंने अपने दृष्टिकोण से किसी कृति का मूल्यांकन नहीं किया है।

ऐतिहासिक गवेषणा:—डा० हजारी प्रसाद द्विवेदी के अनुसार ऐतिहासिक कारणों से आदि-काल का हिन्दी-साहित्य मध्य देश में सुरक्षित न रह सका। राजस्थान और गुजरात के अपेक्षाकृत निरापद होने से यहीं हमें कुछ अधिक प्रामाणिक कृतियाँ मिलती हैं। इस प्रसंग में जैन-भण्डारों में संचित सामग्री उल्लेखनीय है। इसमें दो मत नहीं हो सकते कि इस कार्य को यहाँ के विद्वान जितने अधिकारपूर्ण ढंग से कर सकते हैं, अन्य प्रान्तों के नहीं। यहाँ के पण्डितों ने अपने इस गम्भीर उत्तरदायित्व का निर्वाह प्रयत्न सफलता से किया है। इन विद्वानों ने यहाँ उपलब्ध सामग्री की छानबीन कर हिन्दी-साहित्य के अन्धकारपूर्ण प्रारम्भ पर बहुत प्रकाश डाला है, जिसका महत्व भाषा-विज्ञान, इतिहास, काव्य-रूपों के विकास एवं परम्परा सभी दृष्टियों से है। इनकी खोजों के कारण अब यह मान लिया गया है कि हिन्दी का इतिहास राजस्थानी भाषा के उद्भव और विकास से शुरू होता है।

स्वर्गीय गौरीशंकर हीराचन्द ओझा,

स्वर्गीय पन्नालाल जी, स्वर्गीय स्वामनदान जी, डा० दशरथ शर्मा (आज कल दिल्ली विश्वविद्यालय में), मंगाराम मीना, ठाकुर रामसिंह, ईश्वरदान आशिया, हरिराम मोतीसिंह, मुनि जिनविजय, अगरचन्द नाहटा, स्वामी नरोत्तम दास, डा० मोतीलाल मेनारिया, प० झाबरमल शर्मा, डा० कन्हैयालाल सहल, श्री पीनगुनदास आदि विद्वान् के कार्य से हिन्दी संसार भली-भांति परिचित है।

'राजस्थानी भाषा और साहित्य'—आज [illegible]

[illegible]

और पुराने ग्रन्थों का काम भी [illegible] उजार है। स्वामी नरोत्तम दास ने राजस्था[illegible] के प्राचीन-साहित्य के उद्धार के सम्बन्ध में [illegible] कार्य किया है। पुरोहित रामो की भाषा [illegible] सम्बन्ध में आज उनका मत ही मान्य [illegible] है (यह [illegible] रखता है)। [illegible] ने उनके निरीक्षण में कार्य किया है और [illegible] कर रहे हैं। [illegible]

[illegible]

निखरा हुआ है।"[3] आज कल ये राजस्थानी लोकोक्तियों के मूल अभिप्रायों पर कार्य कर रहे हैं,[4] इस सम्बन्ध में इनके अनेक लेख 'राष्ट्र–भारती' आदि पत्रिकाओं में प्रकाशित हो चुके हैं। डा० मोतीलाल गुप्त ने 'मत्स्य की हिन्दी-सेवा' शीर्षक में राजस्थान के पूर्वी-अंचल की साहित्य-साधना पर अच्छा प्रकाश डाला है। इस ग्रन्थ के प्रकाशन में अनेक अज्ञात कवियों और काव्यों का पता चलेगा। इस प्रकार के अध्ययन एक बहुत बड़े खतरे को भी हमारे सामने रखते हैं, जिसकी ओर प्रायः हिन्दी विद्वानों का ध्यान नहीं जाता और जिसकी डा० नगेन्द्र ने एक बार चर्चा भी की थी। इस साहित्यिक स्तर की खोज–बीन के बिना भी प्राचीन कृतियों के पीछे दीवाने हैं, साम्प्रदायिक ग्रन्थों के पीछे भी बावले हैं, जबकि आज की महत्वपूर्ण कृतियों को भी असाहित्यिक कहने से नहीं चूकते। राजस्थानी विद्वानों को झूठी यशलिप्सा त्याग कर वास्तविक महत्व के पुराने ग्रन्थों का ही अध्ययन करना चाहिए, जिनको साहित्य के इतिहास में रखा जा सके।

राजस्थान में भाषा–वैज्ञानिक अध्ययन बहुत कम हुआ है। डा० सरनाम सिंह शर्मा 'अरुण' राजस्थानी भाषा पर एक ग्रंथ तैयार कर रहे हैं श्री सीताराम लालस ने राजस्थानी भाषा पर कार्य किया है।

संस्कृति और परम्परा के जीवन्त परिज्ञान के लिए लोक साहित्य का अध्ययन अत्यन्त अनिवार्य है क्योंकि "कलम की लिखावट शब्दों के चिराग में इसाई को खोजती फिरती है, वाणी का उच्चारण अपने आकर्षण में यथार्थ को स्वयं खींच लेता है।"[5] नरोत्तम स्वामी और रानी लक्ष्मीकुमारी चूंडावत की लोक गीतों पर रचनाएँ उपलब्ध हैं। लोकाख्यानों पर डा० सहल की कृतियाँ हैं। पर इस दिशा में महत्वपूर्ण योगदान जोधपुर की 'परम्परा' और उदयपुर के शोध–संस्थान के प्रकाशनों का है। पर हर समय लोक–साहित्य की रट भी कम खतरनाक नहीं है, उसमें अपने वर्तमान के प्रति हम उदास बनते हैं।

प्राचीन हिन्दी साहित्य :—उदयपुर शोध-संस्थान ने कुछ समय पहले पृथ्वीराज रासो पर भिन्न-भिन्न समय पर भिन्न-भिन्न विद्वानों द्वारा लिखे हुए लेखों का संकलन निकाला है। जिसमें रासो पर अब तक हुए कार्य की विकासमान गति पर ऐतिहासिक प्रकाश पड़ता है। डा० रांगेय राघव ने गुरु गोरखनाथ पर अधिनिबन्ध लिखा है। यद्यपि यह ग्रंथ अभी प्रकाश में नहीं आया है[6], किन्तु लेखक के अन्य ग्रंथों में गोरखनाथ की चर्चा को पढ़कर इसके महत्वपूर्ण होने का अनुमान होता है और डा० रांगेय राघव जैसी समर्थ प्रतिभा से इसके विपरीत सम्भावना हो भी नहीं सकती। डा० सरनाम-सिंह शर्मा अरुण के 'संस्कृत साहित्य का हिन्दी पर प्रभाव' विषय को लेकर लिखे गए अधिनिबन्ध के महत्व का उल्लेख एक स्थान पर डा० धीरेन्द्र वर्मा ने किया था, यह ग्रंथ प्रकाशित भी हुआ था, किन्तु आजकल दुष्प्राप्य है। 'विशिष्टाद्वैतिक भक्ति दर्शन' नाम के डा० अरुण के ग्रंथ के एक अध्याय में हिन्दी के भक्ति–साहित्य का विशिष्टाद्वैतिक भक्ति की पृष्ठभूमि में सुन्दर विवेचन है।

१. २. ३. डा० देवराज उपाध्याय का अजमेर सिम्पोजियम में पठित लेख–'आधुनिक राजस्थानी समालोचना।' ४ डा० सहल के लेखक के नाम एक पत्र के अनुसार।
५. कोमल कोठारी के एक लेख से उद्धृत। ६. हिन्दी के स्वीकृत शोध-प्रबंध के अनुसार।

'कबीर-ग्रन्थ विवेचन' जिसे पहले ही प्रकाशित हुआ है, जिसकी विद्वानों ने भूरि-भूरि प्रशंसा की है। कबीर साहित्य के विविध पक्षों पर विविध विद्वानों ने गम्भीर और मौलिक कार्य किया है, पर एक साथ कबीर के सिद्धान्त, साधना, योग, भक्ति और काव्य पर विचार करने वाली यह पहली महत्त्वपूर्ण कृति है। डा० [illegible] कबीर की मानसिक चेतना को ही प्रमुख मानते हैं और उनकी भक्ति को उसी से आविर्भूत स्वीकारते हैं। डा० [illegible] ने कबीर साहित्य के [illegible] पक्ष पर विस्तार से विचार किया है। उनकी स्थापनाओं पर हम विवाद कर सकते हैं [illegible] है, पर [illegible] है कि "विद्वान लेखक ने इस ग्रंथ को लिखने में काफी श्रम किया है और उसमें बड़ी सफलता प्राप्त हुई है। आशा है कि हिन्दी [illegible] इस ग्रन्थ का स्वागत होगा और जिज्ञासुओं तथा [illegible] इस ग्रन्थ का [illegible] डा० [illegible] [illegible]

[illegible]

की, डा० गुप्त ने इसे संपादन से ओत-प्रोत भी किया। किन्तु इस क्षेत्र का [illegible] माना; क्योंकि इससे आगे के अध्ययन के लिए आधार प्रस्तुत किया। पूर्व-भारतेन्दु युग, भारतेन्दु युग और उसकी पृष्ठभूमि पर इसमें बहुत महत्त्वपूर्ण सामग्री प्रस्तुत की है। डा० गुप्त की निश्चित मान्यता है कि पूर्व भारतेन्दु नाटक [illegible] ही हैं, वास्तविक नाटकों का आरम्भ भारतेन्दु से ही होता है। डा० गुप्त की पुस्तक [illegible] पूर्व-भारतेन्दु युग है। डा० गुप्त के [illegible] भारतेन्दु [illegible] की [illegible] भी [illegible] है।

डा० रामचरण महेन्द्र का [illegible] के उद्भव और विकास पर [illegible] प्रकाशित हो चुका है। [illegible] है कि इसमें [illegible] के [illegible] का भी [illegible] किया गया है। [illegible] है।

कथा-साहित्य : [illegible]

[illegible]

चलने वाली परम्परा से भिन्न जीवित और सक्रिय प्रतिभा द्वारा प्रणीत ग्रन्थों पर मनोवैज्ञानिक प्रभाव की सूक्ष्म जाँच करने वाली एक विशिष्ट थीसिस थी और इसने एक नई अध्ययन दिशा का प्रवर्तन किया। डा० लक्ष्मीसागर वार्ष्णेय के शब्दों में 'हिन्दी आलोचकों तथा विद्वानों ने हिन्दी उपन्यास में अभिव्यक्त बाह्य जीवन की मीमांसा तो की थी, किन्तु अन्तर्मन का स्वरूप दर्शन अभी तक अधूरा ही पड़ा था। प्रस्तुत प्रबंध में डा० देवराज उपाध्याय ने इसी जगत् में प्रवेश करने का सफल एवं साधना-पूर्ण प्रयास किया है।'' 'कथा के तत्व' भी एक प्रकार से इसी ग्रन्थ की पूरक पुस्तक है, जिसमें यूरोपीय उपन्यासों के नूतन प्रयोगों, चेतनाप्रवाही धारा, मनोवैज्ञानिक उपन्यासों की विशेषताओं और हिन्दी के नवीनतम प्रसिद्ध उपन्यासों का अध्ययन किया गया है। 'विचारों के प्रवाह' में भी कुछ अध्ययन कथा-साहित्य से सम्बन्धित है। 'साहित्य और साहित्यकार' उनकी नवीनतम कृति है, जिस पर आगे चर्चा होगी। ऐतिहासिक उपन्यास पर इसमें एक बहुत महत्वपूर्ण अध्याय है, जिसमें इतिहास और उपन्यास की परस्पर-निर्भरता का अध्ययन सर्वथा नए धरातलों पर किया गया है। हेनरी जेम्स की भूमिकाओं का 'उपन्यास-कला' के नाम से उन्होंने अनुवाद किया है, जो प्रेस में भेजे जाने को तैयार है। डा० उपाध्याय के आलोचक इनके विरुद्ध सबसे बड़ा अभियोग यह लगाते हैं कि "इन्होंने जीवन को जो मनुष्य के सभी प्रयत्नों और कार्यों का अन्तिम साध्य है, अस्वीकृत कर मनो-विज्ञान को ही साध्य मान लिया है।' दर असल डा० उपाध्याय ने आधुनिक मनोविज्ञान के साहित्य का सम्बन्ध-सम्बन्धी विश्लेषण का कार्य आगे आने वाले मनीषियों पर छोड़ दिया है, उनका प्रयत्न यह रहा है कि वे यह बताएँ कि किस सीमा तक मनोवैज्ञानिक प्रवृत्तियों से आधुनिक कथा-साहित्य आक्रान्त है, इससे अधिक का दावा वे नहीं करते। वे तो पगडण्डी बनाने वाले हैं, बाकी काम आने वाले लोगों के लिए है। फिर भी यह निश्चित है कि मनोवैज्ञानिक अतिवाद उन पर हावी है।

श्री भालचन्द्र गोस्वामी के 'कहानी-दर्शन' को राजस्थान साहित्य अकादमी ने एक हजार रुपयों से पुरस्कृत किया है। कहानी के शास्त्रीय अध्ययन और वेदों में उसके उद्भव और विकास की कथा पर लेखक ने बहुत परिश्रम किया है। ग्रन्थ-लेखक वास्तव में बहुत अध्ययनशील हैं, पर कहानी की नई दिशाओं का बहुत कम परिचय इस कृति से मिलता है। हाँ, तरुण-पण्डित से भविष्य में आशाएँ हैं। काफी पहले श्री मोहनलाल जिज्ञासु की हिन्दी-कहानी और कहानीकारों पर एक परिचयात्मक पुस्तक निकली थी।

सिद्धान्त और समीक्षा—हिन्दी आलोचना की विविध प्रवृत्तियों के प्रतिनिधि समीक्षक हमारे यहाँ बहुत कम हैं। यह बात एक तरह से अच्छी भी है और बुरी भी। अच्छी इसलिए कि यह हमारे पक्षधर नहीं होने का प्रमाण है और बुरी इसलिए कि यह अध्ययन की उन दिशाओं में हमारी अक्षमता का प्रतीक भी हो सकती है। पर यहाँ अक्षमता की बात नहीं है, ऐसे समीक्षक कम हैं जो हैं वे बहुत समर्थ और प्रभावशाली हैं। प्रगति-शील आलोचना के हृष्ट-पुष्ट डा. रांगेय राघव हमारे बीच में हैं। इस प्रथम श्रेणी के रचना-साहित्यकार की कारयित्री प्रतिभा भी प्रथम श्रेणी की है, जिसका निदर्शन 'प्रगतिशील साहित्य के मानदण्ड', 'समीक्षा और आदर्श', 'यथार्थ और युग', 'काव्य-कला और शास्त्र' आदि कृतियाँ करती हैं। प्रगतिशीलता ही डा० रांगेय के अनुसार साहित्य की श्रेष्ठता की कसौटी है, "प्रगतिशील

साहित्य ही मनुष्य की [illegible] की गौरवशाली गाथा है, जिसमें जीवन का सत्य ही उसके समग्र सौन्दर्य का आधार होता है।" डा० रांगेय राघव साहित्य की स्वतंत्रता के हामी हैं, साहित्य पर पार्टी का अंकुश उन्हें मंजूर नहीं। [illegible] समाज-शास्त्रीयता की उन्होंने [illegible] निन्दा की है। पर तुलसीदास पर उनका दृष्टिकोण भी कम संकीर्ण नहीं है। वे तुलसीदास को [illegible] देते हैं कि तुलसी ने [illegible] का विरोध किया, [illegible] वह [illegible] थे और [illegible] शास्त्रों की पुनर्स्थापना की कामना करते थे। वे [illegible] [illegible]

विचारक हैं, पर मार्क्सवादी नहीं, मार्क्स और एंगेल्स के वचन उनके लिए [illegible] और [illegible] नहीं है। श्री इलाचन्द्र जोशी के शब्दों में मनो-वैज्ञानिक आलोचना के [illegible] डा० नगेन्द्र हैं।[1] डा० नगेन्द्र के कार्य का [illegible] साहित्य में [illegible] हो चुका है। अभी [illegible] 'साहित्य और [illegible]' का प्रकाशन हुआ है। मनोविज्ञान का [illegible] हुआ है। इस दृष्टि से डा० नगेन्द्र ने साहित्य के [illegible] से [illegible] है, किन्तु [illegible] नहीं है। वे मानते हैं कि साहित्य के [illegible] [illegible]

[illegible]

[illegible]

तं, सुन्दरम् पर शोधप्रबन्ध अभी प्रकाशित नहीं हुआ है, यद्यपि उसके बहुत से अंश प्रतिष्ठित पत्र-पत्रिकाओं मे निकल चुके हैं। डा० तिवारी साहित्य की आस्वाद्यता का मूल 'ममात्वभाव' को मानते हैं। ग्रंथ के प्रकाशनान्तर ही उनकी स्थापना से पूरी तरह परिचित होना सम्भव है। डा० तिवारी बहुत विद्वान हैं, पर उनकी भाषा बहुत जटिल, दुर्बोध और अक्षम है। डा० नन्दलाल सहल का 'विवेचन' दुष्प्राप्य है। 'आलोचना के पथ पर' उल्लेख्य कृति है। डा० रत्नासिंह वरुणा की आगरा से 'सिद्धान्त और समीक्षा' नाम से महत्वपूर्ण पुस्तक अभी-अभी प्रकाशित हुई है। श्री नन्द चतुर्वेदी एक अध्ययनशील साहित्यकार हैं, उनकी पुस्तकें भी मुद्रणान्तर्गत हैं। विभिन्न सेमिनारो और उपनिषदो मे उनके विचारशाली व्यक्तित्व का परिचय मिला है, कृतित्व का आना अभी बाकी है।

जोधपुर मे दो नयी पीढ़ी के प्रतिभाशील और मनस्वी समीक्षकों की कृतियो का प्रकाशन हुआ है। श्री विजयदान देथा की 'साहित्य और समाज' श्री कोमल कोठारी की साहित्य संगीत और कला' का सर्वत्र आदर हुआ है। श्री देथा का साहित्य-सेवा का आदर्श बहुत ऊंचा है, वे अपने समाज को पेट की खुराक किसी भी कीमत पर नहीं बनाना चाहते। उन पर कॉडवेल का प्रभाव है, पर अपने स्वतंत्र विचार भी है। श्री कोमल कोठारी ने हजारीप्रसादजी पर लिखा है। हिन्दी की आज की प्रशस्तिपरक या अनुसरणशील पद्धति से मुक्त होकर। पर उनकी निर्णयात्मक उक्तियां न केवल भ्रान्त हैं, अपितु दुराग्रहपूर्ण भी हैं। 'बाणभट्ट की आत्मकथा' का भेद वहीं गई एक बात मुझे बड़ी पसन्द आई कि हम यह तो गर्व से कहते हैं कि हमारे उपन्यासकारों पर प्रमुक-प्रमुक विदेशी कलाकारों का प्रभाव है पर यह चिन्ता नही करते कि कालिदास, दण्डी, बाण आदि का भी कुछ प्रभाव हो। दोनो लेखकों ने लोक-गीतो का सच्चा अध्ययन किया है। पर इनका राजस्थानी प्रेम साम्प्रदायिकता की सीमा तक पहुँचा हुआ है। रावत सारस्वत का भी इस सम्बन्ध मे नाम लिया जा सकता है।

हिन्दी के शोध-प्रबंधों का स्तर आज इस कदर गिर गया है कि पी० एच० डी० मे विद्वत्ता और अध्ययन का दूर का भी लगाव नही रह गया है। इनमे मिलता है केवल संकलन, वर्गीकरण और उद्धरण या वेदो से लेकर आज तक किसी विषय पर जो लिखा गया उसकी परिगणना। तो भी, इस कारण सभी अधिनिबंधों के प्रति उपेक्षा ठीक नहीं है।

राजस्थान के शोधकर्ताओं ने यहां या बाहर के विश्वविद्यालयों से अनेक विषयों पर उपाधि ली है, सबका उल्लेख यहा सम्भव नहीं है, कुछ नाम गिनाना ही पर्याप्त होगा, डा० राजेन्द्र जोशी, डा० जगदीश जोशी, डा० प्रभाकर नागर, डा० यतीन्द्र, डा० शिवपुरी, डा० माधुरी, डा० हरीशंकर शर्मा हरीश, डा० प्रभुनारायण सहृदय, डा० गायत्री, डा० अमर ...... और सूची लम्बी है। अध्यापकीय आलोचना ग्रंथों की संख्या बहुत है। इस दिशा मे रामनाथ सारस्वत का नाम उल्लेख्य है। प्राध्यापकों के अतिरिक्त श्री फूलचन्द पाण्डे की भी परिचयात्मक समीक्षा-कृतियां हैं। इस प्रकार की आलोचना एक सीमा से ज्यादा होने पर स्वतंत्र और स्वस्थ-समीक्षा की प्रगति के लिए घातक बन जाती है। छायोत्तरोत्तरी आलोचना की अधिकता हमारी चिन्तन अक्षमता का भी परिचायक है। साधारण या महत्वपूर्ण

[illegible] में [illegible] उनमें [illegible], [illegible], [illegible], [illegible], [illegible], [illegible] आदि के [illegible] । [illegible] [illegible] आदि के [illegible] । [illegible] [illegible] ।

[illegible] [illegible]

[illegible]

[illegible] है ।

[illegible] — [illegible] [illegible] है ।

[illegible]

[illegible]

है। लेखकों से चन्दा लेकर सहकारी आधार पर पत्र निकालने की प्रथा इधर हिन्दी में खूब पनप रही है, पर उसमें गुटबन्दी, साम्प्रदायिकता और सस्ती मनोवृत्ति तथा कुछ बड़े नामों की वजह से बड़ा बेकार माल चलता है। यदि यह कार्य ईमानदारी से हो तो बहुत स्तुत्य है, पर इस व्यावसायिक युग में धनपतियों के पत्रों की प्रतिस्पर्धा में इसका अधिक समय तक चलना संभव नहीं। 'लहर' उल्लेखनीय पत्रिका है, पर राजस्थानी प्रतिभा के विकास की ओर ध्यान देना उसका लक्ष्य नहीं है। राजस्थानी प्रतिभा का अन्वेषण तभी संभव है जबकि ऐसे पत्रों का प्रकाशन हो, जिनमें प्रादेशिकता और अन्तर्देशीयता का सामंजस्य किया जाए। पत्र प्रादेशिक इस अर्थ में हो कि अपने प्रदेश के साहित्यकारों को ही प्रमुख स्थान दें, और अन्तर्देशीय इस अर्थ में कि उसमें उस भाषा में देशान्तरों का श्रेष्ठ साहित्य भी स्थान पावे। इसी से गति और संयम, चेतना और संस्कार, प्रगति और संस्कृति का वह समन्वय हो सकता है जो सम्पूर्ण जीवन है।"[1] श्री मंगल सक्सेना के प्रयत्नों से अजमेर से निकला 'न्याय' (दीपावली अंक, १९६०) इस दिशा में पहला सराहनीय प्रयास है।

भिन्न भिन्न वर्गों में रखकर राजस्थान के समीक्षा साहित्य का जो अध्ययन किया गया है, वह अधिक से अधिक सूचना देने की सुविधा की दृष्टि से। ऐसा सम्भव नहीं कि कथा साहित्य के अध्येता की काव्य में रुचि न हो या नाटक का समीक्षक कहानी का मूल्यांकन न कर सके। सचाई इतनी ही है कि अन्य रूप-प्रकारों की अपेक्षा किसी विशिष्ट रूप की ओर किसी समीक्षक की विशेष गति रुचि भेद के कारण पाई जाती है, उस दिशा में विशेषज्ञता के नाते उसकी देन विशिष्ट हो भी सकती है। किन्तु कोई समीक्षक अनेक दिशाओं में समान रूप से भी अधिकार रख सकता है। एक ही ग्रंथ में साहित्य के विविध रूपों का विभिन्न दृष्टियों से भी अध्ययन होता है। इन पंक्तियों के लेखक का प्रयत्न अधिक से अधिक सूचना के संग्रह का है। यद्यपि कोरा सूचना संग्रह निरर्थक है, पर सार्थक की छाँट के लिए सार्थक-निरर्थक जैसी भी हो, सामग्री का संचय जरूरी है। इस संचय में उत्तरतर के कार्य को अलग करना और महत्त्व देना विद्वानों का कार्य है। मेरा प्रयास यदि उनके सामने कुछ विचारणीय सामग्री रख सके तो यही मेरी सफलता है। इस लेख में जिन आलोचकों की चर्चा आई है, उनके अभावात्मक पक्ष (निगेटिव साइड) पर मैंने मौन ही धारण करना उचित समझा है। मेरी दृष्टि में अभी तो राजस्थान के साहित्यकारों के सामने यही स्थिति है कि वे अपने को महसूस करें, प्रमर्दन करें, आत्मालोचन की चर्चा का अवसर आए इस योग्य बनें। या मैंने हमारे अभावों की ओर संकेत अवश्य किया है, उन कृतियों पर एक-दो शब्दों में अधिक का व्यय नहीं हुआ है, जिनका महत्त्व साधारण है। आज नये समीक्षकों की प्राचीन साहित्य के प्रति अवज्ञा और उदासीनता की दृष्टि एक बहुत बड़े खतरे के बिन्दु पर पहुँच गई है। अपनी परम्परा को देखे बिना आगे बढ़ाना कभी भी संभव नहीं है, प्राचीन कृतियाँ हमारे अनुभव को विस्तार करती हैं, जीवन के बोध को बढ़ाती हैं और सनातन संस्कारों का संवर्धन करती हैं। अतः मैंने प्राचीन साहित्य पर हुए कार्य का आदर से उल्लेख किया है, इसके सर्वथा विपरीत धारणा कुछ समीक्षकों की है, जो हिन्दी साहित्य को छायावाद के साथ समाप्त

१. अज्ञेय के आत्मनेपद से उद्धृत

कर देते हैं। वैसे [illegible] ने नये [illegible] और नयी [illegible] का [illegible] किया है। किन्तु दो-चार [illegible] के आधार पर ही [illegible] कर देना [illegible] [illegible] वास्तविक मूल्यांकन के लिए पुनः [illegible] अपेक्षित है।

[illegible]

उखड़े बिखरे टूटे पत्ते

[illegible] 'ओज,' [illegible]

उखड़े बिखरे
टूटे [illegible]
[illegible] हम
[illegible]।
[illegible]
[illegible],
[illegible]
[illegible]
[illegible]
[illegible]
[illegible]।
[illegible]
[illegible]
[illegible]
[illegible]
[illegible]।
[illegible]
[illegible]
[illegible]
[illegible]
[illegible]

——

निबन्धकार

प्रो० नरेन्द्र भानावत एम.ए., सा. रत्न, रिसर्च स्कॉलर हिन्दी-विभाग गवर्नमेंट कालेज, बूंदी (राज.)

राजस्थान की रत्नगर्भा माटी में शूर और संत एक साथ तलवार और संजरी गमाते आये रहे हैं। यहाँ की धना-चंगा भूमि यदि रणबांकुरों की हुंकारों के साथ गूंजती है तो साहित्य, संगीत और कला की माधुरी के साथ थिरकती भी है। राजस्थानी साहित्य ने जहां पद्य के माध्यम से वीरों में मर-मिटने की प्रेरणा भरी है वहीं गद्य के माध्यम से ख्यात, बात, विगत, पीढ़ी, पट्टावली, वंशावली, वचनिका आदि के रूप में उनके गौरव की रक्षा की है। तेरहवीं शताब्दी से राजस्थान-गद्य की परम्परा अविच्छिन्न रूप से अब तक चली आ रही है। यहां हमारा अभिप्रेत विषय गद्य की विधा 'निबन्ध' की चर्चा करना है।

आधुनिक-काल में राजस्थान का साहित्यकार गद्य क्षेत्र में आगे बढ़ा है। जी में आया तो उसने अपनी अभिव्यक्ति का माध्यम हिन्दी बनाया और जी में आया तो राजस्थानी। इस दृष्टि से हमें दो प्रकार के निबन्धकार मिलते हैं- (१) राजस्थानी भाषा में लिखने वाले और (२) हिन्दी में लिखने वाले।

विषयगत वर्गीकरण:—

राजस्थान का प्रबुद्ध निबन्धकार वर्तमान-परिस्थिति में प्रचलित एवं चर्चित सभी विषयों को ग्रहण करता रहा है। अतः विषय-विविधता की दृष्टि से हम राजस्थान के समस्त निबन्धकारों को निम्न वर्गों में विभाजित कर सकते हैं—

(१) गवेषणात्मक निबन्ध।

(२) आलोचनात्मक निबन्ध।

(३) भावात्मक निबन्ध।

(४) हास्य-व्यंग्यात्मक निबन्ध।

(५) जीवनी-सम्बन्धी संस्मरणात्मक निबन्ध।

(६) यात्रा आदि स्फुट विषय।

अब हम प्रत्येक वर्ग का क्रमशः वर्णन करेंगे।

(१) गवेषणात्मक निबन्ध :—

राजस्थान में गुण और परिमाण की दृष्टि से निबन्धकारों का यही सबसे सशक्त वर्ग है। राजस्थान की साहित्य-परम्परा शताब्दियों से चली आ रही है। सैकड़ों अज्ञात ग्रन्थ सम्पादित होकर प्रकाश में आये हैं। हजारों हस्तलिखित ग्रन्थ अब भी भण्डारों में बन्दी पड़े छटपटा रहे हैं और लाखों ग्रन्थ दीमकों के उपजीव्य बन चुके हैं। अतः साहित्यकारों का ध्यान इस ओर गया और उन्होंने अपनी शोध का नवनीत निबन्धों के रूप में साहित्य-जगत के सामने रखा। इन निबन्धों को हम निम्न उपवर्गों में बांट सकते हैं —

१. लोक-साहित्य सम्बन्धी निबन्धः—राजस्थानी लोक-साहित्य विविध, विशाल और विस्तृत है। उसमें कथा, गीत, रास आदि का अनन्त भण्डार है। श्री अगरचन्द नाहटा, नरोत्तमदास स्वामी, और सूर्यकरण पारीक ने राजस्थानी-गीतों पर अच्छे निबन्ध लिखे हैं। कन्हैयालाल सहल ने 'राजस्थानी-कहावतों' और 'लोक-कथाओं में मूर

[illegible] ... 'राजस्थान की ...' ... 'राजस्थानी ...' ... 'राजस्थानी ...' ... 'राजस्थानी ...' पर अच्छे महत्त्वपूर्ण निबन्ध लिखे हैं। [illegible] पर प्रकाश डाला है। [illegible] राजस्थानी साहित्य [illegible] पर निबन्ध लिखे हैं [illegible] के द्वारा राजस्थानी साहित्य की [illegible] है। [illegible]

[illegible]

[illegible]

(२) आलोचनात्मक निबन्ध :–

इस कोटि के निबन्धकार [illegible] रहे हैं। [illegible] सिद्धान्तों का [illegible] करना पड़ता है तो कभी उन सिद्धान्तों के आधार पर [illegible] का विवेचन। [illegible] का [illegible] भी [illegible] पड़ता है। इस दृष्टि से इस वर्ग के तीन विभाग किये जा सकते हैं –

१. साहित्य-सिद्धान्त सम्बन्धी निबन्ध —

इस कोटि के निबन्ध [illegible] [illegible] है [illegible]

२. [illegible]

[illegible]

...कार है। मनस्वर की 'समीक्षा' ने उत्साहित ...लेखकों को प्रोत्साहन दिया पर आर्थिक-कठिनाइयों ने उसका पांव तोड़ दिया। साहित्यिक पत्रिकाओं में चन्द्रदान चारण, मथुरा प्रसाद अग्रवाल, ...इन्द्र तापन, नरेन्द्र भानावत, जगदीश 'कनक', ...सिंह 'नीरज,' नवल किशोर, डा० महेन्द्र आदि ...के निबन्ध प्रकाशित होते रहते हैं।

३. परीक्षोपयोगी निबन्ध:—

इधर आलोचना-क्षेत्र में कई निबन्ध हिन्दी ...की परीक्षाओं की दृष्टि से रखकर लिखे जा रहे हैं। उनमें अधिकतर तत्वों के आधार पर कृति-विशेष की समीक्षा प्रस्तुत की जाती है। इनका ...प्रकार-स्वरूप समीक्षा सम्बन्धी निबन्धों जैसा ही है पर उद्देश्य-विशेष से लिखे जाने के कारण ...हमने इन्हें 'परीक्षोपयोगी निबन्ध' कहा है। ...समीक्षा-सम्बन्धी वर्ग में उल्लिखित निबन्धकारों के अतिरिक्त प्रेमचन्द विजयवर्गीय, मदन केवलिया, ...कल्याण जोशी इसी श्रेणी के निबन्धकार हैं।

...गवेषणात्मक वर्ग के निबन्धकारों की भाषा ...सरल-स्पष्ट होती है और उसमें पाद-टिप्पणियों की भरमार रहती है। कहीं-कहीं तो प्रारंभ में एकाध ...पृष्ठ के अतिरिक्त निबन्ध का सारा कलेवर मूल-पाठ से ही भरा रहता है। अगरचन्द नाहटा और ...सिंह बीयन के अधिकांश निबन्ध इसी श्रेणी के हैं। आलोचनात्मक वर्ग के निबन्धकारों में भाषा ...का माधुर्य, विवेचन की शक्ति और समीक्षक की ...सूक्ष्म दृष्टि के दर्शन होते हैं। परीक्षोपयोगी निबन्धों ...में मौलिकता का दर्शन न होकर पिष्टपेषण मात्र ...ही रहता है।

(३) भावात्मक निबन्ध लिखने वाला वर्ग—

इस निबन्धों के अन्तर्गत हृदय की प्रधानता ...रहने के कारण हम गद्यकाव्य को भी सम्मिलित करते। इस कोटि के निबन्धकारों में जनार्दनराय प्रमुख हैं। इन्होंने लगभग एक हजार गद्यकाव्य लिखे हैं जो विभिन्न साहित्यिक-पत्रिकाओं में प्रकाशित हुए हैं। रामकृष्ण शिलीमुख ने दो दर्जन गद्यकाव्य लिखकर इस परम्परा को आगे बढ़ाया। दिनेशनन्दिनी के 'शबनम', 'मुक्ताफल', 'दुपहरिया के फूल', विष्णु अम्बालाल जोशी का 'सीधी रेखाएँ' शकुन्तला रेणू का 'उन्मुक्ति' ऐसे ही संग्रह हैं। लेखक ने भी ऐसे कई गद्यकाव्य लिखे हैं।

(४) हास्य-व्यंग्यात्मक निबन्ध

हिन्दी-साहित्य में हास्य सम्बन्धी रचनाओं की बड़ी कमी है। पद्य में तो फिर भी हास्य-रस की कविताएँ कवि-सम्मेलनों में बाजी मारने के लिये लिखी जाती रही हैं पर गद्य में ऐसे प्रयास बहुत कम हुए हैं। अलवर के त्रिभुवन चतुर्वेदी ने ऐसे निबन्धों में अधिक सफलता प्राप्त की है। 'बड़े भैया' उनका ऐसा ही निबन्ध है। अन्य निबन्धकारों में रणजीत, विजय निर्बाध, मंगल सक्सेना आदि के नाम लिये जा सकते हैं।

(५) जीवनी सम्बन्धी संस्मरणात्मक निबन्ध

हिन्दी-साहित्य में महान व्यक्तियों की जीवनी के बारे में अब भी प्रामाणिकता का दावा कोई नहीं कर सकता। ऐसी स्थिति में इस ओर विशेष प्रयत्नशील होना आवश्यक है। भीमराज भट्टाविया ने 'ललकार' में विजयसिंहजी 'पथिक' सम्बन्धी निबन्ध प्रकाशित कराये हैं। रावत सारस्वत और डा० हरीश के 'वरदा' में, डा० महेन्द्र के 'सेठ गोविन्ददास' और 'गुरु सम्पतिराय भण्डारी' पर तथा नरेन्द्र महेन्द्र भानावत के 'देवीदान सामर', 'कविराज मोहनसिंह और 'नरोत्तमदास स्वामी पर 'दैनिक हिन्दुस्तान' में ऐसे ही निबन्ध प्रकाशित हुए हैं। ओंकार पारीक ने भी 'जन-ज्योति' में संस्मरणात्मक निबन्ध लिखे हैं।

वेदना

अमिट वेदना है, मुझे और दो तुम,
मुझे दर्द का भान तुम को नहीं है।

जनम से मरण से मुझे खूब परिचय,
हृदय को नई और कोई जलन दो।
मुझे [illegible] [illegible] उसको बताते,
जलाती नहीं और कोई जलन दो॥

बहुत [illegible] है [illegible] [illegible] पुरा है,
नहीं एक पल जो कि [illegible] [illegible] पाता है।
इसे [illegible] तो तुम, इसे [illegible] मत,
यही हिम शिखर है, जो सब [illegible] जाता है॥

अमिट वेदना है, मुझे और दो तुम,
मुझे दर्द का ज्ञान तुमको नहीं है॥

बुझा दीप जो था, उसे क्या बुझाना,
अमर ज्योति मैं हूँ, बुझाओ बुझाओ।
बुझाओ सभी बत्तियों को [illegible],
अमिट हूँ मिटूँ क्यों मिटाओ मिटाओ॥

मगर [illegible] भर भी जला कर [illegible],
किसी और को मोह [illegible] तो क्या है?
[illegible] ही नहीं [illegible] [illegible] न [illegible],
इसी दर्द को मोह [illegible] तो क्या है?

न देखो किसी का हृदय भर गया है,
जलन बाद का ध्यान तुमको नहीं है॥

— श्री [illegible] '[illegible]'

साहित्यकार ??

श्री रामनिवास 'शाह'

साहित्यकार समाज का सचेतक है। समाज के स्पर्श से साहित्यकार के भाव–सरोवर में जो तरंगें उठती हैं, वह उन्हें बुद्धि के कूलों में मंथन कर, सृजन के क्षणों में, शब्द के पट पर अंकित कर देता है। वह युग के मानस को अपने-आप में आत्मसात् कर चेतना, सम्वेदना और कल्पना के सहयोग से व्यक्ति, तीक्ष्ण सवेदित और आकर्षक तथा स्पष्ट कर देता हुआ व्यस्त, भ्रमित और शोषित जन-मानस को उसकी वास्तविक स्थिति से परिचित भी कराता है और भावी सम्भावनाओं का संकेत भी देता है।

यहीं से यह प्रश्न भी उपस्थित होता है कि क्या साहित्यकार यही करता है, या इससे कुछ अधिक भी उसका दायित्व है? वैसे आज के युग में साहित्यकार के समान सामान्य-जन से इतर प्राणी के लिये दायित्व की चर्चा करना अनेक व्याधियों को आमंत्रित करना है। फिर भी प्रश्न उपस्थित हो ही जाता है कि क्या उसे समाज के मानस का दर्पण करने के पश्चात् जो सम्भावनायें दिखती हैं वह उन्हीं का संकेत करके रह जाता है या उन सम्भावनाओं में अमंगल और मंगल को देखता हुआ अमंगल के निराकरण और मंगल की प्रतिष्ठा के लिये भी प्रयत्नशील रहता है।

आज का साहित्यकार चर्चा के क्षणों में व्यक्ति के स्तर और कला के नाम पर सत्य की अभिव्यक्ति को सुन्दर आकार में प्रतिष्ठित करने का आग्रह मात्र दिखाई देगा, इसके आगे कुछ नहीं। आगे का काम साहित्यकार के लिये नहीं है, ऐसा वह कहता है, कहता ही है, करता नहीं। उसके जाने या अनजाने में लगभग उपर्युक्त सभी प्रश्न उसके कृतित्व में परिलक्षित होते हैं, चाहे वहाँ व्यक्ति हो अथवा समुदाय। मेरी अपनी मान्यता है कि वह सूक्ष्म द्रष्टा भी है और स्वप्न द्रष्टा भी। सूक्ष्मद्रष्टा साहित्यकार युग-सत्य और उसकी भावी सम्भावनाओं को एक सुमन के मान अंकित करता हुआ जन को अपने स्वप्न द्रष्टा के रूप तक ले जाता है और उन्हीं प्रेरक क्षणों में उसे आत्म-विभोर कर, स्वप्न को सत्य में परिवर्तित करने की भाव–भूमि में ला खड़ा करता है।

साहित्यकार इसे स्वीकार नहीं करता है कि उसका कोई दायित्व है। वह इससे चिढ़ता है। यह स्वाभाविक भी है। सृजन में रत रहते हुये दायित्व का निर्वाह करते रहने पर भी उससे जो माँग की जाती रही है, स्मरण दिलाते रहने की जो परिपाटी चल पड़ी है उससे वह खीज गया है। उसे क्षोभ होता है उस कृपण मनोवृत्ति पर जो निरंतर प्राप्त करते रहने पर भी यह नहीं कहती कि इसे सृजन से कुछ प्राप्त हुआ है। बल्कि बराबर उससे आगे और माँग करती रहती है। आखिर साहित्यकार भी तो प्राणी है और [illegible] वह झुंझला ही जाता है इस कृतघ्नता पर और कह देता है कि मेरा कोई दायित्व नहीं है। यहीं प्रति-क्रिया उसकी चर्चा में पूर्ण उभार के साथ अभिव्यक्त होती है, किन्तु सृजन के क्षणों में सृष्टा के मानस में बैठा शिव सभी विकारों को पी कर उभर आता है और तब स्वतः ही साहित्यकार के कृतित्व में "मंगल" आ विराजता है। अन्तर मन में प्रेम सुमन में गंध। इसीलिये साहित्यकार अभिनन्दनीय है।

[illegible]

सकता हूँ कि, यह युग की (साहित्यिक) प्रवृत्ति ही हो गई है जिसमें साहित्यकार अपने आपको स्वतः ही उलझाता जा रहा है। यहाँ यह भी स्मरण रखने की बात है कि यह प्रवृत्ति प्रमुखतः युवक वर्ग की है, प्रौढ़ साहित्य की नहीं, मंच पर इसी अभिव्यक्ति को तालियों की गड़गड़ाहट में सम्मान मिलता रहा है और यही इसके आकर्षण का कारण भी है। यह तो भविष्य ही बतायेगा कि इसका परिणाम कैसा होगा, किन्तु है भयावह!

वर्तमान युग की कुछ प्रमुख विशेषतायें और भी हैं। प्रचार प्रदर्शन, गुरुडम और हथकण्डे। जीवन को यह प्रसार राजनीति में प्राप्त हुआ है वैसे बदनाम पूँजीवाद है, खैर जो भी हो, साहित्य भी इसके आच्छादन से मुक्त नहीं है। यदि यह कहें तो अधिक उपयुक्त होगा कि साहित्य का प्रांगण तो इन विशेषताओं की प्रमुख क्रीड़ास्थली है।

साहित्यिक गिरोह इस युग में काफी "बदनाम" रहने का साहस तो अभी मुल्क में नहीं है, प्रसिद्ध है। आलोचना, जिसे प्रशंसा और आक्षेप की संज्ञा देना अधिक संगत होगा, इन गिरोहों का प्रधान और अमोघ अस्त्र है, जो साहित्य के सत्य का अंग भंग करने में अधिक समर्थ और सफल रहे हैं। इसी शस्त्र से सन्नद्ध हो आज का साहित्यकार विजय यात्रा पर निकला है।

पत्र और पत्र, जिन पर निश्चित ही गुरुडम और गिरोहों के हथकण्डों का आधिपत्य है, सस्ते प्रचार के प्रसाधन हैं। इनके प्रताप से साहित्य के मन्दिर में इस भाँति भीड़ लग रही है कि आज के पाठक का साहित्य के सत्य को पहचानने में काफी दुविधा हो रही है। इस आवरण में वह पहचान ही नहीं पाता कि वह किसे देवता मानकर आराधन करे। किसे सरस्वती का वरदपुत्र माने और उसे प्रसाद ग्रहण करे।

स्वार्थ की भीड़ भाड़ और प्रचार की धक्कापेल में उड़ी हुई गर्द समय नभ मण्डल को आच्छादित कर लेती है। कला की कान्ति गर्द के आवरण में ओझल हो जाती है। जिस प्रकार कोहरा सूर्य की प्रकाश किरणों को स्पष्ट नहीं होने देता उसी प्रकार यह गर्द साहित्य के सत्य स्वरूप के आगे आ उसकी कान्ति में जन के परिचय में बाधा उपस्थित करती है। सृजक और पाठक के बीच का यह आवरण उस भ्रम के समान है जिसे दर्शन के क्षेत्र में माया का आत्मज माना गया है। आडम्बरियों की यह आतिशकाणिकों की भाँति साधारण जन को आश्चर्य चकित भी कर देती है और भयभीत भी। किन्तु आडम्बर सत्य का आसन ग्रहण नहीं कर सकता, वह स्थाई नहीं होता, समय के साथ ऊपर को उड़ी हुई गर्द उसी तल पर आ गिरती है जहाँ से वह उठी थी, और तब साहित्य का पुँजीभूत सत्य अपनी पूर्ण कान्ति के साथ स्पष्ट हो समग्र जनमानस को आलोकित कर देता है, जन उस आलोक में अपने आपको पहचान, आत्म विभोर हो जाता है और तब वह कृतज्ञ भाव से प्रकाश के जनक का स्तवन करता हुआ उसके दर्शन के लिये लालायित हो उठता है किन्तु तब तक साहित्यकार साधन से साध्य का रूप प्राप्त कर लेता है अतः साधारण आकांक्षाओं से निर्लिप्त उसका व्यक्तित्व यह परवाह नहीं करता कि समाज उसे कुछ दे। मेरी अपनी दृष्टि में साहित्यकार का यही स्वरूप है और मैं उसी की आराधना करता हूँ।

मुफ्त की बात

श्री [illegible]

[illegible]

मगर यह कोई शिकवा की बात नहीं है। सब लोग एक-दूसरे को सलाह देते रहेंगे—इन सलाहों को मानने या न मानने की सबको पूरी स्वतन्त्रता और पूरा अधिकार होगा। आज-कल भी तो नौकर लोग सलाह देते फिरते हैं—चाहे कोई माने या न माने।

जिस तरह किसी पार्टी या दल में कुछ दक्षिण-पंथी, कुछ वाम-पंथी कुछ मध्यम मार्गी और कुछ बैरंगी के लोटे हुआ करते हैं उसी तरह सलाहकारों के दल में भी चार श्रेणियां रखी जा सकती हैं। तुलसीदास ने पतिव्रता स्त्रियों के चार भेद गिनाये हैं—उत्तम, मध्यम, नीच, लघु। इसी आधार पर सलाह दानियों के भी चार भेद किये जा सकते हैं।

उत्तम सलाहकारों की श्रेणी में उनको रखा जा सकता है जो बेचारे आराम-कुर्सियों पर बैठ कर, आंखें मूंद कर और कान बन्द कर, भाषणों, प्रवचनों, वक्तव्यों आदि के द्वारा सब को नेक-सलाह बांटते फिरते हैं। इनकी कथनी और करनी में उतना ही अन्तर होता है जितना आकाश और पाताल में। मसलन, ये जनता को सलाह देते हैं कि रैन-बसेरों में गुजारा करो मगर खुद आलीशान बंगलों में रहते हैं। कम-तनख्वाह वालों को पेट पर पट्टी बांधने का उपदेश देते हैं पर खुद बड़ी-बड़ी तनख्वाहें और भत्ते वसूल करते हैं। तीसरे दर्जे के मुसाफिरों को चौथी या पांचवी योजना तक इन्तजार करने की सलाह देते हैं, पर खुद हवाई जहाजों में, मोटरों में और रेल के सैलूनों में सफर करते हैं। बाहर मद्य-निषेध का प्रचार करते हैं, पर घर में बैठ कर जाम के जाम खाली कर देते हैं और फिर भी पारसा बने रहते हैं। क्योंकि—

शर्त है पीकर मुकरना पारसाई के लिए
जो सरे बाजार पीता है वही बदनाम है।

दहेज प्रथा के खिलाफ लेक्चर झाड़ते हैं, पर अपने बेटे के विवाह में चुपचाप दहेज की लम्बी रकमें डकार जाते हैं। रिश्वतखोरों को गालियां सुनाते हैं, लेकिन प्रत्यक्ष या परोक्ष रूप से रिश्वत देने वालों की आव-भगत और हिमायत करते हैं। अन्न की कमी और भुखमरी पर आठ-आठ आंसू बहा कर दावतें और पार्टियां उड़ाते हैं। अन्न-बचत का प्रोपेगेण्डा करके दौरों व समारोहों में लाखों रुपया धूल में डालते हैं। खुद के पांव कब्र में लटके हुए होने पर भी धन और सत्ता का मोह नहीं छोड़ते मगर दूसरों को जीवन की क्षणभंगुरता और त्याग का उपदेश देते हैं। इस तरह तुलसीदास की मन क्रम वचन लबार की परिभाषा को पूरी तरह सार्थक करते हैं।

मध्यम दर्जे के सलाहकारों की कैफियत यह है कि ये सलाहकार बनाये या नियुक्त किये जाते हैं। वह भी ठोक-पीट कर नहीं, बल्कि बड़ी इज्जत के साथ। ऐसे सलाहकार उन लोगों में से छांटे जाते हैं जो या तो विशेषज्ञ माने जाते हैं या जिन्हें किन्हीं कारणों से होने से लगाना जरूरी होता है ताकि वे शोर न मचायें। इन सलाहकारों के लिए तरह-तरह के सलाहकार मण्डल या समितियां या जांच-कमीशन कायम किये जाते हैं। मसलन दैसे धानों की तोंद क्यों फूल जाती है और इन दोनों में क्या अन्योन्याश्रय सम्बन्ध है। या लोग गलियों में कूड़ा क्यों फेंकते हैं, या सीमित नामदार है अथवा हानिकारक या बटेरबाजी पतंगबाजी आदि का राष्ट्रीय जीवन में क्या महत्व है इसका पता लगाने के लिए जांच कमीशन बिठाये जा सकते हैं, और इनकी सिफारिशों पर अमल किस तरह किया जाय इस पर राय देने के लिए सलाहकार मण्डल बनाये जा सकते हैं। इन सलाहकारों से आशा की जाती है कि देश भर के दौरे करें और

[illegible] लिए ही जाती है।

[illegible]

[illegible]

[illegible] है। दुनिया का कोई [illegible] देने के लिए [illegible]

[illegible]

[illegible]

[illegible]

[illegible]

— [illegible]

जनसामान्य, साहित्यकार और हिन्दी साहित्य

दयाकृष्ण विजय

राजनीति, अर्थशास्त्र, समाज शास्त्र आदि पर लिखे अनेकों मोटे–मोटे ग्रंथ साहित्य की कोटि में नहीं आते। साहित्य मानव जीवन की समग्रता की व्याख्या है। साहित्यकार शब्दसुमनों का माली और जीवन के रंगों का चितेरा है। वह एक संवेदनशील प्राणी है। उसकी आत्मानुभूति उसकी अभिव्यक्ति में विस्तार पाती है। यही आत्मानुभूति चाहे संवेदन हो अथवा सहजानुभूति, आवेग संवेग हो अथवा धारणा, इन सृष्टि के माध्यम से साहित्य की सत्ता प्राप्त करती है। साहित्य के सृजन में जहाँ साहित्यकार की प्रतिभा प्रमुख है, वहाँ हम उसके व्यक्तित्व, देश काल, वातावरण से प्राप्त संस्कार उसके सामाजिक सम्बन्ध तथा तात्कालीन ऐतिहासिक परिप्रेक्ष्य को नहीं भुला सकते। साहित्यकार इसी प्रतिभा सम्पन्नता के कारण अन्य जन की तुलना में कुछ विशिष्ट गुण सम्पन्न होता है। इस कारण इस पर समाज-दायित्व भी विशेष हो जाता है। इतना होते हुए भी साहित्यकार अपने सामाजिक परिवेश के सीमित मानव सम्बन्धों को छोड़ता नहीं है। वह समाज का एक अंग ही है। अनुभूति की क्षमता कुछ कम अधिक सबमें ही होती है, लेकिन अभिव्यक्ति सामर्थ्य, वह एक अपने में विशिष्ट गुण है, ईश्वरीय देन है। यही अभिव्यक्ति सामर्थ्य कवि का अवगाहन है।

साहित्य रचना के दो ही तीन पक्ष होते हैं। प्रथम भाव पक्ष (अनुभूति), द्वितीय कल्पना पक्ष (प्रतिभा) तथा तृतीय कला पक्ष (अभिव्यक्ति)। साहित्यकार की कल्पना के उभय मानसपट सदैव भाव व कला की निरन्तर मानसान्तर पगडंडियों पर कुछ, कुछ चलते हुए अपने मंगलमय पद–चाप छोड़ते चलते है। यही पर भाव संवेदन की सचाई, चिन्तन की गहराई तथा अभिव्यक्ति की सहजता के कारण जन-जन के कण्ठ–स्वर हो जाते है। इसी सहजानुभूति को साधारणीकरण कह सकते है।

इस बड़ी भूमिका के बाद दूसरा प्रश्न, जो आज सभी आचार्यों की बुद्धि कसौटी बना हुआ है, वह है साहित्यकार क्या लिखे, किसके लिये लिखे तथा क्यों लिखे। साहित्यकार 'क्या लिखे' का उत्तर केवल प्रश्न मात्र नहीं है उसे एक प्रक्रिया की भी अपेक्षा है, जिसमें 'किसके लिये' तथा 'क्यों' के उत्तर भी छुपे हैं। प्रश्न यह उपस्थित होता है कि साहित्यकार समाज की मांग पर लिखता है अथवा साहित्यकार स्वयं साहित्य के माध्यम से समाज में मांग उपस्थित करता है। मैं यह समझता हूँ कि ये दोनों ही प्रश्न से सम्बद्ध है। कभी समाज साहित्य में इतना आगे बढ़ जाता है कि वह साहित्यकार को साथ चलने के लिये विवश कर देता है। और कभी समाज रूढ़िगत संस्कारों की कुण्ठाओं में अपने को इतना जकड़ा हुआ पाता है, तथा विवेकहीन सा अनुभव करने लगता है कि उसे बाहर आने के लिये प्रबुद्ध मार्गदर्शन की [illegible] होता है। यही प्रबुद्ध मार्गदर्शक, [illegible] कवि या स्रष्टा साहित्यकार है। [illegible]

[illegible]

सबको आत्मा मानते हुए भी जीवन मुक्तों को श्रेष्ठ तथा सांसारिकों को सामान्य समझेगा और नैतिकतावादी कहेगा जन्म से सभी समान हैं 'जन्मने जायते शूद्रा'। सबको उन्नति का समान अवसर मिलना चाहिये। विशिष्ट वही है जो बुद्धि से श्रेष्ठ है, गुण सम्पन्न है।

मैं यह मानता हूँ कि साहित्यकार की दृष्टि राजनीति, समाज एवं दर्शन की धारणाओं की बन्दिनी नहीं होनी चाहिये। साहित्यकार एक सामाजिक प्राणी भी है, राजनैतिक भी है, दार्शनिक भी है तथा नैतिकतावादी भी। हां, हो सकता है, राजनीतिज्ञ उसकी भावुकतावश उसे अपनी श्रेणी में नहीं रखना हो, दार्शनिक उसकी सामाजिकता से उद्विग्न हो तथा नैतिकतावादी उसके सौन्दर्य तथा काम चित्रणों से व्यथित हो नाक भी सिकोड़ता हो, तो भी कवि की अपनी आत्मा के साक्षात्कार की अनुभूति की उच्चावस्था में लिखा साहित्य समाज को दिशा संकेत देता ही है। इतना मैं अवश्य स्वीकार करूंगा कि साहित्यकार के इसी समाज का एक अंग होने से उसकी अभिव्यक्ति भी समाज के स्तर से भिन्न नहीं हो सकती। बल्कि यह कहा जाए कि साहित्य तत्कालीन समाज स्थिति का प्रतिबिम्ब होता है तो त्रुटि न होगी। इसलिये हर समय यह कहना कि साहित्यकार क्रान्तिदर्शी है, युग निर्माता है, पथ प्रदर्शक है, सही नहीं होगा। हां, कभी साहित्यकार क्रान्तिदर्शी है तो कभी युग निर्माता, कभी पथ प्रदर्शक है तो कभी मात्र मनोरंजनकारी।

साहित्यकार सामान्य जन से एक ही बात में विशिष्ट है कि वह प्रकृति से प्रतिभा सम्पन्न तथा वाक् पुत्र है। लिखना उसकी मर्जी है। अन्यथा समाज से पृथक् साहित्यकार का कोई अस्तित्व नहीं है। सामाजिक कारणों से ही साहित्यकार में हमें साहित्य के मूल तत्व भाव, कल्पना तथा कला की घट-बढ़ देखने को मिलती है। ये परिस्थितियां ही, साहित्यकार क्या लिखे, किसके लिये लिखे तथा क्यों लिखे, निर्धारित करती है। साहित्य में भाव, कल्पना तथा कला के बदलते हुए रूपों में हमें समाज के परिवर्तनों के ही कारण दृष्टिगत होते हैं।

हिन्दी साहित्य के आदि काल से लेकर आज तक यदि हम देखें तो लगेगा, कभी भी किसी कवि ने युग वाणी से भिन्न स्वर नहीं गाया।

हिन्दी साहित्य के आविर्भाव काल को ही लीजिये, जिसे साहित्य में वीरगाथा काल कहा जाता है, ऐसा समय था, जब विदेशी आक्रमण बहुत तेजी से उत्तरी भारत पर हो रहे थे। भारत में नृपात्मक राज्य व्यवस्था ही थी। समाज रक्षा का सम्पूर्ण दायित्व उन्हीं पर था, इसलिये देश रक्षा के लिये ऐसे नृपतियों को ही प्रोत्साहित करना समाज धर्म था। दासता नहीं थी। व्यक्ति का यशोगान न होकर सम्पूर्ण समाज के गौरव की अभिव्यक्ति थी। वह निसन्देह युग धर्म का स्वर था। आज के जनतांत्रिक शासन में, हो सकता है, तत्कालीन एकतंत्रात्मक राज व्यवस्था, हमें अखरती लगती हो, परन्तु समाज रूप में प्रतिष्ठित नृप की यश गाथा, क्या शेष सम्पूर्ण समाज की धमनियों में उत्साह, चेतना तथा स्फूर्ति का संचार नहीं करती? फिर क्यों आज हम श्रेष्ठ व्यक्तियों की जीवनियां लिखते हैं, क्यों उनके चित्र अपने दफ्तर कमरों में लगाते हैं। इसलिये ही ना, कि उस व्यक्ति का चरित्र समाज के लिये आदर्श स्वरूप है। इसीलिये रीति काल का वह काव्य, देश पर आये हुए संकट की ओर सामान्य जनरुचि आकृष्ट करने के लिए आवश्यक था। इसी प्रकार भक्तिकाल का साहित्य, जिसने काल से नई दिशा का निर्देश था, क्योंकि धर्मीय शासन से समाज एवं संस्कृति पर प्रहार हो रहा था। जिससे कि आज, तथा देशभक्ति की शक्ति पूरी हो रही थी। अतः इसके के बाद

सबको आत्मांश मानते हुए भी जीवन मुक्तों को श्रेष्ठ तथा सांसारिकों को सामान्य समझेगा और नैतिकतावादी कहेगा जन्म मे सभी समान है 'जन्मने जायते शूद्रा'। सबको उन्नति का समान अवसर मिलना चाहिये। विशिष्ट वही है जो बुद्धि मे श्रेष्ठ है, गुण सम्पन्न है।

मैं यह मानता हूँ कि साहित्यकार की दृष्टि राजनीति, समाज एवं दर्शन की धारणाओं की बन्दिनी नही होनी चाहिये। साहित्यकार एक सामाजिक प्राणी भी है, राजनैतिक भी है, दार्शनिक भी है तथा नैतिकतावादी भी। हाँ, हो सकता है, राजनीतिज्ञ उसकी भावुकतावश उसे अपनी श्रेणी मे नही रखता हो, दार्शनिक उसकी सांसारिकता मे उद्विग्न हो तथा नैतिकतावादी उसके सौन्दर्य तथा काम चित्रणों मे व्यथित हो साथ भी तिरोहता हो, तो भी कवि की अपनी आत्मा के साक्षात्कार की अनुभूति की उच्चावस्था मे लिखा साहित्य समाज को दिशा संकेत देता ही है। इतना मैं अवश्य स्वीकार करूंगा कि साहित्यकार के इसी समाज का एक अंग होने से उसकी अभिव्यक्ति भी समाज के स्वर से भिन्न नहीं हो सकती। बल्कि यह कहा जाए कि साहित्य तत्कालीन समाज स्थिति का प्रतिबिम्ब होता है तो त्रुटि न होगी। इसलिये हर समय यह कहना कि साहित्यकार क्रांतिदर्शी है, युग निर्माता है, पथ प्रदर्शक है, सही नहीं होगा। हाँ, कभी साहित्यकार क्रांतिदर्शी है तो कभी युग निर्माता, कभी पथ प्रदर्शक है तो कभी मात्र मनोरंजनकारी।

साहित्यकार सामान्य जन से एक ही बात मे विशिष्ट है कि वह प्रकृति से प्रतिभा सम्पन्न तथा भावुक है। लिखना उसकी मजबूरी है। अन्यथा समाज से पृथक् साहित्यकार का कोई अस्तित्व नहीं है। सामाजिक कारणों से ही साहित्यकार मे हमें साहित्य के मूल तत्त्व भाव, कल्पना तथा कला की घट-बढ़ देखने को मिलती है। ये परिस्थितियाँ ही, साहित्यकार क्या लिखे, किसके लिये लिखे तथा क्यों लिखे, निर्धारित करती है। साहित्य मे भाव, कल्पना तथा कला के बदलते हुए रूपों मे हमे समाज के परिवर्तनों के ही कारण दृष्टिगत होते हैं।

हिन्दी साहित्य के आदि काल से लेकर आज तक यदि हम देखें तो लगेगा, कभी भी किसी कवि ने युग वाणी से भिन्न स्वर नही गाया।

हिन्दी साहित्य के आविर्भाव काल को ही लीजिये, जिसे साहित्य मे वीरगाथा काल कहा जाता है, ऐसा समय था, जब विदेशी आक्रमण बहुत तेजी से उत्तरी भारत पर हो रहे थे। भारत मे नृपात्मक राज्य व्यवस्था ही थी। समाज रक्षा का सम्पूर्ण दायित्व उन्हीं पर था, इसलिये देश रक्षा के लिये ऐसे नृपतियों को ही प्रोत्साहित करना समाज धर्म था। दासता नही थी। व्यक्ति का यशोगान न होकर सम्पूर्ण समाज के गौरव की विरुदावलि थी। वह निस्सन्देह युग धर्म का स्वर था। आज के जनवादित शासन मे, हो सकता है, सामन्तीय एकतन्त्रात्मक राज व्यवस्था, हमें अटपटी लगती हो, परन्तु समाज रूप मे प्रतिष्ठित नृप की यश गाथा, क्या और सम्पूर्ण समाज की धमनियों मे उत्साह, चेतना तथा जागृति का संचार नहीं करती? फिर क्यों आज हम श्रेष्ठ व्यक्तियों की जीवनियाँ लिखते हैं, क्यों उनके चित्र अपने ड्राइंग रूमों मे लगाते हैं। इसलिये ही ना, कि उस व्यक्ति का चरित्र समाज के लिये आदर्श बनता है। इसलिये ऐसे वर्णन का यह काव्य, देश पर छाये हुए संकट की ओर सामान्य जनरुचि आकृष्ट करने के लिए आवश्यक था। इसी प्रकार भक्तिकाल का साहित्य, अपने काल में नई दिशा का निर्देश था, परन्तु बदलते समय के समाज एवं संस्कृति पर प्रहार हो रहा था। विवश की भाव, तथा देशानुराग की भक्ति सूखी जा रही थी। इस समय के समाज

[illegible]

[illegible]

[illegible]

[illegible]

[illegible]

[illegible]

साहित्य से आज कोई प्रेरणा नहीं ले सकता
तथापि ऐतिहासिक परम्परा की इस कड़ी मे इस युग
का भी अपना एक विशिष्ट ऐतिहासिक महत्व है।

इन तीनो कालो मे साहित्यकार ने सामान्य जन को ही धर्मांध राजनैतिक संकटों, विपदाओं से बचाया है। राजा–महाराजाओं को बचा लिया तो सारी प्रजा को बचा लिया, एकतंत्रात्मक राज–व्यवस्था मे हमे यह मानकर चलना ही पडेगा। इसके लिये तत्कालीन युग द्रष्टा कवियो ने क्रांति के प्रतीक ऐसे महापुरुष बनाये, जिनसे सिंहासन के बदले सहज धर्म च्युत होने वाले राजवंश ही प्रभावित न हो; सामान्य जन भी सहज आकृष्ट हो और धर्म च्युत न हो। राम और कृष्ण को देव रूप मे स्थापित करना भी इस ऐतिहासिक सन्दर्भ मे युग-धर्म ही दिखाई देता है।

अंग्रेजों की शासन काल मे भारत को कुछ मिला हो या न मिला हो, परन्तु इतना अवश्य मिला कि इंग्लैंड की औद्योगिक क्रांति ने भारतवासियों को विदेशी साहित्य, विदेशी सामाजिकता तथा विदेशी संस्कृति से शीघ्र ही परिचित करा दिया और इसी का परिणाम था कि हममें जो एक निराशा भर गई थी वह धीरे–धीरे समाप्त होने लगी। हमे बाहर भी अपने सहयोगी दिखाई देने लगे। इसी का परिणाम स्वरूप, परतंत्रता से मुक्ति का बोध कुछ एक ही को न हो, ऐसा न होकर ग्राम–ग्राम मे स्वतन्त्रता की चिनगारी फूट निकली। परम्परा ग्रस्त सामाजिक ढांचे मे आमूल परिवर्तन की मांग बढ़ने लगी। एकतंत्रात्मक तथा पूंजीवादी समाज व्यवस्था के दुर्गुण दिखाई देने लगे। जनतांत्रिक सामाजिक चेतना का स्वर स्फुटित हुआ। साहित्य ने भी करवट बदली। साहित्य के ऐतिहासिक विकास की इस परम्परा मे राजतंत्र के स्थान पर जन स्वातंत्र्य की मांग का राष्ट्रीय स्वर गूंजा। ब्राह्मणवादी श्रेष्ठता के विरोध मे जनसामान्य की श्रेष्ठता का स्वर प्रकट हुआ बंगाल का ब्रह्म समाज, ऋषि दयानन्द का आर्य समाज, विवेकानन्द का मां भारत के प्रति राष्ट्रीयता का अद्वैतवाद तथा गांधी का राजनीति मे अवतरण सब मिला कर जन क्रांति के सूचक थे। उस समय की जनवाणी हिंदी साहित्य मे 'भारत भारती' के कंठो मे गूंजी। भारतेन्दु युग हमारे सामाजिक, सांस्कृतिक, राजनैतिक तथा साहित्यिक जागरण का युग है। इसीलिए इसे हिंदी के आधुनिक काल की संज्ञा मिली। इस आधुनिक काल की वाणी केवल पद्य मे ही नहीं गद्य मे भी उसी सबलता से मुखरित हुई। इसके बाद का छायावादी तथा रहस्यवादी स्वर निस्सन्देह निराशा तथा पलायन का स्वर है। परन्तु उसके पीछे भी बहुत सबल ऐतिहासिक पृष्ठ-भूमि है। स्वातंत्र्य संग्राम का नेतृत्व गांधी जी जैसे अहिंसावादियों के हाथ मे आ गया और क्रांति का गरजता स्वर उसमे अपना आश्रय पा नहीं सका। अन्तर विवश होकर उसे अन्तर्मुखी हो जाना पड़ा इसका कोई सामाजिक मूल्य न भी हो तो भी ऐतिहासिक मूल्य है अवश्य। लेकिन यह भी नहीं कह सकते कि इस काल मे राष्ट्रवाणी मुखरित हुई ही नहीं, प्रसाद के ऐतिहासिक नाटकों के चारण [illegible] तथा गीत 'अरुण यह मधुमय देश हमारा', 'हिमाद्रि तुङ्ग शृंग से' आदि आदि इसके उदाहरण है।

इसी समय भारतीय राष्ट्रीय आन्दोलन को (विशेष कर क्रान्तिकारियों को) जिस विचारधारा ने अधिक उत्साहित किया वह थी मार्क्सवादी विचारधारा। रूस मे साम्यवाद की विजय हुई अतएव जन-क्रांति तथा सर्वहारा का अधिनायकत्व अपूर्व घटना थी और उसका प्रभाव पड़ना भी स्वाभाविक ही था। इसका कारण साहित्य मे प्रगतिवाद के नाम पर सर्वहारा के दुःख दर्द का रूप बतायें इस

[illegible]

[illegible]

[illegible]

[illegible]

B. R. HERMAN & MOHATTA (India) PRIVATE Ltd.

JAIPUR

[illegible] 3775 / 4171 — Grams: EXPANSION

[illegible]

[illegible]

[illegible]

Parry & Co. Limited

[illegible]

[illegible]

किसी भी राष्ट्र की प्रगति, उत्थान व विकास उसकी भावी संतानों पर निर्भर है।
राष्ट्र बलशाली हो—बौद्धिक व शारीरिक रूप से—इसके लिए 'युवकों'
का सर्वाङ्गीण विकास—उत्थान जरूरी है।
इसी उद्देश्य को दृष्टिगत कर हमारे राजस्थान में जहां विकास की अनेक महान्
योजनाएं प्रारम्भ हुई हैं, स्कूल व कालेज खोले जा रहे है वहीं—
युवकों के शारीरिक विकास व उत्थान के लिए भी प्रयत्न किये जा रहे हैं—

राजस्थान क्रीड़ा परिषद्

RAJASTHAN SPORTS COUNCIL

शारीरिक उत्थान की दिशा में सतत् प्रयत्नशील है

अध्यक्षः—पूनमचन्द विश्नोई (उप शिक्षामंत्री) | उपाध्यक्षः—पी० एन० काक

नन्द निकेतन

मालवीय मार्ग, सी स्कीम,
जयपुर।

राय बहादुर राम प्रसाद राजगढ़िया

राजस्थान मिनरल एण्ड को०, हिन्द माइका लि०

राजपूताना कॉरपोरेशन लि०

माइका माइनर्स वा एक्सपोर्टर्स

शाखा :	हैड ऑफिस :
जयपुर C २३ पृथ्वीराज रोड	१३ हैरिङ्गटन स्ट्रीट, कलकत्ता
फोन नं० ४६०२	फोन नं० ४४-२१६४
तार का पता :	तार का पता :
RAJTRADING. RAJGARHIA	RAJGARHIA. NEWTOWN

भीलवाड़ा	तार का पता—RAJGARHIA	फोन नं० ७४
गिरडी (बिहार)	तार का पता:—RAJGARHIA	फोन नं० २७/१४२
कोडरमा (बिहार)	तार का पता:—RAJGARHIA	फोन नं० ११

सहयोगियों के प्रति दो शब्द

इस वर्ष राजस्थान [illegible] के [illegible] सेमिनार व इसकी स्मृति में प्रकाशित [illegible] ग्रंथ के प्रकाशन पर जिन महानुभावों का सहयोग हमें प्राप्त हुआ है, हम उनके अत्यन्त आभारी हैं और उनके सहयोग को हम कभी भी भुला नहीं सकते हैं।

श्री हंसराज [illegible], चीफ इन्जीनियर [illegible] [illegible], राजस्थान, श्री [illegible] लाल, [illegible] भाई [illegible], श्री शिवराज जैन, [illegible] जयपुर, श्री बालकृष्ण शर्मा, आर. टी. ओ. जयपुर, श्री [illegible] जोशी, [illegible] [illegible], श्री [illegible] भाई [illegible] [illegible] [illegible] जयपुर, श्री [illegible] सिंह '[illegible]' [illegible] भाई [illegible], आदि महानुभावों के [illegible] का हार्दिक सहयोग प्राप्त हुआ है।

श्री [illegible] सिंह, [illegible] [illegible] [illegible], श्री [illegible] शर्मा, [illegible] [illegible] [illegible] जयपुर, [illegible], [illegible] [illegible] [illegible] जयपुर, श्री [illegible] श्री [illegible] हायर सेकेन्ड्री स्कूल जयपुर, श्री [illegible] श्री [illegible], [illegible] [illegible] हायर सेकेन्ड्री स्कूल जयपुर, श्री [illegible] माथुर, [illegible] [illegible] [illegible] हायर सेकेन्ड्री स्कूल जयपुर आदि महानुभावों से संस्था को [illegible] समारोह के अवसर पर [illegible], [illegible] व अन्य [illegible] [illegible] का सहयोग प्राप्त हुआ।

श्री [illegible] [illegible] और श्री [illegible] [illegible] [illegible] के [illegible] के लिये [illegible] देकर संस्था की [illegible] बड़ी [illegible] को दूर किया है।

श्री [illegible] त्रिपाठी शर्मा, श्री [illegible] चतुर्वेदी, श्री [illegible] शर्मा, श्री [illegible] सिंह और श्री [illegible] शर्मा का [illegible] के सभी [illegible] में सहयोग प्राप्त होता रहा है। इस वर्ष भी [illegible] की [illegible] व [illegible] सभी [illegible] में इनका पूर्ण सहयोग रहा है। विशेष कर श्री [illegible] त्रिपाठी शर्मा का [illegible] के [illegible] में [illegible] सहयोग रहा है।

हम [illegible] श्री [illegible] [illegible], श्री [illegible] [illegible], श्री [illegible] [illegible], [illegible] [illegible] के [illegible] [illegible] [illegible] [illegible] की [illegible] [illegible] आभार [illegible]।

राजस्थान वित्त-निगम

द्वारा उद्योगों की स्थापना व विकास के लिये

[illegible]

[illegible]

लघु एवं कुटीर उद्योगों के लिये

[illegible]

राजस्थान वित्त निगम

[illegible]

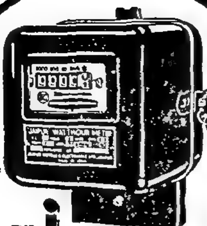

THE Jaipur

HOUSE SERVICE

METER

the 'Jaipur' house service meter
is completely dust-proof,
light and durable. We also
manufacture copper conductors,
rods and strips, cadmium copper
conductors & rods, arsenical
copper rods, brass rods and wires.

manufactured by:

THE JAIPUR METALS & ELECTRICALS LTD.

JAIPUR - RAJASTHAN (INDIA)

दी जयपुर मिनरल डवलपमेंट सिण्डीकेट

(प्राइवेट) लिमिटेड

[illegible]—

'त्रिकोण' मार्का सोप पाउडर

निर्माता एवं उत्पादक

मोतीसिंह भोमियों का रास्ता

जौहरी बाजार, जयपुर

तार-MAHALAXMI

फोन-मिल्स-३२
सिटी ऑफिस-४२, ४२ A

सुन्दर और टिकाऊ धोती, लट्ठा, खादी, परमटा, टूल आदि के लिये प्रतिष्ठित कपड़ा मिल ।

दी महालक्ष्मी मिल्स, कम्पनी लिमिटेड
ब्यावर (राजस्थान)

मैनेजिंग डाइरेक्टर
सेठ पन्नालाल कोठारी

For Quality G. I. Barbed

Wire, Tin Containers & Agricultural Implements

KINDLY CONTACT.

METAL UDYOG (P) Ltd.,

Office
GULAB NIWAS
M. I. Road, Jaipur
Phone, 5468

Factory
9 & 11 B INDUSTRIAL ESTATE,
Jaipur Scato JAIPUR.

murphy radio

Delights the home!

Grams GHIYA AUTHORISED DEALERS Phone No. 2501

1. M/s. Ramkumar Suraj Baksh

Tripolya Bazar,

JAIPUR

2. M/s. Ghiya's

M. I. Road, JAIPUR

Phone 3343

राजस्थान की सबसे प्राचीन और प्रतिष्ठित कपड़ा मिल

दी कृष्णा मिल्स लिमिटेड

ब्यावर

गत ७० वर्षों से राजस्थान के औद्योगिक विकास में संलग्न

राजस्थान में सहकारिता का व्यापक प्रसार
सभी के लिए अवसर

* छुआछूत बन्द कीजिये।
* हस्त धन्धों के तरीकों में सुधार कीजिये।

आप अपने कृषि, उद्योग तथा अन्य आर्थिक हित के कामों को सहकारी आधार पर चलाकर लाभ तथा हानि में अन्य सहकार-साथियों के साथ समान रूप में साझेदार बनें।

किसान और गांव की सेवा सहकारी समिति के सदस्य बनकर अपनी उन्नति कर सकते हैं। यह समिति इनके लिये ये कार्य करेगी :—

* गांव के सभी रहने वाले किसान, कारीगर, मजदूर, साहूकार व हरिजन ग्राम सेवा सहकारी समिति के सदस्य बन सकते हैं।
* खेती के साथ और दूसरे सारे धन्धों को सब प्रकार के उपायों से बढ़ावा देगी।
* खेती करने और पैदावार बढ़ाने के लिए कर्ज की उचित व्यवस्था करेगी।
* इसके अलावा खेती में जो पैदावार होगी उसका पूरा-पूरा मोल किसान को दिलाने का यत्न करेगी।
* खेती की जरूरी चीजें, जैसे सुधरे बीज, खाद और उर्वरक, अच्छे खेती के औजार और मशीनें, दिलाने का प्रबन्ध करेगी।
* यही क्यों, अगर गांवों में सहकारी भावना बढ़ी और लोग-बागों ने सहकारी काम करने के तरीके सीख कर कारोबार करने में सफलता दिखाई तो सब जगह के कामों को भी सहकारी तरीके से किया जाने लगेगा।
* वह समय भी इस ग्राम सेवा सहकारी समिति के काम-धाम के बढ़ते २ आ सकता है जब यह गांव के अनाथों, अपाहिजों, निराश्रितों, रोगियों, विधवाओं, बूढ़ों, बालिकाओं, पथ-भ्रष्ट लोगों आदि सब की सार-सम्भाल का भी पूरा काम अपने हाथ में ले ले।
* रोजमर्रा की जरूरत की चीजें जैसे :— तेल, साबुन, दियासलाई आदि चीजों को सस्ते दामों में हासिल किया जा सकेगा।
* यह ग्रामीण समुदाय की आर्थिक उन्नति के सारे कार्यों में मददगार होगी।

सबकी भलाई — आपकी भलाई

राजस्थान सरकार द्वारा प्रसारित

With best compliments from :—

Man Industrial Corporation Limited,

JAIPUR

- The first and only Re-Rollers in India for Special Profile Sections for Steel Doors, Windows and Sashes;
- Also Fabricators of Steel Doors, Windows and Sashes;
- Also Rollers of M. S. Bars, Rods and Light Tees;
- Galvanizing and Forging Work our speciality;

राजस्थान हस्तकला का केन्द्र है

स्थानी कला के नमूने खरीद कर अपने घरों को सुशोभित कीजिए

तथा

गृह उद्योगों को प्रोत्साहन दीजिए

थी दांत के खिलौने
लाख व नगीनों के कंगन
बंधाई व छपाई के स्कार्फ
❀ जोधपुर की बनी शीतल जल की झारियां
❀ चन्दन की लकड़ी के खिलौने
❀ रंगीन एवं बंधेज की साड़ियां
❀ पक्के रंग की चादरें
❀ लकड़ी एवं खस की बनी वस्तुएं
❀ कलापूर्ण सामान

❀ नीले व सफेद पाटरी के सामान
❀ आकर्षक नमूने की दरियां
❀ सांगानेरी रंगाई व छपाई के वस्त्र इत्यादि
❀ उदयपुर के सुन्दर लकड़ी के खिलौने
❀ जयपुर की कशीदा की हुई जूतियां व जूते
❀ जयपुर की प्रसिद्धि प्राप्त चूड़ियां व चूड़े
❀ कोटा के सुन्दर डोरियें

प्रत्येक सरकारी विक्रय-केन्द्र पर प्राप्त

राजस्थानी हस्तकला के नमूने अन्तर्राष्ट्रीय प्रदर्शनियों में भी ख्याति प्राप्त कर चुके हैं

हैंडी. एम्पोरीयम दिल्ली। } राजस्थान हैंडीक्राफ्ट्स एम्पोरीयम जयपुर, जोधपुर व उदयपुर

राज्य द्वारा प्रसारित